आदिवासियों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता का अध्ययन

(पाठा क्षेत्र के कोल आदिवासियों के विशेष सन्दर्भ में)

अर्थशास्त्र विषय में पी–एच0डी0 उपाधि
हेतु बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी
में प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध

2008

शोध निर्देशक

डा० किशन कुमार

रीडर

गवेषक

रामनाथ

प्रवक्ता, अर्थशास्त्र

राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय

हमीरपुर - उ0प्र0

डॉ० किशन कुमार
विभागाध्यक्ष

वाणिज्य विभाग
राजकीय महाविद्यालय
बेरी शिवराजपुर (कानपुर)

प्रमाण – पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री रामनाथ ने अर्थशास्त्र विषय में पी–एच.डी. की उपाधि **"आदिवासियों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता का अध्ययन" (पाठा क्षेत्र के कोल आदिवासियों के विशेष संदर्भ में)** हेतु मेरे निर्देशन में बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी के पत्रांक बु0वि0/एके0/शोध/2003/9417–19 दिनांक 18.10.03 के द्वारा पंजीकृत हुए थे ।

श्री रामनाथ ने मेरे निर्देशन में विश्वविद्यालय के नियमानुसार वांछित अवधि तक शोध केन्द्र में उपस्थित रहकर शोध के सभी चरणों को अत्यन्त सन्तोषजनक रूप से परिश्रमपूर्वक सम्पन्न किया है।

मै इस शोध प्रबन्ध को अर्थशास्त्र विषय में पी–एच.डी. की उपाधि हेतु प्रस्तुत करने की संस्तुति करता हूँ।

दिनांक :- 29.01.08

Kishan Kumar
(डॉ0 किशन कुमार)
शोध निर्देशक

घोषणा

मैं घोषणा करता हूँ कि बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी के अन्तर्गत अर्थशास्त्र विषय में डाक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध **"आदिवासियों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता का अध्ययन" (पाठा क्षेत्र के कोल आदिवासियों के विशेष संदर्भ में)** मेरा मौलिक कार्य है। मेरे अभिज्ञान में प्रस्तुत शोध का अल्पांश अथवा पूर्णांश किसी भी विश्वविद्यालय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी अथवा अन्य किसी भी उपाधि हेतु प्रस्तुत नहीं किया गया है।

दिनांक :- 29.01.08

Rn.
(रामनाथ)
गवेषक

आभार

“कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती” यदि गुरू का वरदहस्त साथ हो तो इस उक्ति की सार्थकता और भी बढ़ जाती है। शोध उपाधि को प्राप्त करने के उद्देश्य से इसी उक्ति के सहारे शोध विधा के दुर्गम पथ पर बढ़ने की कोशिश की, किन्तु शोध विधा के दुर्गम पथ को पार कर पाना मुझ जैसे अल्पज्ञ शोध गवेषक के सामर्थ्य से परे था। ऐसे क्षणों में शोध विधा में महारत प्राप्त मेरे श्रृद्धेय डॉ० किशन कुमार , विभागाध्यक्ष वाणिज्य, राजकीय महाविद्यालय बैरी शिवराजपुर (कानपुर) के कुशल निर्देशन एवं आशीष के बल पर मैं इस शोध प्रज्ञा को पूरा कर सका। डॉ० किशन कुमार जी मेरे शोध निर्देशक ही नहीं बल्कि मेरे विद्या-भवन के आराध्य है जिनका स्नेहिल सहयोग सदैव मेरे साथ रहा।

शोध निर्देशक के रूप में उनके अमूल्य निर्देशन, सुझाव एवं लक्ष्य पाने की जिन विधाओं से उन्होंने मुझे परिचित कराया वह स्मरणीय ही नहीं बल्कि जीवन में धारण करने की अमूल्य धरोहर है, मैं उनकी इस अनुकम्पा का सदैव ऋणी रहूँगा। मैं अपनी अशेष श्रृद्धा उनके सम्मान में अर्पित करता हूँ।

मै डॉ० रमेश चन्द्र, संयुक्त शिक्षा निदेशक (उच्च शिक्षा) उ.प्र. इलाहाबाद के प्रति नतशीष हूँ जिनकी प्रेरणा और स्नेहिल सानिध्य इस शोध प्रज्ञा पथ पर मेरे साथ रहा। मै प्रो० बी.पी.जोशी प्राचार्य, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय हमीरपुर के प्रति आभार ज्ञापित करता हूँ जिन्होंने हर क्षण मुझे सहयोग प्रदान किया।

मैं डॉ० स्वामी प्रसाद, विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हमीरपुर, उ०प्र० के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिनके असीम सहयोग एवं उदारतापूर्ण व्यवहार से यह शोध यज्ञ पूरा हो सका।

मैं डॉ० डी.एन. सिंह , प्रवक्ता राजनीति विज्ञान विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हमीरपुर एवं डॉ० एस.आर. रजक, प्राचार्य राजकीय महिला महाविद्यालय, झांसी के प्रति आभार ज्ञापित करता हूँ जिनके प्रेरणाप्रद सहयोग ने मेरी कलम की कोर को धार प्रदान की।

मै डॉ० ए.के.सैनी , विभागाध्यक्ष रसायन विज्ञान, राजकीय महिला महाविद्यालय अलीगंज लखनऊ के प्रति श्रृद्धा अर्पित करता हूँ जिनके सतत् सहयोग ने सदैव मुझे शोध पथ पर आगे बढ़ने की प्रेरणा प्रदान की।

मै अपने पूज्य पिता श्री बाला प्रसाद गुप्ता एवं जननी श्रीमती लक्ष्मी देवी के प्रति चिर-ऋणी रहूंगा जिनका इस शोध लक्ष्य को प्राप्त करने में सदैव अप्रत्यक्ष आशीष प्राप्त होता रहा है।

मैं अग्रज श्री रामप्रकाश गुप्ता एवं भावज श्रीमती पुष्पा गुप्ता के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिनका सहयोग सदैव पग-पग पर प्राप्त होता रहा है।

मैं अपनी भार्या श्रीमती मीरा गुप्ता के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होने मुझे पारिवारिक दायित्व से मुक्त रखकर मुझे इस लक्ष्य को पाने में नित नवीन उत्साह से सहयोग प्रदान किया। मैं अपनी पुत्री शिवांगी एवं राशि एवं पुत्र अभिनव के प्रति भी आभार ज्ञापित करता हूँ जिन्होंने वात्सल्य के क्षणों से दूर रहकर भी इस कार्य को पूरा करने में अविस्मरणीय सहयोग किया।

मै राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय हमीरपुर के पुस्तकालयाध्यक्ष के प्रति विनयावत हूँ जिनसे पुस्तकीय सहयोग मुझे समय-समय पर मिलता रहा।

मैं पाठा क्षेत्र के आदिवासी कोल परिवारों की महिलाओं एवं पुरूषों तथा युवा सदस्यों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिनके सहयोग के बिना तथ्यों का संग्रहण असंभव था।

शोध टंकण के लिए श्री जनक, आर.बी.कम्प्यूटर्स, जजी रोड हमीरपुर एवं आवरण सज्जा के लिए अहमद बाइंडर्स, कानपुर बधाई के पात्र हैं जिनके अपूर्व

सहयोग से मेरा यह अभीष्ट पूर्ण हो सका। इन सभी के अतिरिक्त मै उन सभी जाने-अनजाने सुधीजनों की ह्रदय से आभारी हूँ जिन्होंने शोध प्रज्ञा की साधना को पूर्ण करने में मेरा सहयोग किया।

दिनांक :- 29.01.08

(रामनाथ)
गवेषक

अनुक्रम

1. अभिस्वीकृति

2. घोषणा

3. आभार

4. अनुक्रमणिका

अध्याय	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
अध्याय-1	**प्रस्तावना**	1-26
	1.1 आर्थिक परिवर्तन जनित परिवेश	
	1.2 विकास का इतिहास	
	1.3 सामाजिक विकास के कारण	
	1.4 विकास के अवरोधक कारक	
	1.5 आदिवासी समाज का आर्थिक विकास	
अध्याय-2	**पद्धति शास्त्र**	27-50
	2.1 अध्ययन का प्रारूप	
	2.2 अध्ययन का संदर्भ	
	2.3 अध्ययन का महत्व	
	2.4 अध्ययन का उद्देश्य	
	2.5 उपकल्पनाएँ	
	2.6 अध्ययन प्रविधि	
	2.7 अध्ययन क्षेत्र	
	2.8 पाठा क्षेत्र और उसके मूल निवासी	
	2.9 अध्ययन क्षेत्र – पाठा	
	2.10 पाठा की भौगोलिक संरचना और उत्पादनोमुख संसाधन	
	2.11 यातायात के साधन	
	2.12 पाठा के आदिवासी : कोल	
अध्याय-3	**आदिवासी कोलों का सामाजिक पार्श्व**	51-99
	3.1 कोल	
	3.2 कोल शब्द की व्युत्पत्ति	

3.3 कोलों का उद्भव : पौराणिक गाथाएँ

3.4 कोलों की शारीरिक संरचना

3.5 कोलों का जातीय संगठन

3.6 कोलों की आवासीय व्यवस्था

3.7 कोलों में शिक्षा

3.8 कोलों का रहन-सहन एवं पहनावा

3.9 कोलों के आभूषण

3.10 कोलों का आहार एवं पोषण

3.11 मद्यपान एवं मादक पदार्थ

3.12 मनोरंजन

3.13 कोलों का सम्पर्क सूत्र

3.14 कोलों का सामाजिक संगठन

3.15 कोलों का सांस्कृतिक संगठन

3.16 पंचायत संगठन

3.17 आर्थिक एवं राजनीतिक परिवेश

अध्याय-4 **आदिवासी कोल महिलाओं की व्यावसायिक एवं आर्थिक संलग्नता** 100-122

4.1 आदिम अर्थव्यवस्था

4.2 कृषि अर्थव्यवस्था

4.3 औद्योगिक क्रान्ति

4.4 औद्योगिक अर्थव्यवस्था

4.5 कोल महिलाओं की आर्थिक संरचना

अध्याय-5 **आदिवासी कोल महिलाओं की व्यावसायिक समस्याएं** 123-164

5.1 ऋणग्रस्तता

5.2 भूमि हस्तान्तरण

5.3 निर्धनता की समस्या

5.4 बेरोजगारी एक समस्या

5.5 स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या

5.6 मदिरापान की प्रवृत्ति

5.7 अशिक्षा एक अहम समस्या

	5.8 कोल महिलाओं की व्यावसायिक समस्याएं	
अध्याय–6	**आदिवासी कोल महिलाएं एवं रोजगारोन्मुख योजनाएं**	165–189
	6.1 संवैधानिक सुरक्षाएं	
	6.2 जनजातीय विकास की योजनाएँ	
	6.3 जनजातीय उप योजना	
	6.4 जनजातीय उप योजना के क्षेत्र	
	6.5 केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाएँ	
	6.6 कोल महिलाएँ एवं योजनाएँ	
अध्याय–7	निष्कर्ष	190–200
	7.1 परिणाम	
	7.2 सुझाव	
परिशिष्ट	• **सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**	i-x
	• **फोटोग्राफी**	
	• **साक्षात्कार अनुसूची**	I-VIII

*****

अध्याय-1

1. प्रस्तावना

1.1 आर्थिक परिवर्तन जनित परिवेश

1.2 विकास का इतिहास

1.3 सामाजिक विकास के कारण

1.4 विकास के अवरोधक कारक

1.5 आदिवासी समाज का आर्थिक विकास

1. प्रस्तावना

आदिवासी प्रकृति पुत्र हैं। वन्य तथा पर्वतीय अंचल उनके पारम्परिक आवास है, यहाँ वे उन्मुक्त विचरण करते रहे हैं। उनकी न केवल सामाजिक व्यवस्था बल्कि पारम्परिक प्रशासनिक व्यवस्था भी अतीत में वाह्मय प्रभाव तथा हस्तक्षेप से युक्त थी। वैदिक और कालान्तर का साहित्य ऐसे प्रसंगों पर प्रकाश डालता है।

मानव, समाज का एक अपरिहार्य अंग है। समाज के सदस्य के रूप में इसका इतिहास छोटे-छोटे कबीलों से प्रारम्भ होता है। इन लघु समाजों को प्रकृति के विभिन्न तत्वों एवं वन में विचरण करने वाले अन्य प्राणियों से मात्र अस्तित्व के लिए कठिन संघर्ष के एक अत्यन्त लम्बे दौर से गुरजना पड़ा ।[1] महाद्वीपों के दुर्गम क्षेत्रों में आज भी ऐसे अनेक मानव समूह हैं, जो हजारों वर्षो से विश्व की आधुनिक सभ्यता से दूर अपनी सामाजिक एवं सांस्कृतिक धरोहर की पहचान बनाए हुए हैं।

ये मानव समूह बीहड़ वनों, मरूस्थलों, ऊँचे पर्वतों और अनुर्वर पठारों के उन अन्चलों में निवास करते हैं, जो आधुनिक समाज के लोगों के अर्थ में अनुपयोगी है। इस मानव-समूहों का अपना अलिखित इतिहास रहा है, जिसका केवल अन्तिम पृष्ठ ही शेष बचा है, और उसमें यह लिखा है कि न जाने किस समय यह समूह छोटे-छोटे ऐसे कबीलों में बट गया, जिनमें एक दूसरे की पहचान और रिश्तो की डोरी टूट चुकी है या उलझ चुकी हैं[2]। हिन्दी में ऐसे मानव समूहों के लिए 'आदिवासी', आदिमवासी' , 'कबीली आबादी' और 'जनजाति' जैसे सम्बोधन हैं। ये सभी शब्द अंग्रेजी भाषा के 'नेटिव', 'एबोरिजनल' और ट्राइब शब्दों के पर्याय हैं।

भारत में ब्रिटिश काल से पूर्व भारत के विपुल वन साम्राज्य के अधिष्ठाता 'वनवासी' या 'आदिवासी' हुआ करते थे, जिनकी स्वतन्त्र सत्ता थी जो ब्रिटिश साम्राज्य में

---

[1] शर्मा, डा. बृह्मदेव - आदिवासी विकास - एक सैद्धान्तिक विवेचन, 1994, भोपाल, म.प्र. ग्रन्थ अकादमी, पृ.सं. -1

[2] तिवारी, डा. शिवकुमार एवं शर्मा, डा. श्री कमल - म.प्र. की जनजातियाँ 1997, भोपाल, म.प्र. ग्रन्थ अकादमी, पृ.सं. 5

घटते हुए शनेःशनैः अधोगति को प्राप्त कर चुकी थी। इन सभी स्तरों का अध्ययन अनेक मानवशास्त्रियों, इतिहासकारों, समाजशास्त्रियो एवं अर्थशास्त्रियों द्वारा किया जा चुका है। विशेष कर ब्रिटिश काल में ईसाई मिशनरियों द्वारा धर्मान्तरण की प्रक्रिया को तीव्र गति देने के लिए आदिवासियों की जीवनचर्या को जानने का प्रयास प्रारम्भ किया गया । इस प्रकार पादरियों द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन को आदिवासियों के विषय में प्रारम्भिक अध्ययन माना जा सकता है। तत्पश्चात् ब्रिटिश साम्राज्य को सुचारू रूप से चलाने एवं प्रशासनिक एकता स्थापित करने की दृष्टि से, शासकीय आधार पर आदिवासियों के विषय में जानकारी प्राप्त करने की चेष्टा की गयी। अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य के प्रवेश काल से ही वनवासियों में रूचि लेना प्रारम्भ कर दिया था।

भारत के आदिवासियों का व्यवस्थित अध्ययन वर्ष 1891 से उस समय प्रारम्भ हुआ, जब एच.एच. रिजले की "द ट्राइब्स एण्ड कास्ट ऑफ बंगाल" नामक पुस्तक प्रकाशित हुई। तत्कालीन जनगणना आयुक्त सर रिजले ने अपनी पुस्तक "पीपुल्स ऑफ इण्डिया" (1901) में आदिवासियों के पहचान एवं रहन-सहन पर प्रकाश डाला। डब्ल्यू क्रुक्स तो आदिवासियों से इतना अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने कई खण्डों में इनका वर्णन किया है।[1]

इसी तारतम्य में वैरियर एल्विन[2] एवं रसल [3] ने भी अपनी विभिन्न पुस्तकों एवं लेखों में आदिवासियों की जीवन विधियों एवं समस्याओं की चर्चा की है।

जे.एच.हट्टन ने भी जाति की उत्पत्ति सम्बन्धी सिद्धान्त की व्याख्या के सन्दर्भ में आदिवासियों की चर्चा की है।[4] जी.एस. घुरिये, डी.एन. मजूमदार आदि मानव

---

[1] क्रुक्स डब्ल्यू - " द ट्राइब्स एण्ड कास्ट ऑफ नार्थ-वेस्टर्न प्राविन्सेज एण्ड अवध" 1896 ।

[2] वैरियर एलविन - "ए न्यू डील फार ट्राइबल इण्डिया (सम्पादित) 1963, भारत सरकार, मिनिस्ट्री ऑफ होम वेलफेयर।

[3] रसल - " द ट्राइबल एण्ड कास्ट ऑफ दि सेन्ट्रल प्राविन्सेज ऑफ इण्डिया, 1975 ।

[4] हट्टन, जे.एच. - "कास्ट इन इंडिया " , 1946 ।

शास्त्रियों ने भी इनकी सामाजिक विशेषताओं एवं समस्याओं पर प्रकाश डालने का कार्य किया है।[1]

औपनिवेशिक काल में आदिवासियों की स्वायत्ता पर अंकुश लगाने का प्रयास किया गया, जिससे उन्हें अपने अस्तित्व समाप्त होने का आभास होने लगा और वे संगठित होकर उसका विरोध करने लगे। वनों पर शासकीय आधिपत्य, भूमि पर साहूकारों एवं जमींदारों का कब्जा आदि कुछ ऐसे कारक बने, परिणामस्वरूप वनवासी आन्दोलोन्मुख हुए। इस संक्रमण काल में आदिवासियों की गतिविधियों एवं उनमें हुए सामाजिक, आर्थिक परिवर्तनों पर अनेक विद्वानों का ध्यान आकृष्ट हुआ, और वे इनके विश्लेषण के प्रति उन्मुख हुए। गोपाल भारद्वाज ने आदिवासियों के सामाजिक एवं राजनैतिक आन्दोलनों की चर्चा की है। वहीं डा. जसवन्त नाग ने कोलों में राजनीतिक चेतना का गहन अध्ययन किया है।

आदिवासी अपनी संस्कृति, परम्पराओं एवं प्राचीन प्रथाओं से जुड़े रहना चाहते हैं। जब उन्हें लगा कि बाहरी लोग उनकी संस्कृति, परम्पराओं एवं मान्यताओं को ध्वस्त करना चाहते हैं तो वे आन्दोलित हुए।[2]

यहाँ पर चिन्तन की आवश्यकता नहीं है कि बाहरी लोगों की संस्कृति तथा स्थानीय आदिवासियों की संस्कृति में भिन्नता थी। निश्चतया यह कहा जा सकता है कि बाहरी लोग सुदृढ़ एवं आधुनिक संस्कृति के पोषक थे।

आदिवासियों की समस्याओं एवं जीवन विधियों के साथ आन्दोलन एवं विकास सम्बन्धी विषयों पर अनेक शोधकर्ताओं ने अपने अध्ययन प्रस्तुत किये हैं। उदाहरणार्थ - सच्चिदानन्द, एच.सी. प्रधान, एस.सी.राय, के.एन. सहाय, मार्टिन ओरन्स, श्याम चौधरी, जे.पी.देसाई, बहादुर राम टम्टा, सुरेश कुमार सिन्हा, डा. ठाकोर लाल मीणा, डा. आर.के. सिन्हा, डा. बृहमदेव शर्मा आदि विद्वानों ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

---

[1] घुरिये, जी.एस. - ''जाति वर्ग एवं व्यवसाय ।

[2] टम्टा, बहादुर राम - ''अण्डमान निकोबार द्वीप समूह, 1994, नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इण्डिया ।

उन्नीसवीं शताब्दी में हुए आदिवासियों के सामाजिक, सांस्कृतिक एंव आर्थिकता के परिवर्तनों पर दृष्टिपात करें, तो यह कहा जा सकता है कि ब्रिटिश उपनिवेश से लेकर आज तक इन आदिवासियों को विविध प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ा है। आदिवासियों ने अपनी क्षमता के अनुसार इनका प्रतिवाद भी किया है। भारत में चुनौती एवं प्रत्युत्तर की अवधारणा, जिसे मूलतः प्रसिद्ध इतिहासकार, ए.टायनबी ने विकसित किया, का उपयोग कुछ विद्वानों ने सम्यक रूप से किया। इन विद्वानों में वी.के.राय का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।[1]

अंग्रेजी राज्य की स्थापना के पश्चात् से भारत की जनजातियों का शोषण अधिक हुआ है। अरूणाचल प्रदेश से लेकर भारत के अन्य क्षेत्रों में निवास करने वाले आदिवासियों के प्रयोग में आने वाली कृषित भूमि, वन क्षेत्र, चरागाहों आदि पर जमीदारों एवं अंग्रेजियत फरमान लोगों द्वारा कब्जा अख्तियार कर लिया गया । इन कब्जों आदि की कार्यवाही से आदिवासी अधिक प्रभावित हुए।[2] उपरोक्त कार्यवाही से आदिवासियों के सामने भुखमरी की स्थिति उत्पन्न हो गयी ।

आदिवासियों को कृषित भूमि एवं वनीय क्षेत्र से बेदखल करने के बाद इनकी आर्थिक विपन्नता में वृद्धि हुई। महाजनों एवं साहूकारों के ऋणों से ये दबते चले गये। ऋण का सही समय पर भुगतान न कर पाने की स्थिति में ब्याज बढ़ता गया। अंग्रेजी हुकूमत द्वारा जो इन वनवासियों के विकास के लिए नियम एवं कानून बनाएं गये थे, उन कानूनों ने साहूकारों एवं महाजनों में पोषण की प्रवृत्ति को अधिक जाग्रत किया । अभिजात्य वर्ग द्वारा नियमों एवं कानूनों की अपने ढंग से व्याख्या परिष्कृत की गई। इस व्याख्या ने अंग्रेजो को भी दिग्भ्रमित कर दिया। फलतः कमजोर कृषकों एवं आदिवासियों का शोषण प्रारम्भ हुआ।

बाद में कम्पनी गर्वनर ने इंग्लैण्ड कौंसिल में यह स्वीकार किया कि हमारे द्वारा बनाए गए कानून, भारतीयों द्वारा घृणा की दृष्टि से देखे जाते हैं। ये कानून किसी न

---

[1] राय, बी.के. - "चैलेन्जेज एवं रिस्पान्सेज इन ट्राइबल इण्डिया (1979), दिल्ली, मनोहर पब्लि. पृ.सं. 109-122
[2] वैरियर एलविन - " द फिलासफी ऑफ नेफा" पृ.सं. 62

किसी प्रकार से पूंजीपतियों एंव बड़े लोगों के संरक्षण का कार्य करने में अधिक सफल हुए हैं।[1]

इस प्रकार भारत में औपनिवेशिक राज्य की स्थापना से कमोवेश देश के सभी क्षेत्रों के आदिवासियों में असन्तोष पनपने लगा। उनकी भूमि पर ऋण के बदले कब्जा का सशक्त विरोध आदिवासी कृषकों ने किया यही नहीं, साथ ही साथ उन्होंने ऐसे कब्जा करने वाले व्यक्तियों का सामाजिक बहिष्कार किया। परिणामतः उन्हें भूमि से कब्जा हटाना पड़ा।[2]

प्रश्न यह उठता है कि आदिवासियों आर्थिक संरचना वर्तमान में कैसी है तथा उसकी कौन-कौन सी समस्यायें हैं तथा इन्हें किस प्रकार से दूर किया जा सकता, ऐसे में अर्थशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों एवं नृतत्वशास्त्रियों का उत्तरदायित्व और भी बढ़ जाता है। इनकी आर्थिक संरचना एवं समस्याओं के निराकरण के लिए अनेक समाजशास्त्रियों एंव नृतत्वशास्त्रियों ने अपनी अभिरूचि के अनुसार कारगर अध्ययनों को प्रस्तुत किया है, परन्तु इनका शोध कार्य लघु समुदायों के विकास की ओर रहा है।[3] फिर भी इनके द्वारा आर्थिक विकास हेतु किसी विशिष्ट सिद्धान्त की प्रस्तुति नहीं की गयी है अर्थात् साधारण विकास कार्यक्रमों की रूपरेखा ही उपयुक्त मानी गयी है।[4]

इस धारणा का एक कारण यह भी है कि उनकी समस्यायें लघु आकार की होने से सामान्यतः बड़े समूहों के लिए उपयुक्त नीति को ही समाधान योग्य मान लिया जाता है। परन्तु विकास की धारा या तो इन लघु समाजों से असम्बद्ध रही है अथवा उन पर कोई खास प्रभाव नहीं हुआ है।

ब्रिटिश शासकों ने जनजातियों के विकासोन्मुख हेतु एक सामान्य नीति का अनुसरण करते हुए विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों को प्रारम्भ किया। लेकिन जनजातीय संस्कृति

---

[1] राघवैया वी - ''ट्राइबल रिवोल्ट' (1971), नेल्लोर, आ.प्र. राष्ट्रीय आदिम जाति सेवक संघ, पृ.सं. 261-66

[2] पूर्वोक्त - पृ.सं. 268-70

[3] शर्मा, डा.ब्रहमदेव - पूर्वोक्त, पृ.सं. 115

[4] पूर्वोक्त - पृ.सं. 117

की सुरक्षा एवं संरक्षण हेतु कोई पहल नहीं की गयी।[1] आदिवासी क्षेत्रों में कानून व्यवस्था एवं शान्ति बनाए रखने का उत्तरदायित्व स्थानीय प्रशासन का होता था। स्वभावतः आदिवासी शान्ति प्रिय होने के कारण स्थानीय प्रशासन इनके विकास की ओर निश्चिन्त सा बना रहा ।

आदिवासी क्षेत्रों एवं समुदायों की विकास प्रक्रिया के प्रवर्तन से नवार्जित सम्पदा में स्थानीय आदिवासी समाज की साझेदारी के अभाव, कार्यक्रमों की शिथिलता, ऋणग्रस्तता, अशिक्षा एवं सांस्कृतिक लगाव के कारण सन्तुलित एवं सुदृढ़ विकास अभी भी संभव नहीं हो पा रहा है।[2]

1.1 आर्थिक परिवर्तन जनित परिवेश

आदिवासी, सामाजिकता एवं आर्थिकता की दृष्टि से प्रथम सोपान पर ही हैं, वहीं उन्नत समाज के लोग औद्योगिकता एवं नगरीयता के शिखर पर इस सभ्य समाज के परिप्रेक्ष्य में यदि आदिवासियों का मूल्यांकन किया जाएं तो ये आदिवासी इनकी अपेक्षा अधिक सरल एवं सौम्य स्वभाव के साथ ही साथ सीमित संसाधनों में अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं, इनकी आवश्यकताओं की समस्त पूर्ति प्रकृति प्रदत्त संसाधनों पर निर्भर है।[3] वन न केवल आदिवासियों के वांछित प्रिय निवास क्षेत्र रहे हैं बल्कि आजीविका के स्रोत भी रहे हैं। वनों से प्राप्त होने वाला कन्दमूल फल इनका प्रिय भोजन रहा है। वनों से इन आदिवासियों की मात्र जीविका निर्वहन होता था। इनके द्वारा वन्य वस्तुओं के उपभोग से ''परिस्थितिकी तन्त्र' को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँचती थी, बल्कि उसका संरक्षण होता था। आज भी वनों से इनका भावनात्मक सम्बन्ध है। वनों का कम होने के साथ ही साथ इन आदिवासियों का प्रकृति प्रेम कानूनी तौर पर छीन लिया गया है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में औद्योगीकरण की प्रक्रिया तेज हुई। नित्य नवीन वृहद् उद्योगों एवं तकनीकी उपकरणों की स्थापना के लिए बड़े भूखण्डों की

---

[1] हसन अमीर, - 'कोल्स ऑफ पाठा ' (1972) इलाहाबाद, किताब महल, पृ.सं. 176
[2] शर्मा, डा.ब्रहमदेव , - पूर्वोक्त , पृ.सं. 85
[3] तिवारी, डा. शिवकुमार एवं शर्मा डा. श्री कमल - म.प्र. की जनजातियाँ, (1997) भोपाल, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पृ. सं. 200-202

आवश्यकता होती है। परिणामतः वन क्षेत्रों में लगातार संकुचन आता जा रहा है। पृथ्वी के धरातली एवं भू-गर्भिक संसाधनों के उत्खनन एवं क्षेत्र के अन्य वासियों के मध्य वन सम्पदा का प्रयोग बढ़ा है। जिसके फलस्वरूप आदिवासियों को अपनी जमीन एवं वन क्षेत्र से हाथ धोना पड़ा है। यह समस्या कृषक समुदाय के साथ-साथ जनजातियों की बनी हैं।

वर्तमान समय में काफी परिवर्तन हुए हैं। हमारी आधुनिक अर्थव्यवस्था में वन राजकीय सम्पदा है। यही वन सम्पदा राजस्व का महत्वपूर्ण स्रोत भी है। फलतः राज्य से वनों पर न केवल आदिवासियों के असीमित अधिकारों को समाप्त कर दिया है, बल्कि वनीय संसाधनों का व्यावसायिक दोहन भी प्रारम्भ कर दिया है। वनों के दोहन के लिए निगमों की स्थापना की गयी है।[1] यह निगम वनों को समग्र उत्पादन व्यवस्था में एक घटक के रूप में मानता है और उसका उपयोग लाभ-हानि के व्यावहारिक दृष्टिकोण से करता है। वर्तमान समय में राज्य सरकार का पूर्ण अधिकार स्थापित हो चुका है। जमीदारों एवं साहूकारों का प्रभुत्व बढ़ा है। परिणामस्वरूप बहुत से कृषक एंव आदिवासी समूह भूमिहीन होते जा रहे हैं। ऐसे भूमिहीन आदिवासियों एवं कृषकों के मध्य उत्पन्न हुए वर्गीय संघर्षो पर भी अनेक समाजशास्त्री विद्वानों ने प्रकाश डाला है।

भारत की जनसंख्या का अधिकांश भाग जिनके पास कृषि योग्य भूमि नहीं है, वे ऐसे कृषकों, जिनके पास कृषित भूमि है, के कृषित कार्यो पर आधारित हैं। इनकी अधिकतर समस्याएं कृषि सामाजिक संरचना की देन हैं। बलजीत सिंह एवं डैनियल थार्नर जैसे अर्थशास्त्रियों ने इस पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला है। थार्नर को तो कृषक समाज के अध्ययन का अग्रदूत कहा जाता है।

वनों पर अपना आधिपत्य मानने वाले आदिवासियों को अचानक उनसे अलग कर दिया गया है। कम से कम सैद्धान्तिक रूप से । इससे भी आगे वन-प्रबन्धकों और आदिवासियों के बीच तनाव की स्थिति बनी हुई है। भाग्य चक्र कुछ इस प्रकार बदल गया है

[1] तिवारी, डा. शिवकुमार, तिवारी डा. श्रीकमल - पूर्वोक्त पृ.सं. 203

जिस वन सम्पदा के वे मालिक होते थे, उसी के दोहन के वे मजदूर बन गये हैं, और आधुनिक अर्थ तन्त्र से अनभिज्ञ होने के कारण उन्हें लाभ नहीं मिल पा रहा है।[1]

यद्यपि आदिवासी वनों से आज भी प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हुए हैं, लेकिन पुराने आत्मीय सम्बन्ध नहीं रहे। परम्परागत अधिकारों और रियायतों को वे लोग अपनी आय के आंशिक सम्पूरक के रूप में उपयोग करते हैं। प्रायः सभी समाज वैज्ञानिक एवं शोधार्थी इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि भारतीय निर्धनता की समस्या 'समाज' के समान ही जटिल है। विशेषकर ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों की निर्धनता के अन्त के लिए सामाजिक एवं आर्थिक आधारों की पुनर्संरचना होनी चाहिए। इसके लिए भूमि सुधार की आवश्यकता है। लेकिन भूमि सुधार कार्यक्रम जो चलाए गये उससे भू-स्वामियों एवं भूमिहीनों के मध्य तनाव व संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हुई, ग्रामीणों में व्याप्त निर्धनता तथा असन्तोष ग्रामीण सामाजिक संरचना एवं परिवर्तन की उपज है।

अंग्रेजो के आगमन के पश्चात् वनों पर उनके द्वारा कब्जा किया जाने लगा, तत्पश्चात् वहाँ की भूमि का वितरण भू-पतियों एवं साहूकारों में किये जाने से आदिवासी, जो पूर्व में वनों के स्वामी होते थे, भूमिहीन हो गये। इस प्रकार भूमिहीनों में निम्न जातियों एवं आदिवासियों की संख्या में वृद्धि के साथ ही साथ असन्तोष में भी वृद्धि हुई है। कुछ समाजशास्त्रियों ने असन्तोष की चर्चा की है, परन्तु भूमिहीनों में तुलनात्मक अभाव बोध से उत्पन्न संगठनो का अध्ययन सम्यक ढंग से बहुत कम किया गया है। इस क्षेत्र में जो कार्य हुए हैं, उसमें मुख्यतया कृषित मजदूरों, भूमिहीनों, दलित एवं कमजोर वर्ग के लोगों को विशेष रूप से सम्मिलित किया गया है।

एल. नटराजन, सुखवीर चौधरी, नरहरि कविराज, राकेश गुप्त के अध्ययनों में भूमिहीनों पर कार्य किया गया है। ग्रामीण समूहों में असन्तोष से सम्बन्धित समाजशास्त्रीय अध्ययनों में आन्द्रेबेतेई का सराहनीय योगदान है। निर्धनों भूमिहीनों के अभाव का राजनीति

---

[1] पूर्वोक्त - पृ.सं. 204-205

पर क्या प्रभाव पड़ा ? इस पर भी शोध कार्य हुए हैं। इन अभावों में किस प्रकार संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हुई, उसके क्या परिणाम रहे, इस पर विद्वानों ने अपना ध्यान आकृष्ट किया है। इस क्षेत्र में मायरन वीनर, टी.के.ओमन, डी.एन. धनाग्रे को सम्मिलित किया जा सकता है। आदिवासियों द्वारा संघर्षात्मक भूमिका का विस्तृत विवरण टी.के. ओमन, डी.ए. धनाग्रे, एफ.एफ. डेल एवं पी.ए. मुखर्जी ने प्रस्तुत किया है।

1.2 विकास का इतिहास

21वीं सदी में पर्दापण के लिए आर्थिक एवं सामाजिक विकास आवश्यक है, "विकास का समाजशास्त्र" समाजशास्त्र की एक नवीनतम शाखा है जो आर्थिक एवं सामाजिक विकास के अध्ययन से सम्बन्धित है। वास्तव में 'विकास' का अध्ययन अपन अन्तर्निहित विशेषता के कारण आज सभी सामाजिक विषयों में अध्ययन का केन्द्र बना हुआ है। विचारकों का मत है कि विकास का अध्ययन अब किसी एक विज्ञान अथवा विषय का अध्ययन वस्तु न होकर सभी विषयों की अध्ययन वस्तु हैं - अन्तर केवल उनके अध्ययन के दृष्टिकोण का होगा। ई. हेगन का विचार है कि विकास का अध्ययन सभी सामाजिक विषयों में अध्ययन का केन्द्र बिन्दु होना चाहिए। विभिन्न विषयों में अन्तर दृष्टिकोण के आधार पर ही होगा । यह आवश्यक नहीं है कि एक ही साधन विविध प्रकार के समाजों में समान विकास कर सकें।

यह पता लगाना कि प्रचुर साधनों के होते हुए भी आदिवासी कोल आर्थिक संचरना में पिछड़े क्यों है ? उनका विकास क्यों अवरूद्ध है ? 'विकास' और 'परिवर्तन' दोनों अलग-अलग अवधारणाएं हैं। विकास का सम्बन्ध ऐसे संशोधनों से है जो प्रगति की ओर उन्मुख हो जबकि परिवर्तन, प्रगति और अवनति दोनों ही स्थितियों को व्यक्त करता है।

उद्विकास तथा प्रगति की भांति विकास भी एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध आर्थिक पहलू से होता है। आर्थिक विकास के माध्यम से उन सामाजिक तत्वों को प्रकाश में लाया जाता है जिसकी समाज की आवश्यकता है। विकास ऐसे परिवर्तनों से

सम्बन्धित होता है जो प्रगति की ओर उन्मुख है। विकास का समाजशास्त्र अपने को केवल आर्थिक विकास से सम्बन्धित न मानकर सांस्कृतिक तत्वों तथा सामाजिक संस्थाओं से भी सम्बन्धित मानता है।

'विकास' शब्द तथा विकास प्रक्रिया का उल्लेख विभिन्न समाजशास्त्रियों तथा समाज विचारकों ने किया है। अरनेस्ट नेडेल ने अपने लेख "निर्धारणवाद और उन्नति" में इस शब्द का प्रयोग किया है जिसे बी.डी. हैरिस ने अपने द्वारा सम्पादित पुस्तक "द कान्सेप्ट ऑफ डेवलपमेण्ट" में प्रकाशित किया है। नेडेल ने विकास से तात्पर्य केवल उस परिवर्तन से नहीं लगाया है जिससे कोई अप्रकट अथवा छिपी चीज प्रकाश में आ जाये, अपितु इसका सम्बन्ध उन्होंने सम्भावित परिवर्तनों से भी लगाया है। एक चीज जिसे उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है वह यह कि इन परिवर्तनों की व्याख्या वैज्ञानिक दृष्टिकोण से होनी चाहिए। उनका यह विचार था कि विकास की प्रक्रिया का अन्तिम रूप ही किसी समाज को प्रगति की अवस्था तक पहुँचाता है। नेडेल के अनुसार विकास का समाजशास्त्र नैतिक तटस्थता को कायम रखते हुए आर्थिक तथा सामाजिक विकास का अध्ययन करेगा।

टालकट पार्सन्स ने "आर्थिक उन्नति के संस्थापक ढाँचे पर कुछ विचार" में विकास से तात्पर्य उन परिवर्तनों से लगाया है जो औद्योगिकवाद के कारण राजनैतिक तथा सामाजिक संस्थाओं पर परिलक्षित होती है। मार्क्स के समान पार्सन्स का भी यह विचार था कि आर्थिक कारक ही औद्योगिकवाद को प्रभावित करता है।

वोटोमोर ने लिखा है कि विकास से मेरा तात्पर्य किसी भी प्रकार की प्राप्ति से है।[1]

हरवर्ट स्पेन्सर ने अपनी कृति "सोसियोलॉजी" में सामाजिक विकास का उल्लेख किया है। आर.हाफ्स्टेडर ने "सोशल डार्विनिज्म इन अमरीकरन थाट" में सामाजिक विकास के सिद्धान्तों की अवधारणा प्रस्तुत की है।

---

1 वोटोमोर, सोसियोलॉजी

विकास की एक निश्चित अवस्था में, उत्पादन की भौतिक शक्तियाँ तथा उत्पादन के वर्तमान सम्बन्ध प्रभावित होते हैं। विकास की निश्चित अवस्था का सम्बन्ध आर्थिक पहलू में चरम विकास से है। जिसके कारण उत्पादन की पद्धति, उत्पादन की शक्तियाँ और तत्पश्चात् सामाजिक सम्बन्ध परिवर्तित होते हैं।[1]

गुरविच तथा मूर ने ''ट्वेटीयथसेंचुरी सोशियोलाजी'' में पी.ए. सोरोकिन के लेख ''सोशियो कल्चरल डाइनामिक्स एण्ड इवोल्यूशनिज्म'' में विकासवादी सिद्धान्तों का एक आलोचनात्मक सर्वेक्षण प्रस्तुत किया है।

जिन्सवर्ग ने ''दी कान्सेप्ट ऑफ इवोल्यूशन इन सोशयोलाजी में विकास की महत्वपूर्ण समस्याओं का उल्लेख किया है। 'हासलिट' ने सोसियोलॉजिकल आसपेक्ट ऑफ इकोनामिक ग्रोथ में तथा गुन्नार मिडरल ने ''एशियन ड्रामा'' में विकास से सम्बन्धित तत्वों का उल्लेख किया है।

1.2.1 विकास के प्रारूप

विकास का समाजशास्त्र अभी तक नवीन शाखा है अतः उसमें विशिष्ट अध्ययन का निश्चित प्रारूप अभी अधिक स्पष्ट नहीं है । फिर भी कुछ विचारक हैं जिन्होने विकास से सम्बन्धित कुछ प्रारूप दिये हैं जो समाजशास्त्रीय विकास की प्रक्रिया के लिए उपयुक्त होगें।

डब्लू डब्लू रोस्टो का प्रारूप

'रोस्टो' ने आर्थिक विकास के माध्यम से सामाजिक विकास तथा सामाजिक सम्बन्ध में परिवर्तन को व्यक्त किया है। आर्थिक वृद्धि स्तरों में होती है और वह फिर सामाजिक सम्बन्धों को प्रभावित करती है। एक स्तर से दूसरे स्तर पर विकास स्वाभाविक और आवश्यक होता है। इन्हीं स्तरों से होता हुआ एक समाज स्थिर अवस्था से होता हुआ

[1] कार्ल मार्क्स, ''ए कन्ट्रीव्यूशन टू दी क्रिटिक ऑफ पोलिटिकल इकोनामी

'गतिशील' अवस्था को या अन्य शब्दों में परम्परागत समाज आधुनिक अवस्था में रूपान्तरित होता है। रोस्टो ने विकास के पाँच स्तरों का उल्लेख किया है :-

1. परम्परागत अथवा स्थिर अर्थव्यवस्था का स्तर
2. प्रारम्भ से पूर्व की अवस्था - संस्थागत परिवर्तन किन्तु विकास की दर उल्लेखनीय नहीं।
3. प्रौद्योगिकीय परिपक्वता की दशा - इस स्तर पर प्रौद्योगिकीय विकास आर्थिक वृद्धि के अनुरूप हो जाता है।
4. उच्च उपभोग की अवस्था - इसमें विकास की गति उतनी तीव्र नहीं होती, फिर भी उसमें निरन्तरता पायी जाती है।

'रोस्टो; का मत था कि आर्थिक विकास के प्रारम्भ के पूर्व के स्तर पर ही विभिन्न परिवर्तन शुरू हो जाते हैं। जैसे नये-नये संस्थाओं का उद्भव, शिक्षा की नवीन व्यवस्था, वाणिज्य के नए-नए प्रारूप, यातायात तथा संचार के नए-नए तरीके, नौकरशाही व्यवस्था। इन परिवर्तनों के कारण लोगों की मनोवृत्तियों में परिवर्तन स्वाभाविक हो जाता है। यही वह आधार है जिसके कारण विज्ञान के क्षेत्र में मूलभूत विकास तथा इन वैज्ञानिक आविष्कारों का आर्थिक लक्ष्यों तथा नये-नये उपभोग के तरीकों के लिए प्रयोग संभव हो पाता है।

डब्लू ए लेविस का प्रारूप

लेविस से उन कारकों की व्याख्या की है जो विकासशील देशों में सामाजिक तथा आर्थिक विकास को प्रभावित करते हैं। आर्थिक विकास की इच्छा, श्रम विभाजन, श्रमिक संगठन, सम्पत्ति, सामाजिक गतिशीलता, धार्मिक संगठन, खेतिहर पारिवारिक जीवन ढंग सांस्कृतिक विकास विशेषकर ज्ञान का विकास, सरकार का स्वरूप तथा आर्थिक आदत आदि प्रमुख कारक हैं, जो विकास को प्रभावित करते हैं। विकास के ये सभी कारक आपस में एक

दूसरे से सम्बन्धित हैं। लेविस के विकास सम्बन्धी प्रारूप को निम्न रूप से व्यक्त किया जा सकता है :-

1. मनोवृत्ति - आर्थिक विकास की इच्छा
2. व्यवस्था - आर्थिक-सामाजिक-ज्ञान-परिवार
3. वृद्धि के कारण - आर्थिक सम्बन्ध-सामाजिक संबंध

लेविस ने यह प्रमाणित किया है कि आर्थिक विकास की इच्छा में परिवर्तन के कारण ही सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक व्यवस्थाएं परिवर्तित होती हैं, और इस प्रकार वे विकास का मार्ग प्रशस्त करती हैं।

ई. हेगन का प्रारूप

'आन द थियरी ऑफ सोशल चेन्ज'' में सामाजिक तथा आर्थिक विकास का प्रारूप प्रस्तुत करते हुए हेगन ने वर्णित किया है कि विकास आकस्मिक अविष्कारों विशेषकर औद्योगिक जोखिमों के कारण होता है। इसमें सरकार तथा सरकारी एजेन्सीज का हाथ नहीं होता। विकास के लिए साहसी या उद्यमी लोगों का योगदान सर्वाधिक है। व्यक्तित्व का गुण ही सामाजिक विकास का केन्द्र बिन्दु है। हेगन का विचार है कि प्रौद्योगिकीय प्रगति जो बढ़ती हुई आय का कारण है दो चरणों से होकर गुजरती है - प्रथम नवीन ज्ञान की खोज, जिससे कि उत्पादन बढ़ता है और दूसरा उस ज्ञान का उत्पादन प्रक्रिया में प्रयोग । हेगन का मत है कि विधि के क्षेत्र में प्रगति से तात्पर्य केवल वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकीय उत्थान से न होकर संगठन के उस रूप से भी है जिससे कि कोई समाज उत्पादन के लिए कुशल बन पाता है। हेगन के अनुसार आर्थिक वृद्धि जो सामाजिक विकास का एक प्रमुख आधार है - विज्ञान और प्रौद्योगिकीय ज्ञान के तीव्रता के साथ बढ़ते हुए अविष्कारों का परिणाम है।

पीटर हिन्ज का प्रारूप

' हिन्ज ' द्वारा प्रस्तुत विकास के प्रारूप की अवधारणा गतिशील है। 'हिन्ज' के अपना विकास प्रारूप उन समाजों के लिए प्रस्तुत किया जो संक्रमण की अवस्था से गुजर

रहे हैं। उन्होंने अपने इस प्रारूप में सामाजिक विकास के अध्ययन के लिए पूर्व औद्योगिक समाजों का औद्योगिक समाज के रूप में रूपान्तरण की व्याख्या की है। 'हिन्ज' का विचार था कि वे कारक जो किसी समाज को पूर्व औद्योगिक दशा से औद्योगिक दशा में बदलते हैं, सभी प्रकार की संस्कृतियों में समान रूप से लागू होते हैं। 'हिन्ज' के अनुसार सामाजिक विकास में 'तीन' कारक महत्वपूर्ण होते हैं :-

1. उपभोग के क्षेत्र में आशाएं
2. आर्थिक तथ्यों से सम्बन्धित मनोवृत्ति
3. समाज का आर्थिक प्रौद्योगिकीय स्तर

पूर्व औद्योगिक अथवा परम्परागत समाज में ये तीनों कारक या तो स्थिर रहते हैं या निष्क्रिय होते हैं। उनमें एक समन्वय होता है। जब कोई समाज औद्योगिक स्तर को प्राप्त करता है, उस समय उपभोग सम्बन्धित आशाएं बढ़ती है लेकिन उत्पादन अथवा आर्थिक कृत्य सम्बन्धी मनोवृत्ति में उस अनुरूप में परिवर्तन नहीं हो पाता है। इन दोनों कारकों में दूरी को कम करने तथा सामन्जस्य स्थापित करने के लिए प्रौद्योगिकीय विकास किया जाता है। यही कारण है कि समाज में सामाजिक विकास सम्बन्धित गतिविधियां प्रारम्भ होती हैं। उपभोग के क्षेत्र में परिवर्तन, जिससे कि वस्तुओं तथा सेवाओं की मांग बढ़ती है, के लिए तीन समूह उत्तरदायी हैं - पहला उन लोगों का समूह जिनकी समाज में कोई स्थिति नहीं है, वे विभिन्न पहलुओं तथा सेवाओं को अपने लिए चुन लेते हैं, कि उनका यह विश्वास है कि ऐसा करने से उनकी सामाजिक स्थिति तथा व्यक्तिगत प्रस्थिति में परिवर्तन होगा। जिस प्रस्थिति को वे प्राप्त करना चाहते हैं, उसके अनुरूप अपनी भूमिका को परिवर्तित करने की वे नहीं सोचते । दूसरा उन लोगों का समूह जिनकी परम्परागत प्रस्थिति ऊँची है। इस स्थिति को बनाए रखने के लिए वे उपभोग के नए साधनों को अपनाते हैं ऐसा वे परम्परागत विशेषता को कायम रखते हुए करते हैं। इन लोगों के व्यवहार में परिवर्तन का मूल कारण यह है कि वे यह सिद्ध करना चाहते हैं कि वे 'हेय' नहीं है। तीसरा उन लोगों

का समूह जो अपने को 'नये मध्यम वर्ग' से सम्बोधित करता है। यह वर्ग भी अपने स्वतंत्र अस्तित्व को बनाएं रखने के लिए वस्तुओं तथा सेवाओं के आधुनिकतम उपलब्धियों को स्वीकार करता है। जब इन तीनों वर्गो द्वारा विभिन्न वस्तुओं की माँग निरन्तर बनी रहती है तो उत्पादन की नवीन शक्तियाँ अवतरित होती हैं जिसे प्रौद्योगिकीय विकास से भी व्यक्त किया जाता है । पूरा समाज जागरूक हो जाता है कि वह अविकसित है अतः विकास का सामूहिक प्रयत्न होता है। जिससे सामाजिक विकास की प्रक्रिया कार्यशील होती है। 'हिन्ज' के शब्दों में ''औद्योगिक अवस्था नये प्रकार के सामाजिक सम्बन्धों को जन्म देती है जिसमें वर्ग चेतना पायी जाती है, यह चेतना सामान्य हितों पर आधारित होती है।''

विकास का एक सामान्य प्रारूप

सामान्य प्रारूप में वे कारक समविष्ट हैं जो विकास में सहायक होते हैं तथा उन कारकों को भी चिंहित किया गया है जो ''विकास में बाधक'' या अवरोधक हैं।

विकास के सामान्य प्रारूप के निर्धारण में निम्नांकित अवधारणाओं का ज्ञानार्जन आवश्यक है :-

1. **निश्चित लक्ष्य** - विकास का प्रारूप एक स्पष्ट लक्ष्य को सामने रखकर निर्मित होता है।
2. **कारक** - लक्ष्य निर्धारण के बाद उन कारकों का ज्ञान आवश्यक होता है जो विकास में या तो सहायक होते हैं या अवरोधक । वास्तव में कुछ कारक विकास में सहायक होते हैं तो कुछ विकास में अवरोध उत्पन्न करते हैं। इसके अतिरिक्त ये कारक आपस में एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। ऐसा देखने को मिलता है कि एक कारक जो किसी एक समाज में विकास के लिए जिम्मेदार माना जाता है वही कारक दूसरे समाज में विकास के लिए बाधक माना जाता है। विकास के लिए जो कारक साधारणतया उत्तदायी माने जाते हैं वे निम्न होते हैं :-

   (1) विकास के प्रतिनिधि

(2) अनुकूल परिस्थिति

(3) सामाजिक संस्थाएं

(4) सामाजिक ढांचा जिसमें विकास की प्रक्रिया को कार्यशील होना है।

(5) सामाजिक संस्थाओं के कारण निर्मित मनोवृत्ति सामाजिक विकास के

सामाजिक एवं आर्थिक विकास के वाह्य तथा आन्तरिक कारक सामाजिक मनोवैज्ञानिक दशा, भौतिक पर्यावरण नवीन तथा पुरानी संस्थाएं, मनोवृत्ति तथा सामाजिक ढांचा का प्रभाव पड़ता है ।

1.3 सामाजिक विकास के कारण

एल.टी. हाबहाउस, आगवर्न तथा मिडरल विद्वानों ने सामाजिक विकास के चार कारकों का उल्लेख किया है :-

आवष्किार

आविष्कारों के कारण सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन तीब्रता से होते हैं। आविष्कारों का प्रत्यक्षतः सम्बन्ध उस समाज के व्यक्तियों की योग्यता, संसाधन तथा अन्य सांस्कृतिक कारकों से है।

संचय

पुरातन ज्ञान के संचय के कारण ही नवीन आविष्कार संभव हो पाते हैं जिनके कारण सामाजिक विकास में सहायता मिलती है।

प्रसार

विभिन्न आविष्कारों के प्रसार के कारण सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन तथा विकास स्वाभाविक है आविष्कारों का प्रसार जितनी तेजी से होगा विकास की प्रक्रिया भी उतनी ही तीव्र होगी ।

सामन्जस्य

यदि समाज के विभिन्न अंगों में सामन्जस्य है तो व्यवस्था में विकास की प्रक्रिया तीव्र होगी। विकास के लिए यह आवश्यक है कि विभिन्न सामाजिक अंगों में सामन्जस्य हो।

इन कारकों के अतिरिक्त किसी भी समाज में शिक्षा के स्तर के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उस समाज में विकास की स्थिति क्या है। शिक्षा में प्रसार तथा उस प्रकार की गति में तीव्रता सामाजिक विकास का लक्षण माना जाता है। शिक्षा का प्रत्यक्ष सम्बन्ध व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास से होता है। 'वारकर' के अध्ययन के अनुसार शिक्षा से तात्पर्य उस सामाजिक प्रक्रिया से है जिसके द्वारा समाज की ईकाइयां सामाजिक चेतना के साथ-साथ मूल प्रवृत्तियां बन जाती हैं तथा सभी सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना सीख लेती हैं। शिक्षा में विकास, भौतिक समृद्धता में वृद्धि के लिए उत्तरदायी होती है।

1.4 विकास के अवरोधक कारक

विकास एक गत्वर प्रक्रिया है, जिससे सरल समाज विकसित समाज में परिवर्तित होता है। विकास की सामाजिक प्रासंगिकता आर्थिक विकास एवं सामाजिक विकास में सन्निहित है। विकासोन्मुख प्रक्रिया परिवर्तन को जन्म देती है। यह आर्थिक उत्पादन के उपकरणों के बदलने से परिवर्तित मानवीय सम्बन्धों द्वारा क्रियान्वित होती है। विकास - प्रक्रिया जीवन्त सामाजिक अवधारणा है। यह वस्तुतः परम्परा है जो एक इतिहास को जन्म देती है। परम्परा मरती नहीं है। इतिहास भले ही रीत जाय पर परम्परा अपनी समूची वर्चस्विता से एक नयी विकासशील प्रक्रिया द्वारा समाज की गति को परिवर्तित करती है। इस परिवर्तन से नये सामाजिक सम्बन्धों, अभिनव सांस्कृतिक मूल्यों, परम्पराओं, विश्वासों, प्रथाओं, मान्यताओं का अभ्युदय होता है, जिससे पुराना सामाजिक ढाँचा पूर्वापेक्षया एक नयी संरचना से प्रस्तुत होता है।

आर्थिक विकास क्या है ? आर्थिक विकास का अर्थ उन सम्बन्धों एवं प्रारूपों से है, जिससे समाज इस स्थिति में पहुँचता है कि वह अपने सदस्यों की आवश्यकताओं को पूरा कर सके। विकास की इस प्रक्रिया में आर्थिक, प्रौद्योगिकीय, सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं सामाजिक कारकों सहित अन्य कारक अवरोधक का कार्य करते हैं। यही वे कारक हैं जो सामाजिक विकास की गति को मंद करते हैं -

1.4.1 आर्थिक दशा

यदि किसी राष्ट्र या समाज में निर्धनता है तो विकास नहीं के बराबर होगा क्योंकि पूंजी के अभाव में लोग नवीन आविष्कारों को प्रोत्साहित नहीं कर पायेंगे। आर्थिक उत्पादन की नयी शक्तियों के प्रयोग के लिए धन की आवश्यकता होती है। अविकसित समाज, विकसित समाज से सम्पर्क नहीं कर पाते हैं क्योकि उनके पास आर्थिक संसाधनों की कमी होती है। परिणामतः आर्थिक दृष्टिकोण से पिछड़ा समाज, विकास के मार्ग पर आगे नहीं बढ़ पाता है। इस प्रकार हम पाते हैं कि आर्थिक दशा का हेय होना भी सामाजिक विकास में बाधक है।

1.4.2 प्रौद्योगिकी कारक

समाज में कुछ ऐसे व्यक्ति होते हैं जो किन्हीं निहित स्वार्थो के कारण प्रौद्योगिकी द्वारा उपलब्ध नवीन वस्तुओं को अपनाने में हिचकते हैं और विभिन्न प्रकार की अफवाहों का प्रचार करके अन्य व्यक्तियों को भी उन वस्तुओं के प्रयोग से रोकते हैं। सर्वप्रथम जब मोटर बसों का प्रयोग व्यक्तियों के आने-जाने के लिए किया गया, तो उनके पहले से चलाए जा रहे इक्के-तांगे के चालकों तथा प्रबन्धकों ने उसका विरोध किया। वे लोग यात्रियों को भड़काते थे कि लोहे की गाड़ी में यात्रा करना ठीक नहीं है, पता नहीं कब बन्द हो जाय, सड़क छोड कर खड्ड में गिर जाय। कुछ लोग बहकावे में आकर मोटर बस का प्रयोग न करके इक्के तांगे का ही प्रयोग करते थे। जब अधिक प्रभावकारी और कुशल यंत्रों,

पद्धतियों तथा अन्य वस्तुओं का प्रयोग किन्हीं स्वार्थों के कारण जब लोग नहीं करते या करने का विरोध करते हैं तो इससे विकास में गतिरोध उत्पन्न होता है।

1.4.3 प्रशासनिक अवरोध

विकासशील देशों में प्रशासनिक तंत्र न तो कुशल है और न ही ईमानदार। भ्रष्टाचार एवं लालफीताशाही अधिकांश सरकारी कार्यालयों में व्याप्त होता है। ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था आर्थिक विकास के लिए स्वस्थ वातावरण नहीं प्रस्तुत करती। सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों की असफलता का प्रशासनिक तंत्र की अकुशलता, अयोग्यता एवं भ्रष्टाचार है। कमोवेश यही कारण राष्ट्रीय विकास की योजनाओं के क्रियान्वयन की असफलता के भी है।

आर्थिक विकास के लिए सबल, सुयोग्य एवं ईमानदार प्रशासन अनिवार्य है। जब तक उचित एवं कुशल प्रशासनिक तंत्र नहीं होता विकासात्मक योजनाएं क्रियान्वित नहीं की जा सकती। ईमानदार और अभ्रष्ट प्रशासन के लिए जनता एवं सरकारी अधिकारियों का नैतिक व्यवहार एवं चरित्र सबल एवं विकसित किया जाना चाहिए।

1.4.4 व्यावसायिक समूह

विभिन्न व्यावसायिक समूहों द्वारा अपनी आर्थिक स्वार्थपरता के कारण उन नवीन प्रविधियों एवं नियमों का विरोध किया जाता है जो उनके आर्थिक स्वार्थों को प्रभावित करते हैं। आर्थिक उत्पादन के तरीकों को नियंत्रित करने वाले ये नये-नये आर्थिक साधनों को अपनाने से इसलिए डरते हैं कि कहीं उन्हें इससे घाटा न हो जाय। श्रमिक वर्ग सदैव ही अभिनवीकरण का विरोध करता है। उसे उत्पादन को बढ़ाने में उतनी रूचि नहीं होती जितना की अपनी नौकरी को बचाने के लिए होती है। मालिक वर्ग भी नए-नए आविष्कारों का विरोध इसलिए करता है ताकि अन्य व्यक्ति कहीं उससे अच्छी मशीनें न प्राप्त कर लें।

ठेकेदार, दुकानदार, सामन्तवादी कृषक आदि व्यवसायी वर्ग के लोग अपने अधीनस्थ श्रमिकों को उन नियमों कानूनों से सदैव अनभिज्ञ रखने का प्रयास करते हैं जिनसे उनके आर्थिक स्वार्थों के नुकसान का अंदेशा रहता है, वे सदैव ही निरीह एवं अपनी मूलभूत

आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु संघर्ष करने वाले श्रमिकों का आर्थिक एवं मानसिक शोषण करते हैं जिससे उनके विकास में अवरोध उत्पन्न होता है।

1.4.5 राजनीतिक तत्व

विकासशील देशों में राजनीतिक अस्थिरता विद्यमान रहती है। आर्थिक पिछड़ेपन के कारण विकासशील देश विकसित देशों के राजनीतिक अखाड़े बने रहते हैं। उनका विकसित देशों द्वारा शोषण होता है। विकासशील देशों के लोग अपने राजनीतिक अधिकारों से अनभिज्ञ होते हैं। वे अधिक समय तक विभिन्न राजनीतिक गुटों में विश्वास नहीं करते । अतः सरकार में परिवर्तन की संभावना बनी रहती है। परन्तु यह विकास इन देशों के अनुकूल नहीं होता। आर्थिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि सरकार स्थायी हो और जनता का इसमें विश्वास हो। शान्ति और स्थायी सरकार की अनुपस्थिति में सार्वजनिक नीतियों में प्रायः परिवर्तन की संभावना रहती है। आर्थिक योजनाओं को धक्का लगता है और आर्थिक विकास क्षतिग्रस्त होता है। आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने के लिए विकासशील देशों में जनता में राजनीतिक चेतना जाग्रत करके और सशस्त्र सैन्य शक्ति विकसित करके आन्तरिक और वाह्रय स्थायित्व बनाए रखना चाहिए।

1.4.6 विरोधी मनोवृत्तियाँ

यदि समाज में अधिकांश लोगों की मनोवृत्ति परिवर्तन की विरोधी है तो समाज में उन नये-नये तत्वों का समावेश नहीं हो सकता जिससे आर्थिक तथा प्रौद्योगिकीय विकास हो सके। नयी सामाजिक व्यवस्था के न पनपने का यह एक प्रमुख कारण है। परिवर्तन की इच्छा और उसके अनुरूप मनोवृत्ति आर्थिक तथा प्रौद्योगिकीय विकास के लिए आवश्यक है। जिन समाजों में अभी भी आर्थिक तथा प्रौद्योगिकीय उन्नति नहीं हो पायी है उसका मूल कारण वहाँ के लोगों की कठोर मनोवृति है जो अपने सामाजिक तथा सांस्कृतिक पर्यावरण में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं चाहते ।

1.4.7 अन्ध विश्वास

लोगों में अन्ध विश्वासों की बहुलता के कारण भी आर्थिक विकास में बांधा पड़ती है। लोगों में विश्वास की हिंसा पाप को जन्म देती है और वह अन्तिम विश्वास में बाधक होगी - उन कार्यो को नहीं करने देती जो व्यवहार में नहीं है - भले ही वह कितनी लाभदायक क्यों न हों । जैसे भारतवर्ष में बन्दरों को हनुमान का अवतार माना जाता है जिसे मारना कभी भी उचित नहीं माना जाता है। इस प्रकार के अन्ध विश्वास समाज के आर्थिक विकास में बाधक होते हैं।

1.4.8 धर्म का प्रभाव

धर्म अपने समाज के आर्थिक तथा प्रौद्योगिकीय व्यवस्था को प्रभावित करती है। मैक्स वेबर का महत्वपूर्ण अध्ययन पूँजीवाद और प्रोटेस्टेण्ट धर्म इसे सिद्ध करता है। मैक्सवेबर का मत है कि जनसमूह की व्यावहारिक नैतिकता और उसकी आर्थिक व्यवस्था में प्रत्यक्ष सम्बन्ध पाया जाता है।

भारतवर्ष में उचित आर्थिक विकास तथा प्रौद्योगिकीय विकास के न होने का कारण, यहाँ के 'हिन्दू धर्म' को माना जाता है। विचारकों ने यह सिद्ध किया है कि हिन्दू धर्म के आचार का परिणाम रहा है जिसने आर्थिक विकास को अवरूद्ध किया है। हिन्दू धर्म में मोक्ष की प्राप्ति के लिए सर्वस्व त्याग आवश्यक बताया गया है। चूँकि लोग जन्म और मरण के चक्र से मुक्ति चाहते हैं। अतः वानप्रस्थ से ही वे समस्त त्याग की बात को क्रियान्वित करने के प्रयत्न में जुट जाते हैं। जिसके कारण आर्थिक विकास में अवरोध उत्पन्न होता है जिससे सामाजिक विकास मंद हो जाता है।

1.4.9 कर्म की अवधारणा

किन्हीं-किन्हीं समाजों में जैसे भारतवर्ष आदि में विभिन्न सिद्धान्त कर्म को प्रेरित तथा निर्देशित करते हैं। भारतीय समाज में कर्म का सिद्धान्त अधिक प्रभावी रहा है।

हम आज जो हैं वह हमारे भूतकाल के कर्मो का परिणाम है। संचित प्रारब्ध और संचयीमान कर्मो की भी बात की जाती है। अधिकांश व्यक्ति यह सोचकर कि आवश्यक रूप से हमें भूतकाल के कर्मो का यह फल इस समय भोगना होगा। अतः हमारी स्थिति यदि पूर्वकाल के कर्मो के कारण खराब हैं तो उसे इस समय अच्छा कर्म करके सुधारा जा सकता है। यह स्थिति तब तक बनी रहेगी जब तक कि भूतकाल के सभी कर्मो का संचित फल मिल नहीं पाता। अतः लोग निराश होकर सत्कर्म का प्रयत्न छोड़ देते हैं, जिसके कारण आर्थिक तथा सामाजिक विकास में बाधा पहुँचती है।

1.4.10 परम्परायें तथा प्रथाएं

प्रथा से तात्पर्य पूर्वजों के अनुकरण से होता है, तथा परम्परा का सम्बन्ध इन प्रथाओं की निरन्तरता से है। भारतवर्ष तथा अन्य पूर्व एशियाई देशों में विभिन्न प्रथाओं तथा परम्पराओं के कारण आर्थिक तथा सामाजिक विकास नहीं हो पाया है। विभिन्न प्रथाएं जैसे - बाल विवाह, पर्दा प्रथा , नारी शिक्षा का अभाव यहाँ के आर्थिक तथा सामाजिक विकास में अवरोधक के रूप में कार्य करते रहे हैं। भारतीय समांज में औद्योगिक विकास तथा जागरूकता में कमी होने के मुख्य कारणों में परम्पराओं का हाथ है। परम्पराएं धार्मिक भावनाओं से ओत-प्रोत होती हैं और वह उसकी निरन्तरता का कारण है। कुछ समाजों का विकास जिस गति से होना चाहिए वह नहीं हो सका इसका कारण प्रथाएं तथा परम्पराएं हैं।

1.3.11 सामाजिक संस्तरण का प्रकार

भारतवर्ष में आर्थिक तथा सामाजिक विकास में जातिगत नियमों को बाधक माना जाता है। जातिगत व्यवहार निश्चित हैं इन व्यवहारों को करना व्यक्ति की बाध्यता होती है। समाज के सभी कार्य ऊँचे नहीं हैं अतः जो कार्य ऊंचे हैं उनके करने वाले उसे ही करेगें, भले ही उससे आर्थिक लाभ कम ही क्यों न हो । समाज में जिन कार्यो को हेय एवं आर्थिक दृष्टि से अलाभकारी माना जाता है, उन्हें सम्बन्धित जातियों को मजबूरन करना होता

है। जाति से कहीं बहिष्कृत न कर दिया जाय, इस भय से भी लोग केवल अपने परम्परागत कार्यों को ही करते हैं। जिससे आर्थिक एवं सामाजिक विकास अवरूद्ध होता है।

1.4.12 इच्छाशक्ति की कमी

समाज में यदि लोगों की इच्छा शक्ति की कमी होती है तो आर्थिक विकास बाधित हो जाता है, परिणामतः सामाजिक विकास भी अवरूद्ध हो जाता है।

1.4.13 भाग्य में विश्वास

भाग्य में विश्वास भी स्थिर समाजों में अवनति का कारण है। भाग्यवादी दर्शन के कारण ही लोग अपने-अपने उत्तरदायित्वों से बचने का प्रयास करते हैं जिसके कारण आर्थिक तथा सामाजिक विकास अवरूद्ध होता है।

इन कारणों का प्रभाव विकासशील समाजों की आर्थिक एवं सामाजिक विकास की गति पर पड़ता है जिससे विकास अवरूद्ध होता है।

1.5 आदिवासी समाज का आर्थिक विकास

'विकास' शब्द का शाब्दिक अर्थ है – "बृद्धि-क्रमिक प्रगति का होना ।"[1] पश्चिमी देशों में इस प्रधानतः एक आर्थिक प्रक्रिया माना जाता है, जिसका उद्देश्य जनसँख्या के सभी स्तरों के जीवन स्तर में सुधार करना होता है। इसे वस्तुओं के निरन्तर बढ़ते हुए उत्पादन के द्वारा जाना जाता है, परन्तु विकासशील देशों के लिए विकास सर्वाधिक विशिष्ट परिवर्तन प्रक्रियाओं का योग हैं। वे इसे एक बहुपक्षीय योग मानते हैं उनके लिए " विकास सार रूप से चेतन, तर्क संगत एवं जानबूझकर प्रयत्न करने का मुद्दा है।" आर्थिक विकास की प्रक्रिया एक दैत्याकार पैमाने पर समाज का सकारात्मक कार्य है तथा इसका उद्देश्य

---

[1] Development means "A General unfolding of growth, evolution chambers twentieth centwry dictionary (1950), P.N. 252.

रणनीतियों, धन और आर्थिक प्रगति से ही नहीं, अपितु सामाजिक दृष्टिकोण और संस्थाओं, मूल्य धारणाओं, स्वास्थ्य, सुरक्षा, आराम, राजनीति, शासन और विधि से होता है।[1]

इस प्रकार विकासशील समाजों के लिए "विकास" एक बहु आयामी अवधारणा है।[2] इसके अनेक पक्ष हैं, जिनमें से तीन मुख्य हैं -

1. आर्थिक विकास
2. सामाजिक विकास
3. राजनीतिक विकास

आदिवासीय समाज में परिवर्तन की प्रक्रिया को मानव इतिहास के अनवतर परिवर्तन और हमारी वर्तमान आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक व्यवस्था में गतिशील संरचना में समझा जा सकता है।[3]

विकास का सामान्य अर्थ बहुधा उच्चतर उपभोग और जीवन स्तर की सुदृढ़ गुणवत्ता माना जाता है। यह स्पष्ट है कि अधिक उपभोग को अपने आप में विकास का एक मात्र उद्देश्य स्वीकार नहीं किया जा सकता है। फिर भी सामाजिक जीवन में प्रत्येक व्यक्ति की कुछ आधारभूत भौतिक आवश्यकताएं तो पूरी होनी ही चाहिए। इसलिए उस सीमा तक उपभोग मानवीय प्रयास का एक आधारभूत लक्ष्य बन जाता है। पर्याप्त पूर्ण संतुलित आहार, वस्त्र एवं प्राकृतिक आपदाओं से बचने एवं निंद्रा हेतु आवास, मानव की मूलभूत आवश्यकता है। इसलिए उनकी व्याख्या होनी अनिवार्य है। हमारे देश में "पश्चिमी भील" अंचल जैसे कुछ आदिवासी क्षेत्रों में परिस्थिति का सन्तुलन इतना बिगड़ चुका है कि उनके परम्परागत परिवेश से इन न्यूनतम मूलभूत आवश्यकताओं का पूरा होना भी अब संभव नहीं रहा है। कमोवेश यही स्थिति पाठा क्षेत्र के आदिवासी कोलों की है। उच्चतर व्यक्ति कौशल, स्थानीय अर्थ व्यवस्था के विविधीकरण से ही सन्तुलन की पुर्नस्थापना की जा सकती है।

---

[1] Dholcabia, R.P. – " Brochure of Colloguim on law as An Instrument of Development, VARANSI, BHU (1977). P.N.2

[2] Kaushik, P.D. " A Prest ook at the Indian Constitution, P.N.3.5

[3] शर्मा, डा. ब्रहमदेव, पूर्वोक्त, पृ.सं. 4-5

मूलभूत आवश्यकताओं से परे ऊँचे उपभोग का लक्ष्य आदिवासी समाज पर एक मूल्य के रूप में आरोपित करते समय बड़े ही गम्भीर विचार की आवश्यकता है। नये मूल्यों का यह आरोपण सदैव जानबूझ कर ही नहीं होता है। आयोजकों की स्वयं अपनी, अपने समाज अथवा वर्ग के मूल्यों की प्राथमिकताएं अनायास उनकी विचारशीलता और उनके कार्यक्रमों में प्रतिबिम्बित हो सकती हैं। उदाहरणार्थ – आर्थिक विकास के साहित्य में आदिवासी समाज को बहुधा 'गरीब' कह दिया जाता है, जबकि गरीबी एक नितान्त भिन्न अवधारणा है और साधारणतया आदिवासी परिदृश्य से उसका कोई सम्बन्ध भी नहीं हैं। हाँ, कुछ क्षेत्र ऐसे भी हैं, जहाँ ऐसी विशिष्ट स्थितियाँ उत्पन्न हो गयी हैं, कि शरीर धारण के लिए न्यूनतम आवश्यकताएं भी पूरी करना असम्भव हो रहा है। यहाँ असम्भव और विपन्नता है, गरीबी है।
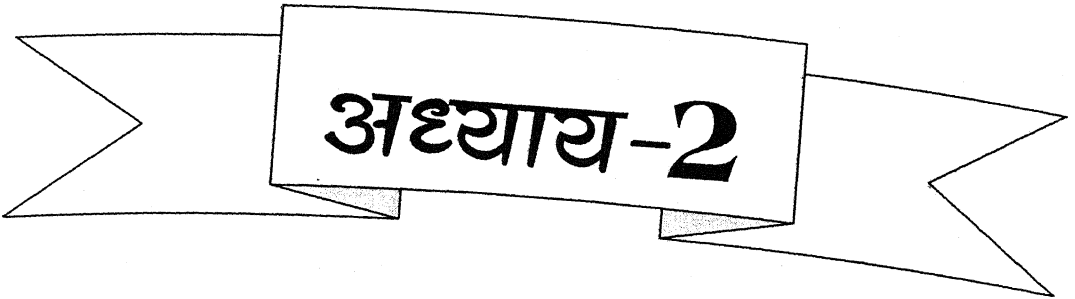
वर्तमान समय में ऐसे बहुत से आदिवासी समूह अभी से दुर्गम वनीय क्षेत्रों में निवास करते हैं, वहाँ के नैसर्गिक संसाधन समृद्ध हैं तथा उनके जीवन की आधारभूत आवश्यकताएं सीमित हैं। ऐसे समुदायों के मध्य जिनकी आवश्यकताएं अत्यन्त सीमित होती हैं, को उत्पादन बढ़ाने का सुभाव भी इन्हें पहली बार अटपटा और आश्चर्यचकित करने वाला होता है।

आदिवासी समुदाय की ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक एवं वैचारिक विशेषता इस प्रकार की रही हैं, कि उनके अस्तित्व एवं विकास के लिए हमारे संविधान निर्माता भी सजग रहे हैं। फलतः इन समुदायों के लोगों और उनके क्षेत्रों के विकास के लिए काफी लचीला प्रशासन प्रदान करने की व्यवस्था की गयी है। वैधानिक एवं प्रशासनिक प्रक्रियाओं को परिस्थितिजन्य संशोधित किया गया है। संविधान में मौलिक अधिकारों तथा समानता देने वाली अनेक धारांए हैं। इनमें खण्ड 4 की धारा 46 में राज्य सरकारों को समाज के कमजोर वर्गो के शैक्षणिक एवं आर्थिक हितों पर विशेष ध्यान देने का निर्देश दिया गया है। विशेषकर अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों पर ध्यान देने को कहा गया है जिससे उन्हें

सामाजिक अन्याय एवं विविध प्रकार के शोषणों से बचाया जा सके। आदिवासी बहुल राज्यों में अलग से आदिम जनजाति कल्याण मंत्री की नियुक्ति की व्यवस्था की गयी है। साथ ही आदिवासी कल्याण योजनाओं को चलाने के लिए विशेष केन्द्रीय अनुदान का भी प्रावधान किया गया है।

अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लिए प्रयत्न प्रथम योजना काल से ही किया जा रहा है। आरम्भ में अन्य क्षेत्रों की भांति आदिवासी क्षेत्रों में भी कार्यक्रमों का शुभारंभ किया गया था। कालान्तर में इन कार्यक्रमों एवं परियोजनाओं की उपलब्धियों का मूल्यांकन किया गया, तथा विकास को नयी दिशा एवं गति देने के लिए एक नयी रणनीति तैयार की गयी जो जनजातीय उपयोजना की संकल्पना पर आधारित है।

अध्याय-2

2. पद्धति शास्त्र

2.1 अध्ययन का प्रारूप

2.2 अध्ययन का संदर्भ

2.3 अध्ययन का महत्व

2.4 अध्ययन के उद्देश्य

2.5 उपकल्पनाएँ

2.6 अध्ययन प्रविधि

2.7 अध्ययन क्षेत्र

2.8 पाठा क्षेत्र और उसके मूल निवासी

2.9 अध्ययन क्षेत्र - पाठा

2.10 पाठा की भौगोलिक संरचना और उत्पादनोंमुख संसाधन

2.11 यातायात के संसाधन

2.12 पाठा के आदिवासी : कोल

2. पद्धति शास्त्र

पूर्व अध्याय में आदिवासी समाज के परिचय एवं आर्थिक विकास की अवधारणाओं का उल्लेख किया गया है।

प्रस्तुत अध्याय में अध्ययन के उद्देशों एवं परिकल्पनाओं के सन्दर्भ संभव यथार्थता का ज्ञान प्राप्त करने तथा अध्ययन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक तथ्यों को संग्रहीत करने हेतु प्रविधियों का विवरण प्रस्तुत किया गया है। इसके लिए समय और संसाधनों की परिधि के अन्तर्गत प्रविधि का निर्धारण किया गया है।

"अध्ययन प्रविधि का सम्बन्ध उस प्रणाली से है,जिसे कि एक वैज्ञानिक अपनी अध्ययन वस्तु के सम्बन्ध में तथ्ययुक्त निष्कर्ष निकालने के लिए उपयोग में लाता है।[1]

2.1 अध्ययन का प्रारूप

प्रायः किसी अनुसंधान को पूर्ण करने के लिए गवेषक को अनेक चरणों में अपनी कार्य प्रणाली को विकसित करना होता है । इन उद्देश्य को पूरा करने के लिए 'वैज्ञानिक पद्धति' सर्वाधिक प्रचलित अध्ययन प्रविधि रही है। विशेषकर सामाजिक अनुसंधान में प्रायः प्रत्येक गवेषक वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करता है। श्रीमती पी.पी.यंग ने वैज्ञानिक पद्धति के अनेक चरणों की विस्तार से व्याख्या की है। मूलभूत रूप में समस्या का चयन ,निरीक्षण ,तथ्यों का संकलन ,वर्गीकरण एवं तथ्यों का निर्वचन आदि महत्वपूर्ण चरण होते हैं । समस्या के चयन में प्रायः अध्ययन के सन्दर्भ को तत्सम्बन्धित साहित्य के पुनरावलोकन ,उससे सम्बन्धित व्यक्तियों से गहन साक्षात्कार एवं द्वैतीयक सामग्री के माध्यम से प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है । तत्पश्चात उससे सम्बन्धित उपकल्पनाएं सृजित की जाती हैं । उपकल्पना ही गवेषक की मार्गदर्शक होती हैं जिनके आधार पर अवलोकन कर तथ्यों को प्राप्त किया जाता है। इन तथ्यों को उपकल्पना के सत्यापन हेतु अनेक परिकृत्यों में बाँटकर

---

[1] मुखर्जी आर.के. सामाजिक सर्वेक्षण शोध एवं सांख्यिकी , आगरा (1997) साहित्यभवन ।

एवं विश्लेषण के द्वारा निष्कर्ष तक पहुँचने का प्रयास किया जाता है । ये सभी चरण प्रायः पद्धति शास्त्र के रूप में जाने जाते हैं । इस सम्बन्ध में प्रस्तुत अध्ययन को ध्यान में रखते हुए गवेषक ने समस्या आदिवासियों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता का अध्ययन (पाठा क्षेत्र के कोला आदिवासियों के विशेष सन्दर्भ में) से सम्बन्धित अध्ययन के प्रारूप का निर्धारण किया है। जिसके अन्तर्गत अध्ययन के सन्दर्भ एवं महत्व , अध्ययन का उद्देश्य एवं इस पर आधारित विभिन्न उपकल्पनाएं सृजित की हैं । इन उपकल्पनाओं की पुष्टि के लिए गवेषक ने अनुसंधान की कतिपय विधि का प्रयोग करते हुए चयनित क्षेत्र के अध्ययन का प्रयास किया है।

2.2 अध्ययन का सन्दर्भ

प्रस्तुत अनुभवजन्य शोध प्रबन्ध उत्तर प्रदेश राज्य के दक्षिणी भाग में स्थित बुन्देलखण्ड भू-भाग के नवसृजित जनपद चित्रकूट के ''पाठा'' क्षेत्र से सम्बन्धित है। जनपद , चित्रकूट का दक्षिण-पूर्वी भाग पठारी है , जिसे 'पाठा' के नाम से जाना जाता है। इस भू-भाग के मूल निवासी कोल जनजाति के लोग हैं ।

नव सृजित जनपद चित्रकूट जिसमें पाठा क्षेत्र अवस्थित है , का क्षेत्रफल 2918.27 वर्ग किलोमीटर है।[1] उत्तर प्रदेश की औसत जनसंख्या का घनत्व (2001 के अनुसार) 690 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। तुलनात्मक दृश्टि से जनपद चित्रकूट का जनसंख्या घनत्व (2001 के अनुसार) 242 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है।[2] इस प्रकार जनसंख्या घनत्व राज्य की तुलना में काफी कम है। यहाँ औसतन प्रति व्यक्ति 1.10 एकड़ भूमि उपलब्ध है , जबकि प्रदेश का औसतन 0.59 एकड़ है।[3] भूमि के असमान वितरण के कारण यहाँ के सबसे निर्धन लोग आदिवासी कोल हैं । विड़म्बना यह है कि विपुल भूमि खण्ड में रहने वाले इस इलाके के मूल निवासी कोलों के पास बिल्कुल भी जमीन नहीं है।

1 सांख्यिकी पत्रिका 2005 , जनपद पृ. सं. 27 ।
2 उत्तर प्रदेश वार्षिकी (2004) , (सम्पादित) लखनऊ , सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उ.प्र. । पृ.सं. 2
3 सांख्यिकी पत्रिका (2005) जनपद , पृ.सं. 10 ।

यदि है भी तो बहुत कम है। वनाच्छादित एवं पठारी क्षेत्र होने के कारण यहाँ की अधिकांश भूमि वन विभाग एवं खनन विभाग के आधिपत्य में है । फलस्वरूप यहाँ के मूल निवासी या आदिवासी कोलों की जनसंख्या का एक बड़ा भाग भूमिहीन है। भूमिहीन या छोटी खेती वाले कोलों को मजदूरी से या वनोत्पादन की बिक्री से प्राप्त धन से जीवन यापन करना पड़ता है। वन क्षेत्र से वनोत्पादन बटोरने वाले कोलों को वनों में एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटकना पड़ता है। अनेक कोल इस क्षेत्र के बड़े किसानों या भूमिपतियों के यहाँ कृषि मजदूरों अथवा बंधुआ मजदूरों के रूप में काम करते हैं । इन दोनों ही प्रकार के मजदूरों (कोलों) की दैनिक मजदूरी अन्य मजदूरों की तुलना में बहुत कम है । स्वतंत्र रूप से मजदूरी करने वाले कोलों की संख्या प्रायः कम है। अधिसंख्य कोल (स्त्री, पुरूष) खनन एवं वन विभाग के ठेकेदारों के अधीन कार्य करते हैं ।

'पाठा' क्षेत्र के कोलों के उक्त सामान्य सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के सन्दर्भ में इस अध्ययन की परिकल्पना की गयी है। आदिवासियों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता (पाठा क्षेत्र के कोल आदिवासियों के विशेष सन्दर्भ में) प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का विषय है। यद्यपि 'पाठा' क्षेत्र कोल बाहुल्य है , फिर भी इसके कुछ भागों में कोलों की संख्या पाठा के गैर-कोलों की तुलना में बहुत कम है। अतः जिन क्षेत्रों में कोल अपेक्षाकृत अधिक संख्या में रहते हैं , उन्ही भाग को अध्ययन हेतु चुना गया है। पाठा के कोलों की आर्थिक संरचना में उनके निवास स्थान का विशेष प्रभाव है।[1] इसी को आधार बनाते हुए अध्ययन हेतु दो प्रकार के कोल ग्रामों को चुना गया - कस्बा अथवा नगर के कोल ग्राम , तथा जंगल में आबाद कोल ग्राम । प्रस्तुत अध्ययन में कोलों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता पता लगाने की दृष्टि से चार ग्रामों का चयन किया गया। पाठा क्षेत्र

---

[1] नाग डॉ0 जसवंत , पाठा के कोलों में राजनीतिक चेतना एवं सहभागिता (1988) शोध प्रबन्ध (अप्रकाशित) ,वाराणसी , काशी विद्या पीठ ।

के दक्षिण जंगल में आबाद ''इटवा-डुडैला'' तथा ''टिकरिया'' ग्राम , कस्बा अर्थात नगर के रूप में विकसित ''मानिकपुर'' एवं ''बरगढ़'' बाजार के समीप रहने वाले कोल ।

अध्ययन क्षेत्र की जनसंख्या 2001

N.	Name of area	Total Population	Population		Population of Sc			Lit tot p.
			Male	Female	Total Population SC	Male (SC)	Female (Sc)	
1	इटवा डुडैला	4967	2638	2329	1388	723	665	2398
2	टिकरिया	1630	866	764	1018	537	481	713
3	मानिकपुर	274	136	138	157	73	84	585
4	बरगढबाजार	4952	2634	2318	1229	679	550	2953

स्रोत : जनगणना 2001

यातायात के साधनों एवं संचार के विविध संसाधनों की उपलब्धता नगरीय क्षेत्रों में सबसे ज्यादा रहती हैं । विभिन्न समूहों एंव वर्गो के लोगों से मिलने , उनके क्रिया-कलापों से अवगत होने एवं अनुसरण करने से नगरीय निवासियों की चेतना बहुत मात्रा में प्रभावित होती है। तुलनात्मक दृष्टि से ग्रामीण क्षेत्र की अपेक्षा नगरीय क्षेत्र के निवासियों में चेतना अधिक विकसित होती है।

प्रायः एक समूह में सभी लोग एक ही स्तर की सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक स्तर वाले नहीं होते हैं । उनकी चेतना में व्यक्ति और समूह दोनों स्तरों पर अन्तर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। एक पिछड़े समूह के कुछ लोग अपने वर्ग की स्थिति के बारे में अपेक्षाकृत अधिक या कम सचेत रहते हैं तो कोई अपनी आर्थिक ,सामाजिक और सांस्कृतिक हीनता के बारे में ज्यादा चिंतित रहते हैं। कुछ व्यक्ति ऐसे भी हैं जो अपने को राजनीतिक दृष्टि से एकदम कमजोर पाते हैं , कुछ ऐसे भी हैं , जो प्रायः अपने पिछड़ेपन के आर्थिक , सामाजिक ,सांस्कृतिक एवं राजनीतिक सभी पक्षों के बारे में सचेत होते हैं।

इन विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए इस शोध अध्ययन में पाठा के कोलों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता को विश्लेषित करना आवश्यक समझा गया है । अध्ययन में मुख्य रूप से आर्थिक ही नहीं , बल्कि सामाजिक , राजनीतिक के साथ-साथ सांस्कृतिक एवं धार्मिक कारक अन्तर्सम्बन्धित हैं । विश्लेषण के लिए इन्हें एक दूसरे से अलग किया जा सकता है , किन्तु वास्तविक जीवन में इन्हें अलग करना मुश्किल है। व्यक्ति के जीवन की पृष्टिभूमि में उक्त अर्न्सम्बन्धित कारकों के अन्तर्गत भू-स्वामित्व शिक्षा , स्तर , आयु , व्यवसाय , आय ,बरसात एंव परिवार का आकार को सम्मिलित किया गया है। वैसे कोई कारक ऐसे नहीं है , जिनका समाज से इतर महत्व हो । इसलिए कभी-कभी यह तय करना मुश्किल हो जाता है , कि किन कारणों को आर्थिक विकास की सूची से विलग किया जाये। लेकिन यहाँ सभी उपादानों को शामिल करने का प्रयत्न किया गया है।

किसी समाज के विकास की स्थिति क्या है , इसका सम्बन्ध आर्थिक आधारों ,कारकों से होता है। इसलिए यहाँ यह प्रयास किया गया है कि इन तथ्यों की व्याख्या में आर्थिक कारकों के महत्व को स्पष्ट किया जाय। इसी प्रसंग में यह देखने का प्रयास किया गया है कि कोलों के विकास में उन्हें अपनी भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए , जुटाये जाने वाले संसाधनों के लिए जिन व्यक्तियों या संस्थाओ से सम्बन्ध स्थापित करने पड़ते हैं , उनसें महिलाएं किस रूप में प्रभावित होती हैं ? सामाजिक अध्ययनों में वर्ग सम्बन्धित आर्थिक कारकों को विशेष महत्व दिया जाता है। इस कारण ऐसे अध्ययनों में गैर आर्थिक , सामाजिक कारकों की प्रायः उपेक्षा भी होती है। प्रस्तुत अध्ययन समस्त आर्थिक , सामाजिक एवं राजनीतिक कारकों पर आधारित है। कोलों की आर्थिक, सामाजिक ,सांस्कृतिक एवं राजनीतिक संरचना को सूचीबद्ध करने पर गतिशील नहीं होती है। कोलों की आर्थिक गतिशीलता को अवरूद्ध करने में व्यक्ति , संस्थाएं एवं व्यवस्था पूर्णतयः उत्तरदायी हैं । इसी

प्रकार के महत्वपूर्ण कारकों को व्यापक आर्थिक परिप्रेक्ष्य में रखकर विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

परिणामतः इस अध्ययन को एक आदिवासी समूह की आर्थिक संरचना के विश्लेषण का अध्ययन कहा जा सकता है । किन्तु यह सामान्य आर्थिक अवधारणा के अन्तर्गत किये जाने वाले अध्ययनों की तरह का अध्ययन नहीं है। इसमें आर्थिक विकास की प्रक्रिया में बाधक विभिन्न समस्यागत पक्षों को , व्यापक सामाजिक पृश्ठभूमि के सन्दर्भ में रखकर भी देखा गया है। इसके द्वारा एक जनजातीय समूह के विकास के प्रति धारणा एवं व्यवहार के विभिन्न पहलुओं पर समाज वैज्ञानिक संदर्भ में व्याख्या की गयी है।

2.3 अध्ययन का महत्व

वर्तमान समय में भारत के विभिन्न भू-भागों पर अधिवासित आदिवासी समूहों में व्यापक परिवर्तन आ रहे हैं , तथा अनेक आदिवासी बाहुल्य क्षेत्रों में व्यवस्था के प्रति असन्तोष की गति बढ़ती जा रही है , ऐसे में प्रस्तुत अध्ययन का महत्व और भी बढ़ जाता है। प्रस्तुत अध्ययन में जहाँ आदिवासी कोलों की आर्थिक संरचना के कई प्रमुख पक्षों पर प्रकाश पड़ता है , वहीं उनके आर्थिक विकास सम्बन्धी विभिन्न आयामों के व्यवहारिकता पर दृष्टिपात किया गया है। शोध का प्रमुख उद्देश्य 'पाठा' के कोलों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की संहभागिता को उनकी सामाजिक संरचना के सन्दर्भ में विश्लेषित करना है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि आदिवासी समूहों की अभिवृष्टियों में कैसे अन्तर आ रहा है।

प्रस्तुत अध्ययन का सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनों ही प्रकार का महत्व है। सैद्धान्तिक दृष्टि से यह अध्ययन भारत के आदिवासी समूहों की वर्तमान आर्थिक स्थिति एंव परिवर्तन के प्रतिमानों का आर्थिक विश्लेषण करता है। यदि देश के विभिन्न आदिवासी क्षेत्रों में इस तरह के अनुभवजन्य अध्ययन उपलब्ध हों तो आने वाले दिनों में यह पता लगाना सम्भव हो सकेगा कि भारत के आदिवासी समूहों का आज के परिवर्तनशील परिवेश

के बारे में एक समग्र एवं स्पष्ट आर्थिक प्रतिबिम्ब कैसा है। भारत में आदिवासी समूहों की आर्थिक संरचना से सम्बन्धित अध्ययन बहुत कम हुए हैं । हर्षकोविट्स , राबर्ट रेडफील्ड तथा राल्फ लिंटन जैसे मानवशास्त्रियों ने जनजातीय समाजों की पर-संस्कृतिग्रहण सम्बन्धी समस्याओं का व्यापक अध्ययन किया है। इसी प्रकार डा0 शिव कुमार तिवारी तथा डा0 श्री कमल शर्मा ने मध्य प्रदेश राज्य की आदिवासियों के लिए बनायी जाने वाली विकास योजनाओं का गहन अध्ययन किया । डा0 आशा चौहान ने म0प्र0 के बस्तर जनपद की जनजातीय महिलाओं में हो रहे सामाजिक परिवर्तनों का विश्लेषण अपने अध्ययन में किया है।

अनीता माथुर ने दक्षिणी राजस्थान में निवास करने वाली आदिवासी महिलाओं के विकास का अध्ययन किया है। इसी प्रकार डा0 आ0के0सिंहा ने पाण्डो जनजाति (म.प्र.) के सामाजिक परिवेश का अध्ययन प्रस्तुत किया है। आर्थिक संरचना की दृष्टि से आदिवासियों के अध्ययन कम ही हुए हैं । आदिवासी बाहुल्य क्षेत्रों में विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु बड़ी संख्या में अध्ययन किये गये हैं , किन्तु कम जनसंख्या वाले आदिवासी क्षेत्रों की अध्येताओं द्वारा प्रायः उपेक्षा की गयी है। कोलों में राजनीतिक चेतना एवं सहभागिता से सम्बन्धित अध्ययन डा0 जसवन्त नाग द्वारा किया गया है इसी प्रकार कोलों के विकास से सम्बन्धित अध्ययन डॉ0 स्वामीप्रसाद द्वारा किया गया परन्तु कोलों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता सम्बन्धी अध्ययन अभी तक नहीं किया गया । व्यावहारिक दृष्टि से इस प्रकार का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इससे आदिवासियों की मौलिक आर्थिक संरचना को समझने और उनसे सम्बन्धित समस्याओं का समाधान करने तथा गैरआदिवासी समूहों के साथ उनके आर्थिक सम्बन्धों को अधिक समतामूलक, समरूप एंव सामंजस्यपूर्ण बनाने की दिशा में प्रयास करना संभव हो सकेगा।

यद्यपि आदिवासियों को सुविधा सम्पन्न तथा सामाजिक सुदृढ़ता प्राप्त समाज की मुख्य धारा से सम्बद्ध करना , जनतांत्रिक व्यवस्था का अहम मुद्दा है। इनकी दयनीय

तथा उपेक्षित स्थिति को समाप्त करना है। इनके अन्दर व्याप्त असन्तोष के कारणों का पता कर उन्हें समाप्त करना है। इसके लिए यह जानना आति आवश्यक है कि आदिवासियों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता की स्थिति क्या है। इन स्थितियों को जानने से ही कोलो की आर्थिक संरचना को विश्लेषित किया जा सकता है। यहाँ यह आवश्यक नहीं है कि सुझाये गये बिन्दुओं से ही आदिवासियों की आर्थिक समस्या का समाधान निकल आये तथा उनके आर्थिक विकास के अवरोधक कारकों को तुरन्त समाप्त किया जा सके , बल्कि इतना अवश्य होगा कि इस अध्ययन से आदिवासियों की वास्तविक आर्थिक समस्याओं को समझने में मदद मिलेगी। आवश्यकतानुसार इससे सारगर्भित दिशा निर्देश अवश्य प्राप्त किये जा सकेगें।

2.4 अध्ययन का उद्देश्य

किसी भी शोध अध्ययन की पृष्ठभूमि , सन्दर्भ एंव महत्व के आधार पर अध्ययन के उद्देश्यों को स्पष्ट करना आवश्यक हो जाता है। इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य ''पाठा के कोलो की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता का पता लगाना है , इस अध्ययन में यह देखने का प्रयास गया है कि कोलों की आर्थिक संरचना उन्हें एक विशेष प्रकार की सामाजिक स्थिति में रहने के लिए बाध्य किये है। 'चैपिन' ने कहा है कि ''परिवर्तन तो कड़ियों की श्रृंखला से बँधी हुई चक्रीय गति में होता है'' , यहाँ की सामाजिकता की श्रृंखला सांस्कृतिक एवं राजनैतिक संरचना की कड़ीबद्ध होने से गतिशील नहीं है। अध्ययन में यह देखने का प्रयास किया गया है कि आर्थिक गतिशीलता के अवरूद्धता के कौन-कौन से कारक हैं , और उनका कोलों के विकास और उनकी आर्थिक संरचना पर कितना प्रभाव है। यहाँ की स्थिति का आंकलन करने से यह स्पष्ट होता है कि कोलों की आर्थिक संरचना में क्षेत्र के प्रभावशाली व्यक्ति , कार्यरत संस्थाएँ तथा उनकी पारिवारिक व्यवस्थायें आर्थिक संरचना को निर्धारित करती हैं -

1. पुरूषों की तुलना में कोल महिलाओं की आर्थिक गतिविधियों में अधिक संलिप्त होना ।
2. 'दादू' जिन्हें स्थानीय भाशा में भैया जी कहकर पुकारा जाता है , ठेकेदार , साहूकार तथा वनों के ठेकेदार ('पाठा' क्षेत्र के कारोबार में उक्त दादुओं का क्षेत्र के खनन कार्य से लेकर वनोत्पाद के कार्य आदि में पूर्ण अधिकार है)।
3. क्षेत्र में कार्यरत स्वैच्छिक संगठनों , धार्मिक संस्थानों आदि की भूमिका ।
4. वन विभाग के अन्तर्गत कार्यरत वनकर्मी एवं अधिकारीगण ।
5. विकास कार्यक्रम , समाज कल्याण विभाग से सम्बद्ध कर्मचारी एवं अधिकारी ।
6. यातायात के साधनों , संचार की सुविधाओं की अपर्याप्तता ।
7. पाठा के कोलों का अपने क्षेत्र से मातृत्व लगाव ।
8. कोलो में संगठनात्मकता का अभाव ।
9. कोलों में शिक्षा का पूर्णतया अभाव , जन चेतना की कमी ।

इन कारकों पर एक विहंगम दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि कोलों का आर्थिक पिछड़ापन एक समस्या है , जिसे संरचनात्मक प्रकार्यवाद से समझने का प्रयास किया गया है। मानवशास्त्रियों ने तो एक लघु समुदाय अथवा जनजाति को लेकर उसे समाज से पृथकीकृत की प्रक्रिया के माध्यम से अलग कर अध्ययन किया है । उनका अध्ययन वर्णनात्मक अधिक होता है , जबकि आर्थिक आधार पर पृथककर नहीं बल्कि एक संरचना का अन्य संरचना के साथ अन्र्तसम्बन्धात्मक एवं उनसे उत्पन्न प्रकार्यात्मक स्थिति का अध्ययन करने का प्रयास किया जाता है । जिससे विषय का तार्किक विवेचन के साथ यथार्थता का अध्ययन किया जा सके। कोलों का अध्ययन मानवशास्त्री अपने ढंग से करना चाहेगा। किन्तु प्रस्तुत अध्ययन पूर्णतया आर्थिक सिद्धान्त के आधार पर किया गया है। यह क्षेत्र अब तक अर्थशास्त्रिय शोध से अछूता रहा है।

अभी तक कोल जनजाति की आर्थिक संरचना का अध्ययन इस ढंग से प्रस्तुत नहीं किया गया है। यह प्रयास अपने ढंग का अनूठा प्रयास है। मानवशास्त्रियों के अध्ययन की विधि तथा इनकी मान्यताओं में प्रायः समानता दिखलाई देती है। साधारणतया आदिम जनजातीय संस्कृति में परिवर्तन के खोजी कारकों में मानवशास्त्री उनके आदर्श प्रतिमान , जीवन मूल्य , धर्म , प्रथा , रीति-रिवाज या सम्पूर्ण सांस्कृतिक संरचना को ही नहीं अन्य कारकों पर बल भी देता रहा हैं , जो उनके अध्ययनों से स्पष्ट भी हो चुका है । कोलों के सम्बन्ध में यदि 'मैक्स वेबर' एवं 'मार्क्स' के माडलों को प्रयुक्त करें तो हमारी मान्यता है कि वह मार्क्स के नजदीक है , क्योंकि कोल आर्थिक दृष्टि से दूसरों को अधिक लाभ पहुँचाने वाले सिद्ध हो चुक हैं , यदि इनकी वर्तमान परिस्थिति में कोई परिवर्तन हुआ तो दूसरे आर्थिक हितों को प्राप्त करने वाले समूहों को नुकसान होगा ।

2.5 उपकल्पनाएं

प्रस्तुत अध्ययन को संगठित और सुव्यवस्थित करने के लिए उपकल्पना का निर्माण करना आवश्यक था , इसलिए कोलों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता के अध्ययन हेतु प्रस्तुत अध्ययन की कुछ उपकल्पनांए इस प्रकार से हैं -

1. कोलों की आर्थिक संरचना में पुरूषों की तुलना में महिलाओं का अधिक योगदान है।
2. कोल अधिवासित क्षेत्रों में संचालित कार्यो में पुरूषों की तुलना में महिलाओं के लिए कार्य उपलब्धता अधिक है।
3. प्रतिबन्धित वन क्षेत्रों से लकड़ी कटान कर अधिकांश कोल महिलाएं आय प्राप्त करती है।
4. कोल महिलाओं को उनके द्वारा किए गए कार्यो तथा संकलित उत्पादों के विक्रय से उन्हें उचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता है।

5. नगरीय क्षेत्र की तुलना में जंगली ग्रामों में अधिवासित कोल महिलाओं को आर्थिक योजनाओं की जानकारी कम होती है।
6. कोल महिलाओं को आर्थिक क्रिया कलापों के दौरान शारीरिक मानसिक एवं आर्थिक शोषण का शिकार होना पड़ता है।

2.6 अध्ययन पद्धति

अध्ययन के निष्कर्ष हेतु तथ्यों के संकलन के लिए साक्षात्कार तथा गहन अवलोकन , दोनों प्रकार की विधियों का प्रयोग किया गया है। अध्ययन क्षेत्र के उत्तरदात्री महिलाओं का साक्षात्कार करके अनुसूची के माध्यम से तथ्यों का व्यवस्थित संकलन किया गया है। साक्षात्कार माध्यम से प्राप्त जानकारी अपने आप में पर्याप्त नहीं थी , अतः कोल समुदाय की सामाजिक , आर्थिक , सांस्कृतिक एवं राजनीतिक जीवन के साथ ही उनके सामाजिक परिवेश के यथार्थ ज्ञान के लिए अवलोकन प्रविधि का आश्रय लेना उचित प्रतीत हुआ है। शोधकर्ता को अध्ययन के लिए चयनित किये गये गाँवों में , प्रत्येक ग्राम में कई बार जाना पड़ा , साथ ही गाँवों में कई-कई दिनों तक कोल समूहों के बीच प्रवास भी करना पड़ा है। अध्ययन क्षेत्र से सम्बन्धित प्रत्येक गांव का क्षेत्रफल , कृषित भूमि , भू-स्वामित्व जनसँख्या , शिक्षा व्यवसाय , स्वास्थ्य सेवायें , यातायात एवं संचार के साधनों सम्बन्धी आंकड़ो को एकत्र कर अलग-अलग चयनित ग्रामों की सूचियों को तैयार कर उनका विश्लेषण करने का अथक प्रयास किया गया। प्राथमिक आंकड़ो का संग्रह पूर्णतया क्षेत्रीय सर्वेक्षण पर आधारित है जबकि द्वितीयक आंकड़ो के संग्रह में जनगणना पुस्तिका , गजेटियर सांख्यिकी पत्रिका तथा अन्य उपलब्ध अभिलेखों का सहारा लिया गया है। वनवासी कोलों की व्यावसायिक प्रकृति 'घूमन्तू' है , वे जंगलों में घूम-घूमकर वनोपज एकत्र करने के साथ ठेकेदारों के अधीन रहकर एक जंगल से दूसरे जंगल में जाकर लकड़ी काटने , तेन्दू पत्तियों के तोड़ने का कार्य करते हैं । अतः ये लोग एक समय पर अपने आवासों में उपलब्ध नहीं

रहते हैं । इसलिए उनसे सम्पर्क करने हेतु शोधकर्ता को कोलों की वन-बस्तियों तक अनेकों बार जाना पड़ा है।

तथ्य संकलन के दौरान शोधकर्ता को ऐसा प्रतीत हुआ है कि कोलानों (कोलों की बस्तियाँ) में जाकर केवल उत्तरदाताओं से सूचनाएं संकलित करना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि कोलों की आर्थिक संरचना के समस्त पहलुओं की जानकारी भी प्राप्त करनी है , अतः गांवों में इन्हीं के मध्य रहना आवश्यक प्रतीत हुआ । जिसके लिए शोधार्थी ने कोल बस्तियों में प्रवास किया । अध्ययन क्षेत्र के प्रत्येक कोल गाँव में अवलोकन तथा बातचीत के माध्यम से जो सूचनायें एवं जानकारियां प्राप्त हुई , उन्हें एक दैनन्दिनी में क्रमवार निरन्तर नोट किया गया। इस दैनन्दिनी में क्षेत्रीय लोगों एवं कोलों की प्रतिक्रियाओं को भी अंकित किया गया। शोधकार्य में यह दैनन्दिनी अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रतीत हुई । वास्तव में पाठा क्षेत्र के कोलों की आर्थिक स्थिति तथा उनके परिवर्तनीय परिवेश की जो समग्र झाँकी दैनन्दिनी में अंकित तथ्यों से प्राप्त हुई है , वह साक्षात्कार अनुसूची से प्राप्त होना संभव नहीं थी ।

अर्ध-सहभागी अवलोकन के क्रम में बहुजातीय तथा एकजातीय दोनों प्रकार के गाँवों के मुखिया , प्रमुख व्यक्यिों , गाँव का नेतृत्व प्रदान करने वाले लोगों , सामाजिक कार्यकर्ताओं , नवयुवकों से भी समय-समय पर सम्पर्क कर गहन विचार विमर्श किया गया है। जनसंख्या , परिवारों की संख्या , आय के स्रोतो के अतिरिक्त सरकारी कर्मचारियों , राजनीतिज्ञों , भू-पतियों , ठेकेदारों , दादुओं का कोल महिलाओं के प्रति क्या दृष्टिकोण एवं व्यवहार हैं ? आदि के सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी प्राप्त की गयी है। उत्तरदाताओं से साक्षात्कार के समय भी अपेक्षित तथ्यों के संकलन के साथ ही गाँव के सामाजिक जीवन , शक्ति संरचना , गुटबन्दी आदि से सम्बन्धित तथ्यों की विस्तृत जानकारी निरन्तर प्राप्त की जाती रही है। कोल गाँवों में कई बार जाने से , वहाँ के कोलों एवं अन्य स्थायी निवासियों के साथ सम्पर्क के अलावा अन्य लोगों से भी सम्पर्क स्थापित हुआ , जो इन क्षेत्रों में सरकारी , गैर सरकारी , स्वैच्छिक संस्थाओं एंव अर्द्ध सरकारी कार्यो से सम्बन्धित है। ऐसे

लोग गाँवों एवं कोलों की सामाजिक वास्तविकताओं को समझाने में अत्याधिक सहायक सिद्ध हुए हैं । इसके अतिरिक्त विकास क्षेत्रों एवं कार्यकर्ताओं से भी उपयोगी जानकारी प्राप्त हुई । कई बार क्षेत्र में जाने के कारण वहाँ के लोगों से मैत्री एवं सद्भावनापूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो गये जिससे उत्तरदाताओं से साक्षात्कार करने में शोधकर्ता को काफी सुविधा हुई।

आवश्यक तथ्य एकत्रित करने हेतु बनाई जाने वाली साक्षात्कार अनुसूची को अन्तिम रूप देने से पहले उसका , एक गाँव के कुछ कोल महिला उत्तरदाताओं से साक्षात्कार करके पूर्व परीक्षण किया गया है। प्राथमिक तथ्यों को संकलित करने के लिए प्रयुक्त अनुसूची में मुक्त प्रकार के विकल्पहीन , तथा पूर्व निर्धारित विकल्प वाले दोनों ही प्रकार के प्रश्न आवश्यकतानुसार रखे गये हैं । तथ्यों के संकलनार्थ प्रयुक्त साक्षात्कार अनुसूची को इस शोध प्रबन्ध में प्ररिशिष्ट के रूप में दिया गया है।

कोलों की आर्थिक संरचना ने कमोवेश भिन्नताएं हैं । आर्थिक , सामाजिक , सांस्कृतिक , तकनीकी , संस्थागत एवं राजनीतिक मात्रा भेद निर्धारण के लिए “ लिकर्ट प्रविधि“ से निर्मित पाँचों अलग-अलग प्रसन्न समूहों का निर्माण करके उन्हें साक्षात्कार अनुसूची में सम्मिलित किया गया है। इन पाँचों प्रश्न समूहों को तृतीय , चतुर्थ , पंचम एवं षष्ठ , एवं सप्तम अध्यायों में रखा गया है। साक्षात्कार अनुसूची द्वारा प्राप्त तथ्यों का सांख्यिकीय विश्लेशण के आधार पर इस अध्ययन में आव-यकतानुसार उपयोग किया गया है।

2.7 अध्ययन क्षेत्र

पाठा क्षेत्र के जनजातीय कोलों की बस्तियाँ एक समान नहीं हैं , ये बस्तियाँ तीन प्रकार की हैं -

1. पाठा क्षेत्र के दक्षिण में जंगल में आबाद बस्तियाँ ।
2. सड़क के समीप स्थित बस्तियाँ ।
3. नगर/ कस्बों के समीप में स्थित बस्तियाँ ।

अतः पाठा क्षेत्र के कोलों के जनसंख्यात्मक वितरण का अनुमान लगाने के बाद ज्ञात हुआ कि कोलों की सबसे अधिक प्रतिनिधित्व करने वाली कोल बस्तियाँ वनों या जंगलों के मध्य स्थापित हैं । इसके बाद नगरीय या कस्बाई क्षेत्रों की कोल बस्तियों का स्थान है। इसी आधार पर यथाशक्ति अध्ययन हेतु कोल बस्तियों का चयन किया गया है। इस आधार पर वन क्षेत्रों के बीच बसे कोल ग्रामों , कोलानों और नगरीय या कस्बाई क्षेत्रों में स्थित कोल बस्तियों में से प्रत्येक प्रकार से दो-दो कोल बस्तियों का चयन किया गया । उनका जनसंख्यात्मक चयन करने में यथासंभव सावधानी बरती गयी है , ये सभी चुनी गयी कोल बस्तियाँ ऐसी हैं जो निश्चित रूप से अलग-अलग प्रकार का प्रतिनिधित्व करती हैं । अध्ययन हेतु चयनित कोल ग्रामों के 418 कोल महिलाओं का साक्षात्कार करने के पश्चात् अनुसूचियों को शोधार्थी द्वारा भरा गया । विश्लेषण के दौरान 18 उत्तरदात्रियों की अनुसूचियाँ पूर्ण नहीं थी। अन्ततः इन 18 अनूसूचियों को पुनः पूर्ण करने का प्रयास असफल रहा । इस प्रकार चुने गये कोल ग्रामों या बस्तियों में बसे 400 कोल महिलाओं का अध्ययन किया गया है। साक्षात्कार के लिए परिवार की प्रमुख महिला को चुना गया है। इसके साथ ही परिवार की अन्य युवतियों एंव कमाने वाले व्यक्ति को उत्तर देने के लिए अधिकृत किया गया है। जो पारिवारिक आर्थिक संरचना के आधार होने के साथ-साथ सामाजिक , सांस्कृतिक आर्थिक एवं राजनीतिक निर्णयों में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं । उत्तरदात्रियों के साथ लम्बें समय तक सम्पर्क और परिचय के कारण कुछ अपवादों को छोड़कर अध्ययनकर्ता को अनुसूची भरने में कोई कठिनाई नहीं हुई है किन्तु अनेक उत्तरदात्रियों का अपने घरों में न मिलने के कारण कार्य समय साधक अवश्य हुआ है । यह कहा जा सकता है , कि सामाजिक परिवेश की भिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध के लिए तीन प्रकार की विशेषताओं वाले कोलानों का चयन किया गया , उनके सामाजिक , सांस्कृतिक , आर्थिक एवं राजनीतिक विकास में निवास की विविधता का क्या प्रभाव पड़ता हैं ? निवास की परिस्थिति का , उनके आर्थिक विकास में महिलांओं की

सहभागिता एवं स्वरूप की भिन्नताओं का पता चल सका है । निवास स्थलों की विविधता के आधार पर इस अध्ययन के उत्तरदाता दो प्रकार के हैं –

1. वनों /जंगलों में निवास करने वाले कोल

ये कोल वनों के बीच अवस्थित कोल बस्तियों में रहते हैं । ऐसी बस्तियों में अन्य जातियों से सम्बन्धित लोगों का निवास नहीं होता है। ये 'एक जातीय' ग्राम हैं । इनमें स्वजातीय एवं एक ही सांस्कृतिक समरूपता वाले समुदाय आवासित हैं । इनमें मानिकपुर विकास खण्ड , क्षेत्र समिति के इटवा डुडैला , टिकरिया नामक कोलान हैं । इन वन प्रान्तर के दोनों कोल ग्रामों के कोल परिवारों को अध्ययन के लिए चयनित किया गया ।

2. नगरीय या कस्बाई कोल /बस्तियाँ

कोल पाठा क्षेत्र के दो छोटे नगरों मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार में रहते हैं । इन नगरों में भी कोलों की विशेष बस्तियाँ हैं । इन बस्तियों में प्रायः कोल ही निवास करते हैं । इस प्रकार नगरों में रहते हुए भी इनकी बस्तियाँ उसी तरह अलग से बसी हैं जैसे गांवों में बसी होती हैं । इन बस्तियों को भी 'कोलान' ही कहा जाता है। इन दोनों नगरों के 'कोलानों' के परिवारों को अध्ययन हेतु चयनित किया गया ।

प्रस्तुत अध्ययन में उपरोक्त दो प्रकार के 'कोलानों' में बसे 'कोल' परिवारों का अध्ययन किया गया है। इसके लिए निदर्नन प्रविधि का सहारा लिया गया है। इन कोलानों के परिवार की महिला प्रमुखों को उत्तरदाता माना गया । इस अध्ययन में मुख्य रूप से 400 कोल उत्तरदाता के रूप में सम्मिलित हैं । कुछ उत्तरदात्री ने दादुओं के वास्तविक या काल्पनिक भय से सन्तोषजनक उत्तर नहीं दे सकें हैं । फिर भी उक्त समग्र की अधिकांश उत्तरदायी अपेक्षित सहयोग प्रदान किया है।

साक्षात्कार अनुसूची से प्राप्त तथ्यों के वर्गीकरण एवं सारणीयन के समय 418 उत्तरदाताओं की भी हुई अनुसूची में से 18 अनुसूचियों को कम कर दिया गया जो

अपूर्ण एवं अस्पष्ट थी । इस प्रकार अन्ततः 400 उत्तरदात्रियों की अनुसूचियों के आधार पर सांख्यिकीय गणना की गयी ।

2.8 पाठा क्षेत्र और उसके मूल निवासी

उत्तर प्रदेश के दक्षिणांचल में बसे विशाल बुन्देलखण्ड क्षेत्र में सात जनपद क्रमशः झाँसी ,ललितपुर ,जालौन ,हमीरपुर , महोबा , बाँदा तथा चित्रकूट आते हैं। जनपद चित्रकूट के एक विशेष क्षेत्र जिसे 'पाठा' के नाम से जाना जाता है , के मूल निवासी कोलों बी आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता का अध्ययन प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का विशय है। चित्रकूट जनपद की भौगोलिक स्थिति 24^0 , 53' से 25^0 , 55' उत्तरी अक्षांश एवं 79^0 , 59' से 81^0, 34' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है । इसके उत्तर में जनपद इलाहाबाद , पश्चिम में जनपद बांदा तथा पूर्व एवं दक्षिण में मध्य प्रदेश राज्य द्वारा सीमाओं का निर्धारण होता है। जनपद चित्रकूट का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 2918.27 वर्ग कि0मी0 है।[1]

चित्रकूट जनपद की प्रशासनिक संरचना दो तहसीलों - मऊ एवं चित्रकूट तथा पाँच विकास खण्डों -पहाड़ी , चित्रकूट ,रामनगर , मऊ एवं मानिकपुर से मिलकर बनी है , जनपद की भू-गर्भिक संरचना में क्षेत्र की सतत् वाहिनी नदियों का महत्वपूर्ण योगदान है। इन्हीं नदियों द्वारा निक्षेपित मलवे से इसकी संरचना हुई है। जनपद के दक्षिणी भाग का क्षेत्र पूर्णतया पठारी है। इसके अन्तर्गत मानिकपुर तथा चित्रकूट का भू-भाग सम्मिलित है। इसी क्षेत्र को पाठा के नाम से जाना जाता है तथा चित्रकूट का भू-भाग सम्मिलित है , का मुख्य भाग है।[2]

जनपद चित्रकूट के कुल भौगोलिक क्षेत्रफ की 59.5 प्रतिशत भूमि कृशि के योग्य है। क्षेत्रफल का 35 प्रतिशत भू-भाग वनाच्छादित है। शेष 5.5 प्रतिशत भूमि बंजर एवं ऊसर है जो कृषि कार्य हेतु अनुपयुक्त है। जनसंख्या का घनत्व 242 प्रतिवर्ग कि0मी0 है

---

1 नवसृजित जनपद के शासकीय दस्तावेजों के आधार पर

2 उ0प्र0 वार्षिकी ,सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग ,उ0प्र0 शासन लखनऊ 2004 ,पृष्ठ संख्या 08

जबकि प्रान्तीय जनसंख्या का घनत्व 690 व्यक्ति प्रतिवर्ग कि0मी0 है। जनपद में आदिवासी जनसँख्या का घनत्व 157 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है। जो राज्य की अपेक्षा कम हैं ।[1] यहाँ प्रति व्यक्ति तुलनात्मक भूमि की उपलब्धता जनपद में 1.05 एकड़ भूमि तथा राज्य में 0.51 एकड़ भूमि है। जनपद चित्रकूट की जलवायु मानसूनी प्रकार की है। गर्मियों में ताप की उष्णता तथा जाड़े के दिनों में कड़ाके की सर्दी पड़ती है। वर्षा का औसत 80 से 100 से0मी0 है अधिकांश वर्षा जुलाई से सितम्बर के मध्य होती है। कृषि योग्य भूमि का 25.00 प्रतिशत भाग सिंचित है। यहाँ रबी एवं खरीफ की फसलें उत्पन्न होती है। खरीफ में ज्वार ,बाजरा ,अरहर ,धान ,मुख्य फसलें हैं । रबी की फसलों में चना ,गेहूँ तथा तिलहन का उत्पादन किया जाता है।

चित्रकूट जनपद की कुल जनसंख्या 766225 (2001) है। जिसमें अनुसूचित जाति की व्यक्तियों की संख्या 201839 है। अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की तुलना में कोलों की जनसंख्या कम हैं ।

जनपद में यातायात के साधनों जैसे सड़क ,रेल यातायात आदि का अधिक विकास नहीं हुआ है। फिर भी जिले के कस्बें एवं नगर इससे अवश्य सम्बद्ध हैं । प्रमुख सड़क मार्गो से कुछ गाँवों को जोड़ने वाली सड़के भी विद्यमान हैं । जनपद की मुख्य सड़क जिले के मुख्यालय को जोड़ते हुए इलाहाबाद तक जाती है। जिला मुख्यालय उत्तर प्रदेश के प्रमुख शहरों से तो सम्बद्ध है ही , साथ ही चित्रकूट होते हुए मध्य प्रदेश राज्य को जोड़ने वाली सड़क है , जो मध्य प्रदेश प्रान्त को भी सड़कों से सम्बद्ध किये हुए है । नये जनपद (चित्रकूट) सृजन के पूर्व बांदा जनपद से सम्बद्ध रहने के समय भी कच्ची , पक्की[2] सड़कों का निर्माण इस क्षेत्र में हुआ है । वन विभाग द्वारा वनीय क्षेत्र में पहुँच बनाने के लिए सड़कों एवं मार्गो का निर्माण कराया गया है। सड़कों का काफी संख्या में निर्माण होने के

---

1 पूर्वोक्त

2 बिना तारकोल के आर.सी.सी. से बनी सड़क

बावजूद क्षेत्र के बहुत से गाँव अभी भी इस सेवा से अछूते हैं । दूर-दराज क्षेत्र में स्थित उन गांवों के निवासी आवागमन के रूप में कच्चे रास्तों एवं पगडंडियों का सहारा लेते हैं ।

यातायात के दूसरे प्रमुख साधन में रेलमार्ग आता है। इलाहाबाद -झाँसी रेल मार्ग जनपद के मुख्यालय से गुजरती है , देश के किसी भी भाग में आने जाने हेतु इस रेल यातायात का उपयोग किया जा सकता है। क्षेत्र का सबसे बड़ा रेलवे जंक्सन मानिकपुर रेलवे स्टेशन है , जहाँ पर पैसेंजर रेलगाड़ियों से एक्सप्रेस तथा सुपर फास्ट ट्रेने रूकती हैं । इस रेलवे से देश के महानगरों तक आसानी से आया जाया जा सकता है । जनपद में वायुमार्ग का पूर्णतया अभाव है।

2.9 अध्ययन क्षेत्र - पाठा

उत्तर प्रदेश के दक्षिणी भाग को बुन्देलखण्ड के नाम से जाना जाता है। बुन्देलखण्ड स्थित चित्रकूट जनपद के पठारी भाग को पाठा क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। पाठा के मूल निवासी कोल जनजाति के लोग हैं । कोल बाहुल्य क्षेत्र पाठा को ही शोध अध्ययन हेतु चयनित किया गया है।

'पाठा' क्षेत्र का विस्तार जनपद इलाहाबाद के क्षेत्र शंकरगढ़ तक विस्तृत है। इस क्षेत्र के उत्तर में यमुना एवं पयस्वनी नदियाँ प्रवाहित हैं । आगे इसका विस्तार पहाड़ी , कर्वी तथा मऊ तक है। दक्षिण में मानिकपुर क्षेत्र समिति का अधिकांश भाग इसी क्षेत्र में है। इसमें दक्षिण मध्य प्रदेश प्रान्त की सीमा सटी हुई है। पाठा क्षेत्र चित्रकूट जनपद का अभिन्न अंग है। समस्त जनपदीय कार्यक्रमों का संचालन इस क्षेत्र को भी प्रभावित करता है। यदि समिति स्तर से इस क्षेत्र का आंकलन किया जाता है तो मानिकपुर ,मऊ समिति का आधा भाग तथा चित्रकूट क्षेत्र का अधिकांश भाग इसमें सम्मिलित है। चयनित अध्ययन क्षेत्र 'पाठा' 171823 एकड़ अथवा 700 वर्ग कि0मी0 है।[1]

---

[1] हसन अमीर ,कोल्स ऑफ पाठा ,इलाहाबाद ,किताब महल पृ0सं. 34 ।

2.10पाठा की भौगोलिक संरचना और उत्पादनोमुख संसाधन

'पाठा' क्षेत्र की भूगर्भित एवं भौगोलिक संरचना देश जनपद के दूसरे हिस्से से भिन्न प्रकार की है। यह क्षेत्र पठारी भू-भाग होने के साथ ही साथ अधिक ऊंचाई वाला है अतः सम्पूर्ण भू-भाग की जलवायु अधिक शुष्क एवं तापीय है ,अतः यह कहा जा सकता है कि पाठा का भू-भाग समतल न होकर ऊबड़-खाबड़ वाला हैं। गंगा की सतह से इसकी ऊँचाई भिन्न-भिन्न है। कहीं-कहीं 90 मी0 तो कही 150 मी की ऊंचाई है। विन्ध्याचल श्रेणियों की उपत्यकाओं से प्रभावित यह क्षेत्र पूर्णतया पठारी है। खनिज सम्पदा की दृष्टि से यह क्षेत्र बहुत सम्पन्न है परन्तु अभी तक इस क्षेत्र के खनिजों का दोहन ठीक प्रकार से नहीं किया गया है । क्षेत्र में मुख्यतया बालू का पत्थर ,चूना पत्थर ,ग्रेनाइट्स तथा बाक्साइड की प्रचुरता है। तकनीकी अभाव के कारण इनका खनन उचित ढंग से नहीं हो पाया है। पाठा क्षेत्र में पत्थरों की अधिकता पायी जाती है। ढालू क्षेत्र की मिटटी उपजाऊ है जिसमें बालू तथा काली मिटटी का सम्मिश्रण पाया जाता है।

पाठा क्षेत्र पथरीला ऊबड़-खाबड़ होने के बावजूद इस क्षेत्र में विद्यमान घाटियाँ रमणीयता लिए हुए हैं। यह घाटियाँ कई प्रकार की वनस्पतियों से आबद्ध हैं। पाठा क्षेत्र का 92 वर्ग मील भू-भाग वनाच्छादित है।[1] यहाँ की मुख्य वनस्पतियों में तेन्दू ,खेर ,महुआ ,आंवला ,बांस ,अमलवाते, सेमला तथा चिरौंजी (चार) पायी जाती है। वनीय भू-भाग में जंगली पशु-पक्षियों की बहुतायत है। ये जानवर हिंसक प्रवृत्ति के हैं। इस भू-भाग का वन अधिनियम के अन्तर्गत शिकार हेतु निशिद्ध कर दिया गया है।[2] वनाच्छादित क्षेत्र के कुछ भाग में चारागाह हैं , जहाँ निश्चित शुल्क अदा कर पालतू जानवरों को चराया जा सकता है। चरागाह का शुल्क व कर्मियों द्वारा वसूला जाता है। वन निगम की स्थापना के बाद वनोत्पज के समस्त कार्य निगम द्वारा ही सम्पादित किये जाते हैं । ये ठेकेदार निगम के कर्मचारियों

---

1 हसन अमीर , पूर्वोक्त , पृ.सं. 35

2 नाग डॉ0 जसवक्त ,आलेख ,कोलों के विकास की संभावनाएँ ,दैनिक कर्मयुग प्रकाशन (बाँदा)

एवं अधिकारियों से साँठ-गाँठ स्थापित कर वनोत्पादन का कुछ भाग अपने कब्जों में कर लेते हैं । वन विभाग के कुछ नियम, कानून तथा कायदे हैं जिसके अन्तर्गत वनों के वृक्षों से सूखी लकड़ी ,फल जो पेड़ से नीचे गिरते हैं उन्हें ही स्थानीय लोग उपयोग में ला सकते हैं । वनवासी कोलों की जीविका का मुख्य साधन वन ही रहे हैं। प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से ये कोल इन्हीं वनों पर आश्रित हैं । कोल मुख्य रूप से महुआ ,चिरौंजी तथा जंगली क्षेत्र की शहद इकट्ठा कर अपना जीविकोपार्जन करते हैं।

जनजाति प्रारम्भ से ही वन उपज पर ही आश्रित रहे हैं। वन तथा वनोत्पादन ही उनका सब कुछ रहा है। परन्तु वन विभाग के नवीन नियमों से वे काफी विवादित हैं। इन्हें ऐसा एहसास हो रहा है जैसे उनकों , अपनी ही सम्पत्ति से वंचित कर दिया गया है।

वन अधिनियम पारित होने के बाद वनकर्मी एवं अधिकारी अपनी मनमानी करते रहते हैं। यदि कोई वनवासी वन क्षेत्र से लकड़ियां आदि बटोर कर लाता है तो यहाँ के कर्मचारी यह आरोप लगाते हैं , कि यह सामग्री तोड़कर या काटकर लायी गयी है। वन कर्मचारी वनवासियों द्वारा एकत्र की गयी सामग्री को छीन लेते हैं या धन अथवा कुछ लाभ देने के बाद छोड़ देते हैं।[1]

पाठा क्षेत्र की जलवायु मध्य भारत की जलवायु से प्रभावित है। यहाँ गर्मियों में अधिक गर्मी पड़ती है जबकि सर्दी अपेक्षाकृत कम पड़ती है। दिसम्बर तथा जनवरी माह सर्दी से प्रभावित रहते हैं। पठारी क्षेत्र होने के कारण दिन तपन एवं उमस से भरे रहते हैं। जबकि रातें सुहावनी होती हैं । इस क्षेत्र में जल का संकट सदैव बना रहता है। यहाँ तक कि कुआँ के निर्माण में 20,000 से 30,000 रूपये तक व्यय हो जाते हैं।[2] गर्मी के दिनों में यहाँ का जिला प्र-ाासन बैल-गाड़ियों ,ट्रकों एवं रेलवे के माध्यम से पेयजल उपलब्ध कराने की

---

1 निगम सुधीर ,(लेख) वन विभाग कब तक करेगा कोलों का शोषण कानपुर ,दैनिक आज , 10 दिसम्बर 1996

2 डी.आर.डी.ए. से प्राप्त दरें ।

व्यवस्था करता है। गर्मियों में यहाँ के निवासी चार या पाँच मील दूर गन्दें नालों या तालाबों से पीने का पानी लाते हैं । इस पेयजल संकट को दूर करने के लिए 1961 में तत्कालीन जिला परिषद बांदा के अध्यक्ष ने पाठा क्षेत्र के 191 ग्राम समूहों के लिए वृड्द पेयजल योजना बनाने का बीड़ा उठाया था । यह योजना 1973 में बनकर तैया हुई। यह योजना 'पाठा जल प्रदाय' योजना के नाम से जानी जाती है। एशिया में यह सबसे वृहद जल प्रदाय योजना रही है। लेकिन इस योजना के तहत आने वाले बहुत से गाँवों में आज भी पानी का घोर संकट है।[1] इसके दो कारण हैं (1) जल प्रदाय को संचालित करने वाली 'पयस्वनी' नदी में जल की कमी (2) कर्मचारियों की निष्क्रियता । इस प्रकार यह जल प्रदाय योजना असफल हो गयी है। जल प्रदाय की असफलता का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि पाठा के अनेक गांवों में लोगों ने पाइप लाइनें उखाड़ डाली हैं तथा ग्रामीणों द्वारा पाइप लाइन उखाड़ कर बेंच डाली गयी है। राज्य सरकार की पेयजल योजना के तहत सम्पूर्ण क्षेत्र में हैंण्डपम्प लगवाये गये हैं । किन्तु कमीशन खोरी एवं भ्रष्टाचार के परिणामस्वरूप सही बोरिंग न हो पाने के कारण 90 प्रतिशत हैण्डपम्प पानी नहीं दे रहे हैं । अधिकांश हैण्डपम्पों का सामान ग्रामीणों द्वारा गायब कर दिया गया है। शेष बचे हुए सामान की समुचित सुरक्षा का प्रबन्ध न होने के कारण सामान खराब हो रहा है। व्यावहारिक रूप से खराब पड़े हैण्डपम्पों को विकास खण्ड कार्यालय के अभिलेखों में ठीक दशा में इन हैण्डपम्पों को प्रदर्शित किया गया है।[2] इस प्रकार पाठा आज भी प्यासा का प्यासा बना हुआ है।

2.11 यातायात के संसाधन

यातायात की दृष्टि से पाठा क्षेत्र जनपद के अन्य दूसरें क्षेत्रों की तुलना में काफी पीछे है। पक्की सड़कों के नाम पर चित्रकूट-मानिकपुर ,चित्रकूट-बाँदा ,चित्रकूट-राजापुर एवं चित्रकूट-इलाहाबाद चार मार्ग विद्यमान हैं। इसके अतिरिक्त मार्गो को जोड़ने के अधिकांश

---

1 डोगरा भारत ,'पाठा' सूखे खेत प्यासे दिल , पत्रिका (1992) पृ.सं. 20

2 सम सामयिक (लेख) दैनिक जागरण कानपुर , 30 मई 1997

मार्ग कच्चे हैं। वन विभाग ने जिन क्षेत्रों में मार्ग बनवाये हैं वह भी कच्चे हैं। कच्चे मार्गो में मोरंग की पर्त बिछाने से बरसता के दिनों में आवागमन में कोई विशेष परेशानी नहीं होती है। वन विभाग के मार्गो का केन्द्र बिन्दुवार मानिकपुर है जहाँ से रानीपुर ,मारकुण्डी एवं बरगढ़ के लिए सड़के बनी हैं। रानीपुर के पास से रजौवहा होते हुए रीवां के लिए एक कच्चा मार्ग बनाया गया है। मानिकपुर के जंगलो में आज भी अधिकांश स्थानों के लिए कोई भी सम्पर्क मार्ग नहीं है। मात्र पगडंडियाँ ही एक स्थान को दूसरे स्थान से जोड़ती हैं । 1981 से खाद्यान्न योजना के तहत कुछ नये कच्चे मार्गो का निर्माण किया जा रहा है। इसके बावजूद मार्ग अपर्याप्त है। पाठा क्षेत्र में यातायात की दूसरी सुविधा रेल-व्यवस्था भी है। इलाहाबाद-मुम्बई मार्ग पर अवस्थित मानिकपुर जक्शन पाठा का सबसे प्रमुख रेलवे स्टेशन है। मानिकपुर से मुम्बई की ओर जाने वाले मार्ग पर बारामाफी ,मारकुण्डी , टिकरिया एंव इटवा डुडैला (मात्र हाल्ट) नामक रेलवे स्टे-शन पाठा के लोगों को अपने विस्तृत वन-प्रान्तर तक पहुँचाने में सहायक है। मानिकपुर के पूर्व में पनहाई रेलवे स्टे-शन एवं बरगढ़ पाठा के लोगों के लिए उपयोगी है। मानिकपुर से झांसी शाखा लाइन पर बहिलपुरवा एवं चित्रकूट स्टेशन मुख्यतया आदिवासी पाठा क्षेत्र में ही स्थित है। रेल लाइन जिन क्षेत्रों में यातायात की सुविधायें सुलभ करती हैं , उन क्षेत्रों में सड़क यातायात की उपेक्षा की गयी है। विशेषकर इटवा-डुडैला ,पनहाई एवं बहिलपुरवा के जाने के लिए कोई अच्छी सड़क नहीं है। रेल यातायात की स्थिति यह है कि इलाहाबाद-इटारसी पैसेन्जर गाड़ी जो पनहाई और हटवा-डुडैला के आदिवासियों को नामपत्र की यातायात की सुविधा प्रदान करती है। कुछ समय पूर्व से मानिकपुर से सतना के बीच चार डिब्बे वाली सवारी गाड़ी दिन में दो बार आने जाने की सुविधा प्रदान कर रही है। इस गाड़ी को कोलों की गाड़ी के नाम से जाना जाता है। मानिकपुर-झाँसी पैसेन्जर , मानिकपुर तथा बहिलपुरवा के आदिवासियों को बाँदा तक जाने में सहायता करती है। इस प्रकार पाठा क्षेत्र में रेल लाइन होने के बावजूद पैसेन्जर ट्रेनों की कमी के कारण यहाँ के लोग रेल यातायात का पूरा लाभ नहीं उठा पाते हैं ।

जिन-जिन क्षेत्रों में सड़कें है और राजकीय परिवहन निगम की बसें चलती है वहाँ के लोग पाठा के अन्य आदिवासियों की तुलना में अधिक जागरूक तथा व्यवहारकुशल हैं।

सम्पूर्ण पाठा क्षेत्र में वायुमार्ग के यातायात की सामान्य सुविधा उपलब्ध नहीं है।

2.12 पाठा के आदिवासी कोल

पाठा के मूल निवासी कोल आदिवासी है। द्रविण काल के पूर्व से कोल यहाँ समग्र परिवेश के अंग रहे हैं । वन प्रान्तर में रहने वाले ये आदिवासी यहाँ के प्रकृति पुत्र के समान हैं। वह स्वयं भी अपने को वन-पुत्र समझते रहे हैं। अतः उनके इस सम्पूर्ण वन क्षेत्र पर अपना एकाधिकार मानना अनुचित नहीं है। वनोपज से अपनी आजीविका चलाने वाले कोलों ने कभी अपने क्षेत्र की भूमि तथा वनों को अपने जीवन से अलग नहीं माना है। लेकिन ब्रिटिश काल में जमीदारी प्रथा के प्रारम्भ होने पर क्षेत्रीय जमीदारों द्वारा गैर आदिवासी लोगों के भू-स्वामित्व पर अपना आधिपत्य जमाना प्रारम्भ कर दिया था। आज यह स्थिति है कि वे लोग , जो भूमि के मालिक होते थे , बेगाने एवं मजदूर बन कर रह गये हैं । आज वे लोग उनके स्वामी बन गये हैं जो जमीदारों या ठेकेदारों के रूप में अंग्रेजी शासन काल में पाठा क्षेत्र में पहुँचे थे।

पाठा क्षेत्र के अन्तर्गत दो तहसीलें (मऊ एवं चित्रकूट) तथा पाँच विकास खण्ड (मानिकपुर ,रामनगर ,चित्रकूट , पहाड़ी तथा मऊ) सम्मिलित है। कोल आदिवासी अधिकतर मानिकपुर , मऊ एवं चित्रकूट क्षेत्रों में रहते हैं । सर्वाधिक कोलों की संख्या मानिकपुर एवं न्यूनतम संख्या चित्रकूट में है। विकास खण्ड मानिकपुर के 43 ग्राम सभाओं में से 10 ग्राम सभायें कोल आवासित हैं । इसी क्षेत्र की मानिकपुर ,ऊंचीडीह , रानीपुर ,केहुनिया तथा रूकमा खुर्द की 35 ग्राम सभाओं में लगभग 72.00 प्रतिशत कोल निवास करते हैं। इसी प्रकार मऊ ब्लाक की 104 ग्राम सभाओं में से 28 ग्राम सभाओं में एवं चित्रकूट ब्लाक के 99 ग्राम सभाओं में से 7 ग्राम सभाओं में कोल निवास करते हैं। मऊ

क्षेत्र के दक्षिणी एवं पूर्वी भू-भाग में कोल निवास करते हैं । मऊ की तीन ग्राम सभायें कोल बाहुल्य हैं। चित्रकूट में ऐसा कोई भी गाँव नहीं है जिसे कोल बाहुल्य कहा जा सके।

पाठा क्षेत्र में कोलों के अतिरिक्त उच्च ,पिछड़ी एवं अनूसूचित जातियों के लोग निवास करते हैं। उच्च जातियों के अंतर्गत ब्राह्मण ,क्षत्रिय ,वैश्य एवं कायस्थ जातियां सम्मिलित हैं। पिछड़ी जातियों में मुख्यतया अहीर ,कुर्मी ,अरख (खंगार) एवं नाई जातियाँ निवास करती हैं। अनुसूचित जाति के अन्तर्गत कोरी ,खटिक ,धोबी आदि प्रमुख हैं । कुछ ईसाई धर्मावलम्बी भी मानिकपुर एवं बरगढ़ क्षेत्रों में आवासित हैं। ये सभी ईसाई धर्मान्तरित हैं। इस क्षेत्र में आदिवासियों की एक जाति 'गोड' भी पायी जाती है परन्तु इनकी संख्या बहुत कम है। इस क्षेत्र के मूल निवासी कोल जनजाति के ही लोग हैं।

अध्याय-3

3. आदिवासी कोलों का सामाजिक पार्श्व

3.1 कोल

3.2 कोल शब्द की व्युत्पत्ति

3.3 कोलों का उद्‌भव : पौराणिक गाथाएँ

3.4 कोलों की शारीरिक संरचना

3.5 कोलों का जातीय संगठन

3.6 कोलों की आवासीय व्यवस्था

3.7 कोलों में शिक्षा

3.8 कोलों का रहन-सहन एवं पहनावा

3.9 कोलों के आभूषण

3.10 कोलों का आहार एवं पोषण

3.11 मद्यपान एवं मादक पदार्थ

3.12 मनोरंजन

3.13 कोलों का सम्पर्क सूत्र

3.14 कोलों का सामाजिक संगठन

3.15 कोलों का सांस्कृतिक संगठन

3.16 पंचायत संगठन

3.17 आर्थिक एवं राजनीतिक परिवेश

3. आदिवासी कोलों का सामाजिक पार्श्व

पूर्व अध्याय में प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में प्रयुक्त अध्ययन पद्धति की विवेचना की गयी है। प्रस्तुत अध्याय में आदिवासी कोलों के सामाजिक पार्श्व का विश्लेषण किया गया है।

3.1 कोल

मध्य भारत की प्रायः सभी जनजातियों प्रोटो-आस्ट्रेल्वायड प्रजाति लक्षणों को प्रस्तुत करती है। इनका एक प्रतिनिधि समूह कोलारियन प्रकार कहा गया है। कोलारियन के अन्तर्गत मुण्डा, हो, सन्थाल, जुआँग आदि आते हैं। कोल इसी प्रजाति समूह का प्रतिनिधित्व करती है।

'कोल' कोलेरियन परिवार की जनजाति है।[1] यह मुण्डा, हो, सन्थाल, भूमिज, तमरिया, जुआंग परिवार की जनजातियों से जुड़ी है।[2] कोल जनजाति के लोग मध्य प्रदेश, उड़ीसा, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश में फैले हुए हैं। मानवशास्त्रियों के अनुसार उत्तर प्रदेश की जनजातीय जनसंख्या के प्रतिशत का 25.00 प्रतिशत जनसंख्या कोल जनजाति की है, जो अन्य जनजातियों की तुलना में अधिक है।[3] उत्तर प्रदेश में इस जनजाति के लोग वाराणसी, मिर्जापुर, इलाहाबाद , बाँदा एवं चित्रकूट जनपदों में पाये जाते हैं। कोलों को सभी राज्यों में अनुसूचित जनजाति माना गया है, **केवल उत्तर प्रदेश ही ऐसा राज्य है, जहाँ इन्हें अनुसूचित जाति के अन्तर्गत रखा गया है।** कोलों का सबसे अधिक केन्द्रीयकरण मध्य प्रदेश - उत्तर प्रदेश राज्यों में हुआ है। मध्य प्रदेश में जबलपुर व कटनी जनपदों में सर्वाधिक 'कोल' पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश की सीमा से लगे पन्ना एवं सतना जनपदों में भी कोल पाये जाते हैं।

---

[1] रसल आर.पी. - द ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स ऑफ द सेन्ट्रल प्राविंसेज ऑफ इण्डिया दिल्ली, राजधानी बुक सेन्टर, पृ0 सं0 50।

[2] हसन अमीर - ए ब्रान्च ऑफ वाइल्ड फ्लावर, इथनोग्राफिक्स एण्ड फोम कल्चर सोसायटी, उ0प्र0 लखनऊ, पृ0सं0 123 ।

[3] पाण्डेय, राम मनोहर, जनजातीय विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धियों एवं आकांक्षाओं के सामाजिक पक्ष (1981), शोध प्रबन्ध, अप्रकाशित , पृ0सं0 45 ।

3.2 कोल शब्द की व्युत्पत्ति

"कोल" शब्द की व्युत्पत्ति के बारे में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। संभवतः छोटा नागपुर के खरियों द्वारा मुण्डा लोगों को 'कोरार' नाम दिया गया था। 'कोरार' कोल शब्द के अत्यन्त निकट है। संस्कृत में कोल शब्द का अर्थ 'रवस्सी सुअर' भी होता है। कुछ लोगों का मत है कि यह शब्द सामान्यतः तिरस्कार सूचक है, जिसे संभवतः आर्यो द्वारा द्रविणों के लिए प्रयुक्त किया गया होगा। कुछ विद्वानों के अनुसार 'कोल' शब्द का अर्थ है 'सुअर मारने वाले'। अन्य लोगों के अनुसार कोल शब्द मुण्डारी भाषा से उत्पन्न हुआ है। 'हो', होरो जिसका तात्पर्य होता है 'आदमी' जोकि कुछ समय बाद 'कोरों' या 'कोल' के रूप में परिवर्तित हो गया।[1] बिहार की मुण्डा जनजाति से भिन्न उत्तर प्रदेश या मध्य प्रदेश के कोल बिना किसी हिचकिचाहट के स्वयं को कोल कहते हैं। इनकी औरते "कोलिन" कही जाती हैं, और इनके जिस स्थान पर अनेक घर होते हैं उस स्थान को 'कोलान' की संज्ञा दी जाती है।

भारत की जनजातियों में कोल जनजाति का प्रमुख स्थान है। भूमिज, सन्थाल, हो और मुण्डा जनजातियों के समान कोल जनजाति की भी अपनी पहचान है। यह जनजाति आस्ट्रिक भाषी लोगों से सम्बन्धित मानी जाती है। हेडन के अनुसार - कोलों को पूर्व द्रविण जनजाति समूह में रखा जा सकता है।[2]

'कोलो' को छोटा नागपुर के मुण्डाओं की एक शाखा के रूप में भी जाना जाता है। किन्तु निश्चित रूप में यह कहना कठिन है कि उत्तर प्रदेश में पाये जाने वाले कोल किसी वृहद जनजातीय वर्ग से सीधे जुड़े हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि उनकी शारीरिक संरचना एवं सांस्कृतिक गुण-दोष छोटा नागपुर तथा मध्य प्रदेश की मुण्डा, हो, सन्थाल आदि जन-जातियों से काफी मिलते जुलते हैं।

---

[1] क्रुक्स डब्ल्यू - द ट्राइब एण्ड कास्ट्स ऑफ नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज एण्ड अवध, वाल्यूम III, दिल्ली कास्मों पब्लिकेशन्स, पृ.सं. 294-315 ।
[2] हेडन ए.सी. - रेसेज ऑफ मैन ।

3.3 कोलों का उद्भव : पौराणिक गाथाएं

कोलों के उद्भव एवं विकास की कहानी, इतिहास से अलग, विविध प्रकार की किवदन्तियों एवं पौराणिक कथाओं में भी देखी जा सकती हैं। ये कथाएं आज भी कोलों की संस्कृति एवं जीवन पद्धति से जुड़ी हुई हैं। एक गाथा के अनुसार – 'लुनार' प्रजाति के पाँचवे राजा ययाति ने अपनी राजधानी का बंटवारा पांच पुत्रों के मध्य किया, उनके पुत्रों के वंशजो में से एक दक्षिण दिशा में जाकर बसा। उसकी दसवी पीढ़ी में चार भाई हुए – पान्डय, कोरल, चोल और कोल । इसी कोल शासक की सन्तानों को "कोल" जनजाति के नाम से जाना जाता है।

इसी प्रकार से मुण्डा लोककथा में कोलो की उत्पत्ति के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। एक कथा के अनुसार – स्वयंभू या स्वतः उत्पन्न आटाबोरन और सिंह बोगा ने एक लड़का और एक लड़की उत्पन्न करके दोनों को एक गुफा में रखा। गुफा में उन्होंने चावल की शराब बनाना सीखा। शराब के द्वारा वे अपनी भावनाओं पर काबू पाते थे, कुछ समय पश्चात् उनके बारह पुत्र एवं बारह पुत्रियों का जन्म हुआ, इन्हीं सन्तानों के द्वारा इस दुनिया की रचना की गयी। सिंह बोगा के आदेशानुसार इन जोड़ो को भिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थ चुनने के लिये प्रेरित किया गया। प्रथम एवं द्वितीय जोड़े ने भैंस और बैल के माँस को पसन्द किया, इस जोंड़े द्वारा उत्पन्न सन्तानें कोल और भूमिज कहलाएं। इसके अतिरिक्त अन्य जोड़े ने शाकाहारी भोजन पसन्द किया, अतः इनकी सन्तानों को ब्राह्मण एवं क्षत्रिय नाम से सम्बोधित किया गया। कुछ जोड़ो ने मछली एवं मांसाहारी भोजन पसन्द किया और वे 'शूद्र' कहलाएं। इसी प्रकार केवल कुछ ने मछली को ही भोजन के लिए पसन्द किया और वे 'भुइया' कहलाए। दो जोड़ो ने 'सुअर' पसन्द किया और वे संथाल कहलाएं। इसके अतिरिक्त एक जोड़ा 'घसिया' कहलाया, यह जोड़ा भोजन हेतु दूसरों पर आश्रित रहता था।

मिर्जापुर के कोल अपने विषय में यह मानते हैं कि वे लोग 'रींवा' राज्य के कुटली क्षेत्र के वरदी राजा के वंशज हैं। वरदी राजा के वंश में नान्ह नामक व्यक्ति ही इनका

पूर्वज था। एक बार कुटली में सर्वनाश हुआ, तब से वह मिर्जापुर के पठारी क्षेत्र में आकर बस गये। इस क्षेत्र को 'कालान' नाम से जाना जाता है। वाराणसी, बाँदा, चित्रकूट तथा इलाहाबाद जनपदों में निवास करने वाले कोल समुदाय के लोग अपने आपको 'शबरी' की सन्तानें मानते हैं। कोलों के अनुसार शबरी चित्रकूट के समीप निवास करती थी। वहीं उसने पुरूषोत्तम राम एवं उनके अनुज लक्ष्मण को जूँठे बेर खिलाएं थे। शबरी की उस ऐतिहासिक भूमिका के कारण उत्तर प्रदेश के मुसहर, सहरिया एवं भील भी अपने को शबरी के वंशज कहलाने में गौरव का अनुभव करते हैं।

3.4 कोलों की शारीरिक संरचना

'हेडन' ने कोल जातियों के लोगों की पहचान निम्नांकित शब्दो में व्यक्त की है। कोलों का रंग काला, बाल काले एवं छल्लेदार, शरीर की लम्बाई मध्यम (लगभग 1.57 से 1.61 मीटर तक), होंठ मोटे, शरीर पर कम बाल, कूल्हे मजबूत और आँखें चमकदार होती हैं।

'कर्नल डाल्टन' ने सिंह भूमि के 'हो' लोगों और लोहार - डागा के मुन्डारियों के विषय में जो कुछ कहा है, वह 'क्रुक्स' के अनुसार मिर्जापुर के कोलों में भी पाया जाता है।

सिंह भूमि के 'हो' तथा लोहार - डागा जिले के दक्षिणी परगना के मुण्डारी लोग, भूमिज, संथाल लोगों की अपेक्षा अधिक अच्छे हैं। पुरूषों की लम्बाई पाँच फुट से छः इंच तक होती है। महिलाओं की ऊँचाई प्रायः पांच फुट के आस-पास होती है। कुछ पुरूषों की नाक लम्बी होती है। लड़कियाँ प्रायः सुडौल तथा सुन्दर होती हैं। इनकी नाक लम्बी होती है। 'क्रुक्स' के अनुसार मिर्जापुर के कोलों का रंग गहरा काला और चेहरा रूखा सा, ठीक उसी प्रकार का होता है जैसे मांझी और खखवारों का होता है।

जनपद चित्रकूट के कोल प्रायः काले रंग के होते हैं, पुरूषों की औसतन लम्बाई 1.60 मीटर तथा महिलाओं की लम्बाई 1.50 मीटर तक होती है। इनके बाल सीधे,

घुमावदार और चमकीली होती हैं। कान छोटे और आकार में घुमावदार होते हैं। अधिकांश कोलों की नाक चौड़ी तथा चपटी होती है। होंठ मोटे प्रकार के होते हैं। पुरूष प्रायः दुबले पतले होते हैं। बाल विवाह, कड़ी मेहनत और कुपोषण के कारण प्रायः महिलाएं अपनी उम्र से अधिक बड़ी दिखती हैं।

कोलों की शारीरिक संरचना में वर्तमान में अनेक परिवर्तन परिलक्षित होने लगे हैं। कुछ कोल परिवारों के पुरूष एवं महिलाओं की त्वचा का रंग 'गोरा' एवं नाक चपटी के स्थान पर उभरी हुई देखने को मिलती हैं। ये लक्षण जीन्स परिवर्तन के कारण सम्भव हुए हैं।

3.5 कोलों का जातीय संगठन

कोलों का जातीय संगठन अन्य जातियों की ही भाँति है। कोल कई उपजातियों में विभक्त हैं। वाराणसी और मिर्जापुर जनपदों के कोल जोकि ' क्रुक्स' के अनुसार बंगाल के रजवाड़ में अपना मूल खोजते हैं, के समान ही इलाहाबाद और चित्रकूट में कोलों की रवतिया और ठकुरिया दो उप जातियाँ हैं। इन दो के अतिरिक्त कोलों की अन्य उपशाखाएं हैं जिसके सदस्य अधिकतर चित्रकूट जनपद में पाये जाते हैं। रवतिया कोल अपना नाम संस्कृत भाषा के शब्द रावत अर्थात् राजा से उत्पन्न मानते हैं। क्रुक्स के अनुसार वे 'देहाइत' अथवा ग्रामीण कोलों के रूप में भी जाने जाते हैं। कोलों की दूसरी उपशाखा 'महतियार' जो मेहतो या महतो अर्थात् नेता शब्द से बना है। 'ठकुरिया' शब्द की व्युत्पत्ति ठाकुर शब्द से हुई है। मवइया उपशाखा के विषय में ठीक से कह पाना दुरूह है। इसके अतिरिक्त कोलों की उपशाखाओं में भी कई अन्य शाखाएं पायी जाती हैं, इनमें मुख्यतः कठौतिया, गोरिया, मुण्डा, महतियार आदि हैं। इनके अनुसार बनाज, बखार, बिन्द, (जिसमें बिन्द, हरवैयया बिन्द, हनरीयनवा बर्तन बनाने वाले) आदि कोलों की श्रेणी में आते हैं। भोजन एवं रक्त की शुद्धता की दृष्टिकोण से रवतिया अपने को उच्च्य सामाजिक स्तर का मानते हैं। ठकुरिया को ठाकुर से उत्पन्न होने के कारण वर्ण शंकर एवं निम्न सामाजिक स्तर

का मानते हैं। सुअर आदि का मांस भक्षण करने के कारण भी ठकुरिया निम्न स्तरीय माने जाते हैं।

3.6 कोलों की आवासीय व्यवस्था

भोजन, वस्त्र और निवास मानव की मूलभूत आवश्यकताएं हैं। मानव अपनी इन आवश्यकताओं को अनेक कार्यो के सम्पादन के फलस्वरूप पूरा कर पाता है। ऐसे ही कार्यो में मानव का 'घर' या 'प्रश्रय स्थल' जिसमें मानव अपनी सुरक्षा पा सके, प्रमुख हैं। मानव के क्रियात्मक कार्यो में महत्वपूर्ण कार्य आश्रय स्थल का निर्माण ही रहा है, जिसमें वह अपनी भौतिक आवश्यकताओं के साथ ही साथ जैविकीय, मानसिक एवं शारीरिक सन्तुष्टि प्राप्त कर सके। मानव जब शिकार से तृप्त हो जाता है, थक कर चूर हो जाता है, असह्य धूप, गर्मी और बरसात से परेशान हो जाता है, तब घर या छप्पर या मकान ही उसका आश्रय बनता है। यही वह स्थान होता है, जहाँ उसे मानसिक सुख की प्राप्ति होती है जो अन्यत्र संभव नहीं है।

पूर्व से ही जनजातीय समुदाय की आवासीय व्यवस्था अलग प्रकार की रही है। आदिवासियों के बसासत प्रतिमान अन्य समुदायों के बसासत प्रतिमानों से सर्वथा भिन्न प्रकार के रहे हैं। हम आज जिस प्रकार से आवासीय व्यवस्था का विभाजन- नगरीय एवं ग्रामीण आधारों पर करते हैं वैसा विभाजन जनजातीय समाजों की बस्तियों में नहीं है। इनके आवास प्राकृतिक वातावरण में परम्परागत तकनीकी पद्धति से निर्मित होते हैं।

जनजातीय बस्तियाँ अधिकाशंतः पवर्तीय दुर्गम क्षेत्र या वनांचलों में दूसरे समुदाय से दूर एकान्त में रही है। इनकी बस्तियाँ आज के गाँव के 'मणरों' या 'पुरवों' की भाँति लघु आकार की होती थी, किन्तु आज जनजातीय समाज की परम्परागत बसासत का स्वरूप बदला है। अब इनकी बसासत का प्रभुत्व सम्पन्न वृहत समाज की बस्ती, ग्राम और नगरों में धीरे-धीरे समाहित होती गयी हैं। उत्तर प्रदेश के कोलों के अधिवास प्रतिमान आज इसी के अनुसार पाये जाते हैं।

उत्तर प्रदेश पंचायत राज अधिनियम के अनुसार प्रदेश में गांव, गांव सभा तथा ग्राम पंचायतों में समायोजित कर दिये गये हैं। एक गांव सभा में कम से कम 1000 जनसंख्या होनी चाहिए, अतः ऐसे बहुत ही कम गांव शेष बचे हैं जहाँ पर मात्र कोल निवास करते हों। आज के कोल अधिवासों में गांवों की जनसंख्या अपेक्षाकृत अधिक होती है। पाठा के अधिकांश गांव मजरों को मिलाकर बनाएं गये हैं। इन गांवों में कोल मजरों की संख्या अधिक है।

पाठा क्षेत्र के गांवों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है :-

➔ प्रथम श्रेणी में वे गांव आते हैं जो घने जंगलो के बीच आबाद हैं। इनके आस-पास दूसरी जाति के लोगों की बस्तियाँ नहीं हैं। ऐसे गांवों की जनसंख्या बहुत कम है।

➔ द्वितीय श्रेणी में उन गांवों को सम्मिलित किया गया है जोकि घने जंगलो के मध्य तो स्थित हैं, लेकिन सामान्यतः वृद्ध कृषकों के कृषित भूमि के समीप हैं। जो इन कोलों से अपनी खेती पर कृषि उत्पादन का कार्य कराते हैं। ऐसे गांवों में खेतों के मालिक स्वयं कम रहते हैं। उनके करिन्दा खेतों पर रहते हैं और कोलों पर नियंत्रण रखते हैं।

➔ तीसरी श्रेणी में वे गांव आते हैं जो हमारे भारत के चिरपरिचित गांव हैं। ये ज्यादातर घनी बस्तियों में आते हैं। पाठा क्षेत्र के चित्रकूट, मानिकपुर और मऊ में बहुत से ऐसे गांव अवस्थित हैं।

ये गाँव मूलतः गैरकोल अथवा अजनजातीय लोगों के होते हैं। इन गाँवों में कोल, गैर-कोल किसानों के यहाँ काम करते हैं। ये लोग अधिकतर बड़े किसानों या जमींदारों द्वारा बनवाये झोपड़े या घरों में उस जमीन के पास ही रहते हैं, जहाँ पर वे काम करते हैं। वे प्रायः ऐसी जगह का चुनाव करते हैं, जहाँ पास में तालाब या नाला हो। कोलों की परम्परागत बस्तियाँ, झोपड़ियों द्वारा निर्मित होती हैं। विभिन्न परिवारों की झोपड़ियाँ एक

दूसरे से जुड़ी रहती हैं जिनका एक सामूहिक आंगन होता है। अन्य गैर कोल गांवों के मकानों की भाँति इनके घरों में व्यक्तिगत मकान नहीं होते हैं। कोल प्रायः अपनी झोपड़ियों का निर्माण ऊँचाई वाले स्थानों पर करते हैं। प्रत्येक घर के समीप पेड़-पौधें लगाये जाते हैं।

कोलों की झोपड़ियों का निर्माण उपलब्ध स्थानीय निर्माण सामग्री से किया जाता है। जिसमें खर-पतवारों की अधिकता होती है। झोपड़ी की दीवारों पर कीचड़ एवं मिट्टी का मिश्रण बनाकर लेप किया जाता है। झोपडियों का झुण्ड अंग्रेजी भाषा के 'यू' अक्षर के समान होता है। सभी घरों के बीच प्रशस्त खुले स्थान को आँगन के समान कोल सार्वजनिक रूप से प्रयोग में लाते हैं।

परम्परागत तरीके से घूमन्तू प्रवृत्ति के कारण एक स्थान पर टिके रहना कोलों की प्रवृत्ति में नहीं है। नये-नये स्थानों में अपनी बस्तियाँ आबाद करना इन्हें अच्छा लगता रहा है, लेकिन अब परिस्थितियाँ बदलने से पुरानी बस्तियों को छोड़कर नयी बस्तियों के निर्माण में इनकी रूचि कम हुई है। आवास बनाने के पूर्व अपने बड़े-बूढ़ों या पुरोहित जैसे बुजुर्ग व्यक्ति से स्थान की शुद्धता एवं सुरक्षा के विषय में सहमति ली जाती है। सर्वप्रथम देवस्थान की स्थापना कर कोल अपने निवास बनाते हैं। आवास निर्माण में ये मजदूरों की सेवाओं का लाभ नहीं लेते हैं। प्रत्येक कोल अपने समुदाय के या पड़ोसियों की सहायता से अपना घर बना लेते हैं। इससे इनकी सामुदायिक एकता परिलक्षित होती है। अपनी बस्ती के सार्वजनिक पूजा स्थल के अतिरिक्त कोल लोग अपनी झोपड़ी के सामने वृक्ष के नीचे एक चबूतरे का निर्माण कर वृक्ष से सटे देव स्थान की स्थापना करते हैं। इनकी झोपड़ियों के अन्दर एंव बाहर जल निकासी की उचित व्यवस्था का अभाव होता है। इसका कारण पाठा क्षेत्र में जल निकासी की कोई समस्या नहीं है क्योंकि यहाँ प्रायः जल का अभाव रहता है। अपनी बस्ती के विस्तृत सामूहिक आँगन में कोल लोग अपना अनाज सुखाते हैं, गर्मी के दिनों में रात्रि विश्राम करते हैं अथवा किसी उत्सव पर सामूहिक नृत्यगान के लिए उपयोग करते हैं। इस प्रकार सामूहिक जीवन बिताने की दृष्टि से इनकी झोपड़ी युक्त बस्तियाँ

अनूठी होती हैं। कोलों का पारिवारिक संगठन एकाकी प्रकार का होता है। झोपड़ियों का निर्माण बहुधा कोल बरसात के तुरन्त बाद अथवा गर्मी के दिनों में करते हैं। वर्षा ऋतु में लम्बी घास की पर्याप्त उपलब्धता रहती है, इसके साथ ही टट्र बनाने के लिए लकड़ियाँ भी सुलभ होती हैं। इसलिए वर्षा के बाद का मौसम झोपड़ियों के निर्माण के लिए सर्वथा उपयुक्त रहता है।

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत एवं अटल नियम है अतः परिस्थितिवश कोलों के आवास निर्माण में भी परिवर्तन आया है। जिन स्थानों पर पत्थरों की उपलब्धता है वहाँ पत्थर एवं गारा की सहायता से मकानों का निर्माण किया जाने लगा है। पाठा क्षेत्र एक पठारी भू-भाग है, अतः पत्थर आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। किन्तु छतों का निर्माण खर-पतवारों, घास एवं वनीय छटावन से ही करते हैं। मकानों के दरवाजों का आकार छोटा होता है। जहाँ इनकी झोपड़ियाँ अन्य जातियों के लोगों के मकानों के निकट बनी हुई है। वहाँ अब खर-पतवार के स्थान पर बाँस एवं बल्लियों पर खपरैल बनाने का प्रचलन आया है। इस प्रकार कोल अपने आवासों के निर्माण में गैर कोलों का अनुसरण करने लगे हैं। कुछ स्थानों पर इन्हें कृषि योग्य भूमि प्राप्त हो गयी है। वहाँ ये पत्थर के मकान बनाकर स्थायी निवास करने लगे हैं। गत दशक में शासकीय प्रयासों से इन्हें भूमि के पट्टे एवं अनुदान मिले हैं, जिसके परिणामस्वरूप अब ये धीरे-धीरे स्थायित्व प्राप्त करते जा रहे हैं, किन्तु सरकार द्वारा दिये गये पट्टों पर क्षेत्र के दबंग लोगों और दादुओं के साथ-साथ जमींदारों द्वारा कब्जा कर लिया गया है, जिससे कोलों के नाम पर किये गये पट्टों का उन्हें समुचित लाभ प्राप्त नहीं हो रहा है।

उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा संचालित आवासीय योजना के अन्तर्गत इन्दिरा आवासों का निर्माण कराया गया है, किन्तु कोल इन आवासों को लेने में किसी प्रकार से उत्साहित दिखाई नहीं देते हैं। कोलों की मान्यता है कि इन आवासों में घटिया किस्म की सामग्री का प्रयोग किया गया है। कुछ आवासों में दरवाजे नहीं हैं, छत किसी भी समय टूट

कर गिर सकती है। पाठा क्षेत्र में बनाये गये कोल आवासों में हुए घपलों की जाँच कराने के आदेश दिये गये हैं।

3.7 कोलों में शिक्षा

पाठा क्षेत्र में शिक्षा की स्थिति अत्यन्त दयनीय है। वास्तव में बुन्देलखण्ड क्षेत्र आर्थिक विकास में प्रदेश के अन्य भागों की तुलना में तो पिछड़ा है ही, साथ में शिक्षा के क्षेत्र में भी बहुत पिछड़ा है। 1991 में प्राप्त आँकड़ों के अनुसार नवसृजित जनपद चित्रकूट में 103343 पुरूष तथा 19489 महिलाएं साक्षर थी। जनपद में पुरूषों की साक्षरता का प्रतिशत 55.6 तथा महिलाओं का 25.3 प्रतिशत है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार चित्रकूट जनपद का साक्षरता दर 66.6 है जिनमें पुरूषों की साक्षरता दर 78.75 तथा महिलाओं की साक्षरता दर 51.28 प्रतिशत है। इस प्रकार प्रदेश की तुलना में जनपद का साक्षरता प्रतिशत निम्न है। पाठा क्षेत्र में दूर-दूर बसे गांवों में प्राथमिक पाठशालाओं का अभाव है। जो हैं भी, उनके भवन और उपकरण दयनीय दशा में हैं। एक ही शिक्षक पूरे विद्यालय का संचालन करता है। इसलिए अपने बच्चों को शिक्षा दिलाने के लिए तत्पर सवर्ण या सम्पन्न लोग नगरों एवं कस्बों जैसे मानिकपुर, अतर्रा, चित्रकूट (कर्वी) एवं बाँदा भेजने के लिए विवश होते हैं। विद्यालयों का अभाव, विद्यमान विद्यालयों की दशा, अध्यापकों की अपेक्षा पूर्ण कार्य शैली तथा शासन की अरूचि के साथ-साथ शिक्षा के महत्त्व की चेतना की कमी आदि अनेक कारणों से पाठा क्षेत्र में शिक्षा की गति धीमी एवं असन्तोषजनक है। फिर भी कुछ वर्ष पूर्व कोलों के बच्चों के लिए आश्रम पद्धति के विद्यालय की स्थापना मानिकपुर में की गयी है। कुछ ग्रामों में स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा प्राथमिक विद्यालयों को संचालित किया जा रहा है। अब धीरे-धीरे कोल बच्चे विद्यालयों में प्रवेश लेने लगे हैं।

3.8 कोलो का रहन-सहन और पहनावा

एक औसत कोल के 10-15 फीट के एक कमरे वाले आवास में भोजन बनाने तथा खाने के एल्युमिनियम के कुछ बर्तनों, तीन छोटे और बड़े मिट्टी के घड़े, दो एक

बाँस की चारपाइयाँ, जिन पर बहुधा दरी आदि कुछ बिछी नहीं होती हैं, ओढ़ने के लिए मोटे चादरों तथा कुछ कपड़ो और दो एक गठरियों के अतिरिक्त कुछ नहीं होता है। एक कोल के मकान में कम्बल या रजाई होना उस परिवार की सम्पन्नता का प्रतीक माना जाता है। एक घड़े में जल, एक घड़े में कुछ दिनों के भोजन के लिए अनाज और तीसरे घड़े में यदि हुआ तो पहनने के लिए खास कपड़े जो तीज-त्योहारों पर काम आ सकें, रखे होते हैं। वनोपज से आजीविका प्राप्त करने वाले ये कोल दो-एक छोटी बड़ी कुल्हाड़ी, हँसिया, रस्सी तथा बाँस से बनी टोकरियाँ अपने घर पर अवश्य रखते हैं।

कोलों के घरों और बस्तियों के सामान्य अवलोकन से ज्ञात होता है कि इनके पास पहनने के वस्त्रों का बहुत अभाव है। कोल पुरूषों का मुख्य परिधान धोती-कुर्ता या कमीज, कंधे पर डालने के लिए लगभग दो मीटर लम्बा गमछा और साफा होता है। साफे के लिए ये छोटी पगड़ी का प्रयोग करते हैं जो सिर पर बोझा उठाते समय गद्दी का काम करती है। पगड़ी बांधने का यही गमछा उनके मुँह हाथ धोने या फिर नहाने के बाद बदन पोछने का काम करता है। गर्मियों में पुरूष शरीर के ऊपरी भाग को ढँकने के लिए केवल बनियान का प्रयोग करते हैं या फिर कुछ भी नहीं पहनते हैं। शीतकाल के दिनों में ठंड से बचने के लिए इनके पास गर्म या ऊनी वस्त्रों का अत्यन्त अभाव रहता है। आमतौर पर जाड़े के दिनों मे कुर्ते के अन्दर ये लोग फटे-पुराने या मरम्मत किये हुए कपड़े पहनते हैं । कुछ लोग अब जवाहर बण्डी या स्वेटर भी पहनने लगे हैं, लेकिन जवाहर बण्डी या स्वेटर उन्हीं कोलों को नसीब हो पाते हैं, जो कुछ सम्पन्न हैं। जोड़ों में पुरूष कभी-कभी चादर भी लपेट लेते हैं। जिसका प्रयोग वे रात में ओढ़ने के लिए भी करते हैं। नगरीय क्षेत्र युवा कोलों द्वारा पैण्ट-शर्ट का प्रयोग किया जाने लगा किन्तु ऐसे युवाओं की संख्या न के बराबर होती है।

कोल महिलाएं मोटे कपड़े की साड़ी जिसे स्थानीय भाषा में 'धोती' कहा जाता है, धारण करती हैं। अपने शरीर के ऊपरी भाग को ढाँकने के लिए वे झुल्ला या कुर्ती

पहनती हैं जो ब्लाउज के समान ही होता है। इस झुल्ला या कुर्ती में एक पाकेट लगी होती है, जिसका उपयोग कोल महिलाएं पैसे आदि रखने के लिए करती हैं। प्रौढ़ महिलाएं अपनी साड़ी या बड़ी धोती से ही ऊपर का तन भी ढँक लेती हैं। इनकी साड़ी मोटे कपड़े की अपेक्षाकृत लम्बी होती हैं, क्योंकि ये साड़ी के नीचे पेटीकोट का प्रयोग नहीं करती हैं। पेटीकोट पहनना कोल स्त्रियों के लिए सम्पन्नता का प्रतीक माना जाता है। जाड़ों में कोल स्त्रियाँ कभी-कभी मोटी चादर का प्रयोग ओढ़ने के लिए करती हैं। बच्चों के पास कपड़े और भी कम होते हैं। एक जाँघिया और एक बनियान ही मात्र कोल बच्चों का वस्त्र है। पाँच छः वर्ष के बच्चे प्रायः नंगे ही घूमा करते हैं। बहुत हुआ तो फटी साड़ी अथवा धोती का एक लंगोट या नाइलोन की चढ्ढियाँ पहन लेते हैं। सामान्य कोल परिवार की स्त्रियाँ पैरों में चप्पलों का प्रयोग नहीं करती हैं, सम्पन्न कोलों को पैरो में मोटे चमड़े का चमरौधा जूता या हवाई चप्पले पहने हुए देखा जा सकता है।

पिछले दशक में कुछ कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता कोलों को पहले की अपेक्षा अब स्थायित्व प्रदान कर रही है, जिससे इनके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अन्तर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ने लगा है। रहन-सहन तथा पहनावे के बारे में उपरोक्त विवरण सामान्य स्थिति का प्रदर्शन करते हैं, लेकिन जो कोल कस्बों या टाउन एरिया (नगर पंचायत) के समीप बसे हुए हैं। वे वस्त्रों के मामले में सचेत होते जा रहे हैं। अब वे कुर्ता के नीचे मारपीट की बन्डी या बनियान भी पहनने लगे हैं। स्त्रियाँ झुल्ला के स्थान पर ब्लाउज पहनने लगी हैं और ओढ़ने के लिए मोटी सूची चादरों का स्थान क्रमशः सस्ते कम्बल और यदा-कदा रजाई लेते जा रहे हैं। प्लास्टिक की चप्पलों का प्रयोग नवयुवतियाँ करने लगी हैं। साधारणतया ये वर्ष में एक जोड़ा वस्त्र बनवाने की स्थिति में हो गये हैं। सम्पर्क का प्रभाव वस्त्र पर ही नहीं महिलाओं के जेवरों पर भी पड़ा है। ग्रामीण अंचलों में प्रयोग में आने वाले कुछ कम कीमत के आभूषण के क्रमशः इन तक पहुँच सके हैं। गैरकोल समाज की अन्य भारतीय नारियों के समान इनकी स्त्रियाँ अब आभूषणों के मोह में फंसने लगी हैं। सोने एवं

चांदी के अलंकार तो इनके लिए आकाश कुसुम के समान हैं। फिर भी गिलट एवं शीशे के सस्ते अलंकार इनके तन पर यदा-कदा दिखाई पड़ ही जाते हैं। चूड़ियाँ तो कोल स्त्रियाँ पहनती ही हैं अन्य दूसरे अलंकारों में - नाक में बुलाक, कान में कनफूल या ऐरन, बाली, गले में माला, सुतिया या हँसुली, गुरिया, हाथ में कड़ा, बहुटा, पहुंचा कमर में करधनी और पैर में पायल, चुरवा, छड़ा प्रयोग में लाती हैं। विवाहित स्त्री की पहचान 'बिछिया' पहने होने से की जाती है। अनुमानतः कोल महिला के पास औसतन 150 से 300 रूपये तक की कीमत के बीच के आभूषण होते हैं। पुरूष एक गिलट की अंगूठी से ही सन्तुष्ट रहते हैं। कभी-कभी गले में रंगीन धागों का माला और उसके बीच में चन्द्रमा अथवा इसके समान का लाकेट पहने रहते हैं । कर्ण छेदन संस्कार के कारण कुछ कोल कानों में आजीवन 'बाला' पहने रहते हैं।

3.9 कोलों के आभूषण

भारतीय महिलाएं चाहे वे जनजातीय हो या गैर जनजातीय, आभूषणों का उपयोग करना पसन्द करती हैं। जहाँ तक कोल महिलाओं का प्रश्न है, निर्धनता के कारण इनके पास स्वर्णाभूषण नहीं होते हैं। यहाँ तक कि चांदी का उपयोग भी कम ही है। प्रायः गिलट या किसी अन्य सस्ती धातुओं के बने आभूषण पहने जाते हैं, काँच की चूड़ियाँ और मोती की मालाएं कोल महिलाओं में प्रचलित हैं। बहुत से लोग रंगीन धागों की बनी मालाएं भी पहनते हैं। सामान्य रूप में कोल महिलाओं में, शरीर के विभिन्न अंगों में धारण करने वाले निम्नांकित आभूषणों का प्रचलन है :-

आभूषण	प्रयोग (स्थान/अंग)
बुलाक	नाक
कनफूल	कान
ऐरन (बाली)	कान
माला	गर्दन

सुतिया (हँसुली)	गर्दन
गुरिया	गर्दन
बहुटा	बाँह
चूड़ियाँ	कलाई
चुड़वाँ	हाथ एवं पैर
करधनी	कमर
गुरहरा	पैर
कड़े	पैर
छड़े	पैर
हरेया	पैर
बिछिया	पैर की अँगुलियों में

प्रतिदिन पहने जाने वाले आभूषणों में सुतिया, हर्रया, कड़े और चुडवा हैं।

3.10 कोलों का आहार एवं पोषण

आम तौर पर पाठा क्षेत्र के कोलों को अब भी दो समय की रोटी ठीक से नसीब नहीं हो पाती है। वर्ष के अधिकांश दिनों में, एक समय का भोजन पाकर संतुष्ट हो जाने वाले कोल, मोटा अनाज पाकर सन्तुष्ट रहते हैं। शीतकाल के प्रारम्भ एवं ग्रीष्मकाल के आगमन के प्रारम्भिक माह में ही इन्हें दो जून की रोटी मिल पाती है, क्योंकि यह समय रबी की फसल का होता है। मोटे अनाज जैसे - ज्वार, बाजरे की रोटी, चना, मसूर की दाल एवं भात (चावल) इनका मुख्य भोजन है। कभी-कभी सबसे सस्ते और मोटे अनाज का भात इन्हें सुलभ हो जाता है, जैसे सावां, कोदो, धुनिया, एवं पसही आदि। गेहूँ की रोटियां तथा अरहर की दाल प्रमुख त्योहारों एवं शुभ अवसरों पर ही बनती है।

पाठा क्षेत्र में महुआ के वृक्षों की बहुलता है। ग्रीष्म काल में महुआ के फूल कोलों द्वारा इकट्ठे कर लिए जाते हैं, जिन्हें सुखाकर ये अपने घर के किसी कोने में डाल

देते हैं, जिनका उपयोग कोल वर्ष पर्यन्त अनाज न होने पर भोजन के रूप में प्रयोग करते हैं। महुआ की रोट एवं लपसी (महुआ और गुड़ को मिलाकर उबालने के बाद तैयार खाद्य) के रूप में बड़े चाव के साथ प्रयोग करते हैं। कभी-कभी सीधे-सीधे महुआ को उबालकर कोल भोजन के रूप में प्रयोग करते हैं। मजदूरी न मिलने के समय पर, कोल परिवार एक ही समय सूखी रोटी एवं मिर्च, नमक की चटनी से अपना गुजारा कर लेते हैं।

पेड़ों के तनों से निकलने वाली गोंद को एकत्र करके कोल, इसका प्रयोग अपने भोजन के रूप में करते हैं। कोलों के भोजन में सब्जी का प्रयोग वैभव और सम्पन्नता का प्रतीक है। जिन कोलों को सरकारी सहयता से आवास मिले हैं, वे अपने मकानों के पीछे कुछ बहुत सब्जी उगाने लगे हैं। अब कृषक कोल भी सब्जी का प्रयोग करते हैं। आमतौर पर इनका भोजन बगैर सब्जी के ही होता है। शासकीय सहायता से प्राप्त भैंस, गाय, बकरी तथा भेड़ रखने वाले कोलों को दूध के स्वाद का पता यदा-कदा ही चल पाता है। दूध उपलब्ध होने पर ये लोग प्रायः बच्चों को ही पिलाते हैं। बीमार व्यक्ति की कमजोरी को दूर करने के लिए दूध दिया जाता है। वैसे न तो कोल दूध खरीद सकते हैं, और न ही दूध खरीदकर पीने की परिपाटी ही बन पाती है जिसके पीछे आर्थिक विपन्नता प्रमुख कारण है। कोलों में 'चाय' का प्रचलन नहीं है यद्यपि इनमें से बहुत से कोल कभी-कभी बाजार जाने पर चाय का स्वाद ले लेते हैं।

बहुधा तेन्दू पत्ती बटोरने के अवसर पर कोलों को जंगलों में रहना पड़ता है, जहाँ पर सांभर, हिरन सुलभ होते हैं। वन्य जीव संरक्षण अधिनियम के विरूद्ध ये (कोल) इनका शिकार करते हैं और गोश्त का उपयोग करते हैं।

3.11 मद्यपान एवं मादक पदार्थ

कोलों में मद्यपान सामाजिक निषेध नहीं है। महुओं का प्रयोग भोजन के अतिरिक्त पेय पदार्थ के बनाने में भी करते हैं। महुओं से शराब उतारकर, कोल इसका प्रयोग सामाजिक उत्सवों जैसे - पंचायत के अवसर पर, विवाहोत्सव आदि मौके पर करते

हैं। जिस प्रकार बिहार के आदिवासी चावल एवं मध्य उत्तर भारत के आदिवासी जौ से शराब उतारते हैं उसी प्रकार को महुँए से शराब उतार लेते हैं। साधारणता ये शराब के शौकीन नहीं होते हैं।

कोल गाँजा एवं बीड़ी एवं गुटका से नशे की पूर्ति कर लेते हैं । भाँग का प्रचलन इस क्षेत्र में कम है। इनमें पान खाने का शौक नहीं है। इसके बदले में कोल गुटका या तम्बाकू खाते हैं । कुछ बुजुर्ग कोल हुक्का पीने के शौकीन है। अफीम, चरस एवं स्मैक का सेवन भी कोलों में यदाकदा दिखाई दे जाता है। चाय विलासिता की वस्तु मानी जाती है। कोल स्त्रियाँ भी गुटका और बीड़ी का प्रयोग करती हैं। महुँए की शराब का सेवल कोल स्त्रियाँ उत्सवों के अवसर पर ही करती हैं।

3.12 मनोरंजन

जनजातीय स्त्री-पुरूषों का जीवन नियमित रूप से श्रमपूर्ण है। वे कभी भी कल की चिन्ताओं से मुक्त नहीं होते हैं। वे ऐसी विभिन्न प्रकार की समस्याओं से घिरे होते हैं, जिनका समाधान नहीं होता है। बरसात और बेकारी के समय में कोलों के पास अवकाश के क्षण होते हैं। वास्तव में अवकाश के ये क्षण कोलों के लिए अवांछनीय होते हैं क्योंकि उन्हें बेकारी के इन क्षणों में जीवन यापन के लिए साहूकारों से ऋण लेना पड़ता है। यदि ये स्थितियाँ आधुनिक समाज में उत्पन्न हो जाये तो ये परिस्थितियाँ निश्चित रूप से मनोरंजन एवं खेलों के लिए उपयुक्त नहीं समझी जायेगी लेकिन कोलों का जीवन के प्रति दृष्टिकोण कुछ भिन्न होता है। वे कुछ समय के लिए चिन्ताओं और समस्याओं से मुक्त होकर, अपने आपको मधुर गीतों और नृत्य में समाहित कर लेते हैं। कोलों के मनोरंजन में उनके जनजातीय नृत्य एवं गीतों का महत्वपूर्ण स्थान है। कोल स्त्री-पुरूष एंव बच्चे गाने के बहुत शौकीन होते हैं। अधिकांशतः गायन सामूहिक रूप से वाद्य यंत्रों की संगत के साथ किया जाता है। वस्तुतः बाजा कहे जाने वाले वाद्य यंत्र सामुदायिक रूप से एकत्रित किये जाते हैं। कोलों में निम्नांकित वाद्य यंत्र प्रचलित हैं -

1. ढोलक ओर ढ़ोल

2. नगड़िया

3. झांज

4. मंजीरा

5. न्योरा

उपर्युक्त वाद्य यंत्रों के अतिरिक्त नृत्य करने वालों के पैरो में घुँघरू भी बांधे जाते हैं। वे वाद्य यंत्र प्राचीन हैं। नृत्य और गायन के कार्यक्रम प्रायः शाम को सम्पन्न होते हैं।

'नृत्य' के अतिरिक्त कोई अन्य मनोरंजन कोलों के सामने फीका है। नृत्य कोलों के लिए केवल मनोरंजन ही नहीं बल्कि जीवन की एक आवश्यकता है। कोलों के नृत्य एवं गायन में उनके जीवन से सम्बन्धित कई ऐसे पक्ष उजागर होते हैं जिनके विषय में अन्य किसी स्रोत से जान पाना असम्भव है। कोल यह तथ्य स्पष्ट करने में बिल्कुल ही नहीं झिझकते कि नृत्य सर्दियों की ठंडी रातों में पर्याप्त कपड़ों के अभाव में, सर्दी दूर करने के उद्देश्य से भी किया जाता है।

लम्बे समय तक नृत्य करते रहना नृत्य करने वाले की सफलता मानी जाती है। वाद्य यंत्रों में संगत करने वाले वादकों के लिए यह वास्तव में सहन शक्ति की परीक्षा है। पारम्परिक रूप से महिलाएं नृत्य करती हैं और पुरूष यंत्रों पर संगत करते हैं। ऐसा कहा जाता है कि पूर्व समय महिला और पुरूष में यह शर्त लगती थी कि नृत्य और वाद्य में संगत करने वाले में जो पहले थक जाता था उसे जीतने वाला प्राप्त करता था। बहुत सी कोल महिलाओं को अपने पतियों को छोड़ना पड़ता था, और उन पुरूषों के साथ रहना पड़ता था जो उन्हें जीतते थे। इसी प्रकार पुरूषों को हारने वाली महिला के साथ रहना पड़ता था। यह प्रथा सामाजिक रूप में कोलों को स्वीकार्य थी।

ऐसे अवसर कम ही हैं जब कोल नृत्य न करते हों। दशहरा, दीपावली और होली जैसे त्योहारों में नृत्य और गायन का अपना अलग आनन्द होता है। विशेष रूप से अगहन और बैशाख में 'देवी पूजा' में नृत्य और संगीत के कार्यक्रम होते हैं। इसके अतिरिक्त विवाह के अवसर पर जब दूल्हा-दुल्हन बारात के साथ आते हैं तो पूरी रात नृत्य और गायतन चलता रहता है।

नृत्य और गायन के अतिरिक्त कोलों में पुरूषों से सम्बन्धित कुश्ती, गुल्ली-डंडा, कबड्डी तथा सकवल-डंडा आदि मनोरंजन के प्रमुख साधन हैं।

3.13 कोलों का सम्पर्क सूत्र

किसी जमाने में कोलों का बाहरी दुनिया से सम्पर्क नहीं था। सामान्यतया सामाजिक सम्पर्को का दायरा अपने जनजातीय समाज तक ही सीमित थे। अब स्थितियाँ बदल रही हैं और उनके सामाजिक सम्पर्को के दायर में विस्तार हुआ है। कोलों का मुख्य व्यवसाय मजदूरी करना, जंगल से वनोपज इकट्ठा करना तथा उसे बाजार में बेचना, कृषि मजदूरी एवं कृषि का कार्य करना है। इन कार्यो के दौरान उनका सम्पर्क नगर के लोगों से, ठेकेदार - जिन्हें कोल शब्दावली में 'दादू' कहते हैं, व्यापारियों से, स्थायी प्रवृत्ति विकसित होने के कारण स्थानीय प्रशासन के कर्मचारियों, लेखपाल, सुपरवाइजर, अध्यापक, पड़ोसी कृषकों से हो रहा है। अति उपेक्षित एवं पिछड़ा क्षेत्र होने के कारण पाठा क्षेत्र में स्वैच्छिक संस्थानों की भरमार हो गयी है। जो इनके उत्थान हेतु कार्यो का संचालन कर रहे हैं। ईसाई संस्थायें, रामकृष्ण मिशन, सदगुरू सेवा संघ ट्रस्ट, सेवा समर्पण संस्था, अखिल भारतीय समाज सेवा संस्थान, महिला समाख्या,पाठा कोला विकास मंच आदि के कार्यकर्ता भी इनके सम्पर्क में आ रहे हैं।

सन् 1966 में भीषण अकाल के दौरान उ.प्र. सरकार ने पाठा क्षेत्र में एक स्थायी 'ड्राट प्रोन एरिया प्रोग्राम' कायम किया था, जो इनको अनुदान एवं अन्य सुविधाओं को प्रदान करने हेतु इनसे सम्पर्क बनाये रखते थे। अन्त्योदय, ट्राइसम, वन विभाग एवं

आपातकाल में उचित 'बन्धुवा श्रम परियोजना' के अधिकारी एवं कर्मचारी इनसे सम्पर्क स्थापित किये हुए हैं। विभिन्न योजनाओं के फलस्वरूप घने एवं वनाच्छित प्रान्तरों में कुछ बहुत सम्पर्क मार्ग बन गये हैं। जिससे इन्हें नगर आने-जाने की सुविधा सुलभ हुई है।

कोलों के दुधारू पशुओं के नस्ल उत्थान हेतु 'प्रयाग-चित्रकूट गोधन विकास' नामक अर्द्धशासकीय संस्था भी इनके सम्पर्क में आयी हुई है। खनिज पदार्थो की बहुलता ने दूर-दराज के पठारी क्षेत्रों तक द्रुत एवं भारी वाहन पहुँचाने हेतु मार्ग के निर्माण हेतु सहयता पहुँचायी है। वन विभाग द्वारा वनोपज ढोने हेतु वन प्रान्तर में मोरंग की कच्ची-सड़कों का निर्माण कराया गया है। यही नहीं कलकत्ता-मुम्बई रेलमार्ग पर अवस्थित होने के कारण रेलवे लाइन एवं स्टेशनों की सुविधा है। जनपद मुख्यालय, तहसील से जोड़ने वाले सम्पर्क मार्ग, विकास खण्ड कार्यालयों की विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत पक्के बनाये गये हैं।

3.14 कोलों का सामाजिक संगठन

ग्रामीण जीवन का सातत्य इनके जीवन शैली को तेजी से प्रभावित करता जा रहा है। इसके बावजूद कोलों के परम्परागत संगठन कमोवेश बने हुए हैं। साधारणतया कोलों के परिवार एकाकी होते हैं। परिवार का संगठन पितृ प्रधान होता है। संयुक्त परिवार बहुत कम होते हैं। कोलों में पारिवारिक खून के रिश्ते की महत्ता होती है। इनके परिवार की स्त्रियाँ स्वयं कार्य कर धन आदि एकत्र करती हैं। अतः आज अन्य समाज की महिलाओं की तुलना में कोल परिवार में महिलाओं का स्थान ऊँचा होता है। पारिवारिक एवं अन्य दूसरे कार्यो में स्वतंत्र इच्छा व्यक्त करने में ये महिलाएं सक्षम हैं। यही नहीं अपने विषय में कोल स्त्रियों को अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त है। वैवाहिक सम्बन्धों में भी इनकी महिलाओं को अपनी इच्छा प्रकट करने की स्वतन्त्रता होती है। आमतौर पर एक पत्नी विवाह में इनको अधिक विश्वास है। फिर भी बहुपत्नी प्रथा यदा-कदा दिखलाई पड़ती है। कोल परिवारों के सदस्यों की संख्या औसतन पाँच है। जिन स्थानों पर ये अन्य जातियों के साथ निवास करते हैं वहाँ संस्तरण में इनका स्थान पिछड़ी जातियों एवं नीची जातियों के बीच का है। लेकिन अपनी

जाति की स्थिति के विषय में इनकी अपनी धारणा विपरीत है। यह मात्र ब्राह्मण, क्षत्रियों से अपने को नीचा मानते हैं, अन्य जातियों से नहीं।

3.15 कोलों का सांस्कृतिक संगठन

किसी समय में कोलों की संस्कृति तथा धर्म पूर्णतया विशिष्ट प्रकार का था। इनकी संस्कृति में आदिवासी धार्मिक और सांस्कृतिक विशिष्ठता के सभी तत्व विद्यमान थे किन्तु कालान्तर में ये अपने जीवन मूल्यों, रीति-रिवाजों एवं धर्म को आदिवासी विशिष्टता तथा मौलिकता को खोते गये। एक लम्बे अरसे से हिन्दूकरण की प्रक्रिया बहुत तेजी से इनके जीवन में प्रवेश करती गयी। मूलतः आदिम आत्मवाद में विश्वास करने वाले कोलों को एक दीर्घकाल तक देश के प्रबलतम धर्म- हिन्दू ब्राह्मणवादी धर्म के प्रभाव में रहना पड़ा है। विभिन्न हिन्दू देवी देवताओं में इनका विश्वास बढ़ा है। ब्राह्मणवादी परम्परा के गहरे प्रभाव के कारण राम-कृष्ण, शिव-पार्वती और हनुमान आदि अवतारों और देवी देवताओं को ये लोग मानने एवं पूजने लगे हैं, किन्तु आज भी इनका अपने वनवासी देवी देवताओं में गहरा विश्वास रहता है। हिन्दू देवी-देवताओं की भांति इनके अनेक देवी-देवता हैं, जैसे दूल्हा देव, भैरव बाबा, भूमियार, भगत बाबा, गरैया देवी, बिरहा बाबा आदि प्रमुख स्थानीय देवता है। बीमारी दूर करने के लिए मवइया कोलों द्वारा पूजे जाने वाले भून्या बाबा प्रमुख हैं। पाठा के सभी कोलों में दूल्हादेव का पूजन सार्वजनिक स्थलों में किया जाता है। पाठा क्षेत्र में 'भगत बाबा' का स्थान भी ऊँचा है। देवियों में इनकी प्रमुख देवी ''माँ शारदा'' ''दाखिनी देवी'' एवं ''काली'' प्रमुख हैं।

कोलों की पूजा अर्चना की विधि सरल है। साधारणतया देखा जाता है कि माला फूल चढ़ाकर, अगरबत्ती जलाकर, नारियल फोड़कर देवी अथवा देवता की अर्चना की जाती है। प्रसाद के रूप में प्रायः पान, सुपाड़ी, बतासा, मलीदा (बाजरे की रोटी में घी गुड़ मिलाकर), रोटी-मीठी पूड़ियाँ चढ़ाते हैं। 'भूत बाधा' अथवा बीमारी दूर करने के लिए मुर्गा अथवा बकरे की बलि दी जाती है, जो उनके विशिष्ट जाति या स्थानीय देवता ही गृहण

करते हैं। इन्हीं देवों को मदाइन-महुआ की शराब भी भय-बाधा दूर करने के लिए अर्पित की जाती है। ऐसे देवताओं की उनके लौकिक जीवन में बहुत महत्ता है।

हिन्दुत्व के प्रबल प्रभाव से अब कोल भी विशेष अवसरों पर कथा, कीर्तन, भागवत एवं रामायण का पाठ सुनने एवं करवाने लगे हैं। आमतौर पर इनके जीवन में हिन्दुओं के धार्मिक ग्रन्थों का कोई महत्व नहीं है। इसके दो प्रमुख कारण हैं - प्रथम तो इनकी मौलिक धार्मिक परम्परा, संस्कृत भाषा पर आधारित ब्राह्मणवादी परम्परा नहीं हैं। मूलतः कोल प्रकृति के निकट रहने वाली, जनतान्त्रिक धार्मिक एवं सांस्कृतिक परम्परा के अंग हैं। द्वितीय यहाँ के सवर्ण इन्हें अछूत मानते हैं, जिससे न इनमें शिक्षा का प्रसार हो पाया है न ही ये धार्मिक ग्रन्थ ही रख पाते हैं। इसीलिए व्यवहार में ये स्थानीय देवी देवताओं में विश्वास रखते हैं। भूत-प्रेत सम्बन्धी विश्वास भी इनमें प्रबल हैं। लेकिन हिन्दू धर्म के अनेक अन्ध विश्वासों ने इनके मन में प्रवेश कर लिया है। ये 'दिशा-शूल' एवं 'साइत' जैसे हिन्दू अन्ध विश्वासों को अपना चुके हैं।

इनके द्वारा मनाये जाने वाले तीज त्योहारों में गुडियाँ (सावन के अमावस के दिन मनायी जाती है), हरछठ (भाद्रमास के कृष्णपक्ष में छठें दिन मनायी जाती है), तीज (भाद्रमास में अमावस के तीसरे दिन मनायी जाती है) प्रमुख हैं। अब ये हिन्दू धर्म मानने वाले लोगों के सम्पर्क में आने के कारण नवदुर्गा, रामनवमी, खिचड़ी, फगुआ या होली, दीवाली, सतुआ सन्क्रान्ति भी मनाते हैं।

जीवन से सम्बन्धित संस्कारों में जात-कर्म कर्ण छेदन (जो छठी के दिन अथवा मकर संक्रान्ति के दिन किया जाता है), पसनी अन्न प्रासन्न, मुण्डन एवं विवाह संस्कार प्रमुख हैं। इनके यहाँ मृत्यु संस्कार बहुत कुछ हिन्दुओं की भाँति ही सम्पादित होते हैं। ये शव का गाँव से दूर जंगल में ले जाकर अग्नि को समर्पित कर देते हैं। इसके पश्चात शुद्धि करते हैं। ऐसे प्रमाण मिलते हैं, जिससे ज्ञात होता है कि कोलों के अपने पुराने जनजातीय समाज के जीवन सम्बन्धी संस्कार थे, जिससे ज्ञात होता है कि कोलों के अपने

पुराने जनजातीय समाज के भी जीवन सम्बन्धी संस्कार थे, किन्तु हिन्दू धर्म के प्रभाव के कारण कालान्तर में इन्होंने भी वैदिक धर्म के संस्कारों को अपना लिया है। पाठा के कोल सीधे स्वभाव एवं जनजातीय परम्परा से प्रभावित होने के कारण 'किरिया' या 'कसमों' में अधिक विश्वास करते हैं। जब यह 'गंगा-मदायिने-जल एवं महुआ लेकर 'किरिया' खा लेते हैं, तब उस किरिया की घोषणा के विपरीत कुछ नहीं करते । किरिया लेने के अवसर आमतौर पर जातीय पंचायत के समय ही आते हैं। 'कसम' खाने को स्थानीय भाषा में किरिया कहते हैं।

3.16 कोलों का पंचायत संगठन

कोलों का वैसे तो कोई स्थायी केन्द्रीय संगठित संघ अथवा पंचायत नहीं है। लेकिन आमतौर पर प्रत्येक उपजाति के कोलों की अलग-अलग पंचायतें होती हैं। कोल अपनी उपजाति के सारे विवाद उसी माध्यम से निपटाते हैं। विवाह सम्बन्धी जनजातीय निषेधों के उल्लघंन के अवसर पर प्रत्येक उपजाति के लोग इन पंचायतों में विचार विमर्श करते हैं । पिछले दशक में इनके कुछ मामले, विशेषकर भूमि एवं धन सम्बन्धी प्रशासन द्वारा गठित क्षेत्र की न्याय पंचायत में पहुँचे, लेकिन ऐसे मामलों की संख्या नगण्य हैं।

वन प्रान्तरों में बसने वाले कोल एक इलाके या उपक्षेत्र में एक ही उपजाति के होते हैं। वहाँ इनकी जातीय पंचायतें अधिक सशक्त होती हैं। जिस स्थान पर ये अन्य गैर-कोलों के साथ निवास करते हैं। वहाँ पर ये दो स्तरों पर स्थानीय संगठनों से जुड़े प्रतीत होते हैं। प्रथम तो अपने जाति संगठन से और द्वितीय उस क्षेत्र के प्रमुख जातियों या समूहों द्वारा बनाये गये अनौपचारिक संगठनों से । वास्तव में जो कोल मजदूर होते हैं वे अपने-अपने मालिकों के संगठन से जुड़ जाते हैं। कभी-कभी इन विभिन्न मालिकों के अलग-अलग संगठनों से सम्बद्ध होने के कारण कोल भी एक दूसरे से अलग हो जाते हैं, और अनेक मामलों पर एकमत नहीं हो पाते हैं। वैसे ये ज्यादातर मामलों में अनौपचारिक संगठनों से अपने को तटस्थ बनाये रखने की चेष्टा करते हैं।

3.17आर्थिक एवं राजनीतिक परिवेश

पाठा की आर्थिक संरचना उन्हीं प्रतिमानों पर आधारित हैं जो आमतौर पर भारत में प्रायः सभी आदिम क्षेत्रों में देखने में आती है। इस संरचना के अंतर्गत आदिवासियों की स्थिति हर दृष्टि से अर्थहीन रहती है। इनके भौगोलिक परिवेश में विद्यमान प्राकृतिक सम्पदा का जिस प्रकार दोहन होता है, उसी प्रकार उनके श्रम और सम्पत्ति का भी पूरी तरह से दोहन होता है।

3.17.1 कोलों की व्यावसायिक संरचना

पाठा के कोलों का प्रमुख व्यवसाय कृषि एवं उससे सम्बद्ध कृषि कार्य, पशुपालन, वनोपज का विदोहन पत्थर उत्खनन, सिंचाई तथा वन विभाग में दैनिक मजदूरी करना है। पाठा के कोल अधिकांशतः कृषि मजदूर, ठेकेदार के मजदूर, वन विभाग एवं अन्य सरकारी संस्थानों के मजदूर के रूप में कार्य करते हैं। इनमें से बहुत कम कोल ऐसे हैं, जो मात्र कृषि से गुजारा करते हैं। अधिकांश कोल दूसरों की सेवाओं में ही लगे रहते हैं। कोलों के श्रम एवं दीन स्थिति का शोषण जितना पाठा में होता है, शायद प्रदेश के अन्य क्षेत्रों में कहीं नहीं होता है। सैकड़ों वर्षों से दबे-पिसे, बन्धुवा मजदूरों का सा जीवन व्यतीत करने वाले कोल इसे अपनी नियति मान बैठे थे।

बंधुवा श्रम अवमुक्त अधिनियम 1976 के लागू होने से कोलों की स्थिति में कुछ परिवर्तन आया है। पीढ़ियों से बनाये गये अनेक बन्धुवा कोलों को अवमुक्त कराया गया है। परिणामस्वरूप उन्हें शोषकों के चंगुल से मुक्ति मिली है। फलतः उनमें अपनी स्थिति के प्रति चेतना का विकास हुआ है। अब बहुत से कोल अपने श्रम और वोट का मूल्य समझने लगे हैं। यही नहीं वे संगठन के महत्व से परिचित हुए हैं, तथा संगठित होकर 'दादू' क्षेत्र के बड़े एवं दबंग लोग तथा ठेकेदारों से अपने हक की बात करने लगे हैं।

पाठा के कोल जो वन-प्रान्तर के एकान्त क्षेत्र में रहते हैं, वे अभी वनोपज के विदोहन यथा लकड़ी इकट्ठा करने, तेन्दू पत्ती तोड़ने, महुआ, चिरौंजी बीनने , शहद

एकत्र करने के कार्य से ही अपनी जीविका अर्जित करते हैं। ऐसे कोल तभी मजदूरी करते हैं जब उनके भोजन, वस्त्र के लिए अथवा विवाह एवं अन्य दूसरे उत्सवों के लिए धन की आवश्यकता पड़ती है। अन्यथा वे सामान्यतया एकान्त वन प्रान्तर में अपने में ही मस्त रहते हैं। ऐसे एकान्तजीवी कोलों में अब भी सामाजिक एवं राजनैतिक चेतना की जागृति नहीं हुई है।

"पाठा" क्षेत्र की कृषि उपज धान, ज्वार, जौ, चना, साँवा, कोदो एवं काकुन हैं। कुछ क्षेत्रों में सम्पन्न सवर्ण लोग गेहू, तिलहन एवं दलहन की फसल भी उगा लेते हैं। इस क्षेत्र में रबी एवं खरीफ दोंनो ही फसलें होती हैं। सूखा क्षेत्र होने के कारण जायद की फसल नहीं के बराबर होती हैं। उत्तर प्रदेश शासन द्वारा निषिद्ध फसल-खेसारी (जिसे स्थानीय भाषा में 'मटरा' कहते हैं जिससे पोलियों एवं लकवा जैसी असाध्य बीमारियां होती हैं) उच्च कृषकों द्वारा चोरी-छिपे बोई जाती है। इस निषिद्ध दाल को बड़े किसान कोल कृषकों-मजदूरों को मजदूरी के रूप में देने के लिए प्रयुक्त करते हैं।

3.17.2 भू-स्वामित्व - प्रतिमान तथा आर्थिक संरचना

पाठा क्षेत्र में भूमि के वितरण का विश्लेषण बहुत ही आसान है। उपजाऊ एवं सिंचन सुविधाओं से युक्त भूमि सवर्णो के पास है। इनके पास इतनी अधिक जमीन है कि वे उस पर खेती नहीं करा पाते हैं। अतः अतिरिक्त भूमि को कृषक मजदूरों को बटाई पर दे देते हैं। उत्तर प्रदेश में भूमि-स्वामित्व के दो प्रमुख प्रकार हैं। प्रथम, भूमिधर और दूसरे 'सीरदारी'। भूमिधर को अपनी भूमि किसी को भी बेचने का पूर्ण अधिकार होता है, जबकि सीरदार, उसे किसी को बेंच नहीं सकता है। सीरदार को जमीन ग्राम समाज अथवा शासन द्वार अनुदान के रूप में प्राप्त होती है। भूमि स्वामित्व उक्त दो प्रकारों के अलावा भूमि उपयोग का एक अन्य स्वरूप भी है, जिसे 'आसामी' कहते हैं। इसके अन्तर्गत भूमि किसी अपंग या ऐसे निराश्रित व्यक्ति अथवा ग्राम समाज को दी जाती है, जो एक निश्चित

समय तक अर्थात् लीज पर उसका उपभोग कर सकता है। लीज की जमीन पर उस व्यक्ति का निश्चित समय तक ही आधिपत्य रहता है।

पाठा में भूमि का एक अन्य सुपरिचित तरीका है जिसे बटाई (अधिया) कहते हैं। इसके अन्तर्गत बड़े किसान जिस जमीन पर स्वतः खेती करने में असमर्थ होते हैं, उसे दूसरों को बटाई पर दे देते हैं। बटाई पर जमीन लेने वाला व्यक्ति फसलोत्पादन का आधा हिस्सा भू-स्वामी को दे देता है। ऐसे बटाईदार प्रायः स्वामी के यहाँ काम करने वाले कृषक मजदूर ही होते हैं। भूमि सम्बन्धी नये अधिनियमों के अनुसार कोई व्यक्ति यदि किसी खेत विशेष में बहुत अधिक समय से बटाई की खेती कर रहा है तो वह खेती उसी व्यक्ति के नाम पट्टा हो जाता है। पट्टे पर भूमि हाथ से निकल जाने के खतरे को बचाने के लिए बड़े-बड़े भू-स्वामी लेखपालों को मिलाकर बटाई कर दी गयी । भूमि को नक्शे में स्वतः द्वारा जोती गयी दिखाते हैं, जिससे भूमि पर उनका स्वामित्व बना रहता है। साथ ही ऐसे भू-स्वामी एक जमीन को एक ही व्यक्ति को कई वर्षो तक लगातार बटाई पर नहीं देते हैं बल्कि दो-तीन वर्ष पूरे होने पर बटाईदार को बदल देते हैं, जिससे उनकी भूमि कानूनी तौर पर सुरक्षित बनी रहे।

चकबन्दी के समय बड़े किसानों ने भूमि सीलिंग में आवंटन के दौरान जाने के भय से अपने मजदूरों एवं हलवायें के नाम आवंटित करा दिया था। यदि इन किसानों द्वारा ऐसा न किया गया होता तो ग्राम समाज की भूमि में वृद्धि होती तथा भूमिहीन कोलों को पट्टे मिल सकते। इस प्रकार की घटनाएं ऊँचा डीह न्याय पंचायत के कई ग्रामों में अधिक हुई हैं।

कोलों के पास भूमिधरी की जमीन नहीं हैं जो जमीन उन्हें मिली है वह अनुदान अथवा ग्राम समाज के पट्टे की है। पट्टे एवं अनुदान में प्राप्त भूमि निकृष्ट एवं बंजर किस्म की होती है। उस पर अच्छे ढंग से कृषि कार्य नहीं हो पाता है। हाँ, इससे वे भूमिवान होने का गौरव अवश्य पा लेते हैं। कुछ स्थानों पर जहाँ कोल कालोनियों का निर्माण

किया गया है वहाँ की जमीन उपजाऊ प्रकार की है। इन स्थानों के कोल कृषि कार्यो से जुड़े हैं। अन्य कोल पट्टे की जमीन जोतने की तुलना में जमींदार या बड़े किसान द्वारा दी गयी बटाई की जमीन पर खेती करना ज्यादा पसन्त करते हैं।

भूमि के प्रति कोलों का लगाव अब बढ़ता जा रहा है और वे चाहते हैं कि जैसे भी हो कुछ न कुछ भूमि उन्हें प्राप्त हो जाय। भूमि प्राप्त करने की यह लालसा कमोवेश इन्हें आपस में एकजुट होने के लिए भी प्रेरित कर रही है। फिर भी इनमें से किसी के पास कृषि योग्य पर्याप्त भूमि नहीं है। साधारणतया 3–4 बीघे से ऊपर भूमि रखने वालों की संख्या सम्पूर्ण कोल जनसंख्या में बहुत कम है। पिछले दशकों में सरकार ने इन्हें ग्राम समाज की भूमि पर पट्टे अधिक दिये हैं। जिससे क्रमशः ये भूमिवान होते जा रहे हैं लेकिन पाठा क्षेत्र की वही भूमि जो पठारी एवं बंजर है इन्हें प्राप्त हो रही है। परिणामस्वरूप इनको भूमि से कोई विशेष लाभ नहीं प्राप्त हो रहा है। भाग्यवश जिन कोलों को उपजाऊ किस्म के पटटे मिल भी जाते हैं उनमें 'दादुओं' के कब्जे होने से इन्हें कब्जा प्राप्त नहीं हो पाता है। जिससे बाध्य होकर वे वनोपज पर ही आश्रित होने के लिए मजबूर हैं। किन्तु दुर्भाग्य से वन के सम्बन्ध में बनाये गये नवीन अधिनियमों के कारण वनों पर सरकार का नियंत्रण भी बढ़ता जा रहा है। इनकी आजीविका का साधन छिनता जा रहा है। फलस्वरूप कोल कृषक मजदूर ठेकेदार या दादू के मजदूर बनते जा रहे हैं।

इनका कृषि कार्य परम्परागत तथा आदिवासी शैली का है। इनके उपकरण भी परम्परागत तकनीक के हैं। वे मात्र हल, कुदाल, फावड़ा, खुरपी एवं हंसियाँ से ही खेती का कार्य करते हैं। इस पर भी दूसरों के बैलों पर आश्रित रहने के कारण इनकी खेती पिछड़ जाती है। उन्हें कृषि कार्य हेतु बैल पाने की लालसा में दूसरों की अनावश्यक सेवा करनी पड़ती है। कृषि कार्य में पूर्ण समय न दे पाने के कारण फसलोंतपादन कम होता है। अन्तः इन्हें कृषि के अतिरिक्त अन्य कार्यो के करने के लिए बाध्य होना पड़ता है।

जहाँ तक पालतू पशुओं का प्रश्न है, इनके पास गाय, बकरी, भेड़ एवं मुर्गी तो हैं लेकिन भैंस अथवा बैल बहुत ही कम कोलों के पास हैं। ये पशु इनकी सम्पन्नता के प्रतीक हैं। सामान्तय एक कोल के पास दो जानवर के लगभग होते हैं। अधिकांश के पास बकरी, भेंड़ अथवा मुर्गियाँ हैं। गाय, बैल, अथवा भैंसे उन्हीं कोलों के पास हैं जिन्हे शासकीय अनुदान द्वारा सहायता प्रदान करायी गयी है। यही नहीं निर्धन की गाय 'बकरी' भी अनुदान द्वारा उपलब्ध कराने की सुविधा प्राप्त है। जिल कोलों के पास जानवर हैं, उनके सामने 'चारा' की समस्या है, जिससे कोल जानवरों को जिलाये रखने की समस्या से ग्रस्त है। अतः जानवरों को बेचनें की बाध्यता इनके सामने बनी रहती है।

समूह में बसे आदिवासी कोल पहले एक विशिष्ट प्रकार की खेती करते थे, जिसे 'धइया' खेती कहा जाता था। यह बहुत कुछ मिर्जापुर में बसे आदिवासियों की 'झूम कृषि' के समान थी। इसके अन्तर्गत एक क्षेत्र विशेष के वृक्षों को काटकर जला दिया जाता था, और कुछ समय पश्चात् वहाँ 'कोंदो'' बो दिया जाता था। उस राख मिश्रित भूमि में कोंदों की फसल लेने के बाद उस स्थान को छोड़ कर कोल दूसरे स्थन पर चले जाते थे, और प्रकारान्तर से उसी पद्धति से खेती करते थे। लेकिन एक लम्बे अरसे से इस प्रकार की खेती अब आदिवासी कोल नहीं कर रहे हैं। पहले तेन्दू पत्ती के संग्रहण के लिए वन-वन भटकने वाले कोल अथवा वनों से ठेकेदारों के लकड़ी काटने वाले कोल एक स्थान से दूसरे स्थान पर कार्य करते समय अपनी झोपड़ियाँ बना लेते थे और काम खत्म होने पर उन्हें जलाकर और कहीं जाकर बस जाते थे। लेकिन अब ऐसा नहीं कर पाते हैं। अब तेन्दू पत्ती के संग्रहण करने अथवा लकड़ी काटने के बाद वे पुनः अपने मूल स्थान पर लौट आते हैं। बदली परिस्थितियों में उन्हें शासन से प्राप्त भूमि एवं मकान का महत्व समझ में आने लगा है। वे एक क्षेत्र विशेष के रूप में स्थायी रूप से बसे रहने में अपना हित और गौरव समझने लगे हैं। अब कोल घुमन्तू जीवन के बजाय स्थायी जीवन निर्वाहन में विश्वास करने लगे हैं।

पाठा के कोलों को 1962 से अब तक अनेक कालोनियों में बसाकर भूमि, बीज, उपकरण एवं बैल उपलब्ध कराने की सुविधा रही है, जिससे अब वे कृषि कार्य में लगते जा रहे हैं। आर्थिक समृद्धि के लिए शासन ने अनेक उपाय भी किये हैं। मानिकपुर-खिचरी मार्ग में विन्ध्याचल एमरी एब्रेसिव प्लाण्ट में बाक्साइड का चूर्ण बनाने का कार्य किया जाता है, जिसमें सैकड़ो मजदूरों की आवश्यकता पड़ती है। इसी प्रकार वन विभाग ने अनेक व्यक्तियों को बाक्साइड निकालने, बोल्डर तोड़ने एवं सैन्ड सिलिका प्राप्त करने के लाइसेन्स दिये हैं। जिससे उनके स्थानीय लोग काम पा सकें, और आर्थिक रूप से समृद्ध हो सकें।

स्वैच्छिक संस्थानों ने इस क्षेत्र में कोलों के प्रत्येक स्तर के विस्तार को अपनी संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य बनाया है। प्रसिद्ध व्यवसायी मफतलाल ने भी इस क्षेत्र में सदगुरू सेवा संघ ट्रस्ट तथा अर्जुन भाई ने गाँधी प्रतिष्ठान संचालित किये हैं। ये संस्थायें कोलों के आर्थिक उत्थान के लिये सतत प्रयत्नशील रहे हैं। सद्गुरू सेवा संघ ट्रस्ट,चित्रकूट ने जबरदस्त कार्यक्रम के माध्यम से उमरी व बहिलपुरवा क्षेत्र के आदिवासी कोलों को दुधारू एवं कृषि में प्रयुक्त होने वाले पशुओं से जोड़ने एवं उनसे अधिकतम लाभ प्राप्त करने की युक्ति सुझाई है।

इस कार्यक्रम में एक परिवार को डेढ़ एकड़ भूमि पर पशुओं के चारे को बोने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, जिसके बदले में उन्हें प्रति सप्ताह निश्चित मात्रा में खाद्यान्न दिया जाता रहा है। साथ ही उनके द्वारा उत्पादित चारे का उपयोग भी स्वतः करने की सुविधा दी गयी थी क्योंकि पाठा क्षेत्र में पशुओं को मई-जून के माह में चारा उपलब्ध नहीं हो पाता है। जबकि कोबवूल उन महीनों से ही हरा रहता है। खेद का विषय है कि आज उमरी का विशाल फार्म वीरान पड़ा है, इसके कारणों में कोलों में जागरूकता की कमी, कर्मचारियों की निष्क्रियता तथा उपेक्षा मुख्य रहे हैं। आज 'जबरजस्ता' कार्यक्रम में कार्यरत कर्मचारियों द्वारा समय से खाद्यान्न न उपलब्ध कराये जाने पर कोलों में निष्क्रियता आयी है,

उन्होंने कोबवूल के रखरखाव की व्यवस्था छोड़ दी है, जिसके कारण उनके मवेशी अन्ना या छुट्टा होने की स्थिति तक पहुँच गये। इसी प्रकार गाँधी संस्थान के बरगढ़ केन्द्र पर पत्थर उत्खनन का कार्य भी ठप्प पड़ा है, कुछ तो वन विभाग द्वारा लाइसेंस पुनर्नवीनीकरण न करने से तो कुछ संस्थान के कागजी कार्यवाही से। खिचरी स्थित एमरी प्लान्ट स्थानीय अवरोध एवं उत्तर प्रदेश खनिज विकास निगम की दुर्व्यवस्था के कारण काफी अरसे से बन्द पड़ा है। पाठा क्षेत्र में बसे कोलों में बहुत कम ऐसे हैं जो नियमित नौकरियों में लगे हैं। सरकारी विभागों में लगे कोल तो अँगुलियों पर गिने जा सकते हैं।

पाठा के कोलों को व्यावसायिक दृष्टि से तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है, 1. खेतिहर मजदूर 2. खेतिहर 3. अन्य प्रकार की मजदूरी एवं नौकरी करने वाले कोल। खेतिहर कोलों में से अधिकतर बटाई पर कृषि कार्य करते हैं। गणना के अनुसार चित्रकूट जनपद के प्रति परिवार औसतन 6.5 एकड़ भूमि है। 1976 में बनाये गये बन्धुआ श्रम अवमुक्त अधिनियम के बाद भूमि वितरण व्यवस्था में सुधार हुआ है। फलस्वरूप कोलों को कुछ भूमि की प्राप्ति हुई है।

मजदूरी की दर इस श्रेणी में निम्न है। वस्तु अथवा नकद रूपयें दोनो ही प्रकार की मजदूरी देने का चलन है। 1966 में अमीर हसन द्वारा किये गये अध्ययन के दौरान इस क्षेत्र में पुरूषों का औसतन रूपया 1.50 से 2.00 रूपया प्रतिदिन तथा स्त्रियों को रूपया 1.00 से 1.25 एवं बच्चों को 0.62 से 0.75 पैसे प्रतिदिन मजदूरी प्राप्त होती थी। वर्तमान में वन निगम/ विभाग द्वारा इस कार्य को अपने हाथों में ले लिया गया है। ये विभाग ठेकेदारों के माध्यम से तेंदू पत्तियों का संग्रहण कराते हैं। जिमसें प्रति 100 बंडल की दर 25 रूपये दी जाती है। एक बंडल में नियमानुसार 50 तेंदू की पत्तियाँ होनी चाहिए किन्तु ठेकेदारों द्वारा 80 से 100 तक की पत्तियों का एक बंडल माना जाता है। इस प्रकार कोलों को अनावश्यक श्रम करना पड़ता है जिससे उचित पारिश्रमिक की प्राप्ति नहीं हो पा रही है। घास कटान का कार्य भी ठेकेदारों द्वारा कराया जाता है। जिसके पारिश्रमिक का

भुगतान कोल मजदूरों को घास के वजन के अनुसार दिया जाता है। यह वजन प्रति मन के आधार पर आंका जाता है। नियमतः एक मन 40 किलोंग्राम का होता है। किन्तु ठेकेदारों द्वारा 50 किलोग्राम को एक मन माना जाता है। जो कोल मजदूरों के साथ अन्याय है। इसी प्रकार आंवला तोड़ने पत्थर तोड़ने के कार्यो से एक कोल मजदूर को औसतन एक दिन में मजदूरी 10 से 15 रूपये के मध्य प्राप्त होती है। श्रम अधिनियम के नये नियमों के अनुसार दैनिक मजदूरी में वृद्धि हुई है। शासन द्वारा निर्धारित न्यूनतम मजदूरी की दरों पर हस्ताक्षर तो करने होते हैं, किन्तु मजदूरी में 5 से 7 रूपये तक की अवैध कटौती, कार्य संचालित कराने वाली ईकाइयों के संचालकों द्वार काट लिए जाते हैं। कोलों के विकास हेतु कार्य करने वाली अखिल भारतीय समाज सेवा संस्थान द्वारा कराये जाने वाले कार्य (जलागम योजना के अन्तर्गत) में कार्यरत कोलों की मजदूरी में अवैध कटौती की गयी, जिससे कोल मजदूरों में रोष पनपा और वे आन्दोलनरत हुए। कोलों की स्त्रियाँ पुरूषों की तुलना में अधिक काम करती हैं। वस्तु के रूप में प्राप्त होने वाली मजदूरी 2.5 से 3.0 किग्रा बेर्रा, चना, जौ, मटर आदि का मिश्रण प्रतिदिन हैं। कम मजदूरी के कारण पाठा के कोल अधिकाशतः ऋणग्रस्त हैं। इनमें से कुछ जब किसी बड़े भू-स्वामी के चंगुल में फंस जाते हैं, तो बंधुवा मजदूर बनकर रह जाते हैं। बंधुवा श्रम अवमुक्त अधिनियम ने अब इस शोषण पर अंकुश लगाया है, किन्तु इसका एक परिणाम यह भी हुआ है कि आज कोलों को कोई ऋण नहीं देता है। अब वे ऋण प्राप्त करने के लिए स्थानीय नेताओं, जो वास्तव में स्थानी दलालों की तरह होते हैं के माध्यम से बैंक के चक्कर लगाते हैं। उन्हें बैंको से बीस सूत्रीय कार्यक्रमों आदि के तहत ऋण तो मिलता है, परन्तु जितनी धनराशि खाते पर चढ़ाई जाती है, उसका आधा हिस्सा ही उन्हें प्राप्त हो पाता है। शेष धनराशि नेताओं, दलालों, सरकारी तथा बैंक कर्मियों की जेब में चला जाता है।

3.17.3 समकालीन राजनीतिक परिवेश

पाठा क्षेत्र के राजनीतिक स्थिति की ओर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि यहाँ कि राजनीतिक गतिविधियाँ जनपद के अन्य क्षेत्रों की तुलना में सरल, स्पष्ट एवं स्थानीय स्तर तक ही सीमित रही है। यहां की सारी राजनीति मुख्यतः चुनावों की राजनीति है। देश के स्वतंत्र होने के बाद ये आज तक होने वाले आम चुनावों में इस क्षेत्र के मतदान प्रक्रियाओं से यह बात स्पष्ट होती है। पाठा क्षेत्र का अधिकांश क्षेत्र मऊ विधानसभा क्षेत्र से जुड़ा है, जोकि एक सुरक्षित क्षेत्र है, यहाँ से कोई हरिजन ही विधायक चुना जा सकता है। कुछ क्षेत्र चित्रकूट विधान सभा क्षेत्र में है। इस क्षेत्र में आने वाले ग्रामों की संख्या कम है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इस क्षेत्र के राजनीतिक एवं मतदान की प्रक्रिया के इतिहास को देखने से स्पष्ट होता है कि 1952 से 1985 तक 33 वर्ष की अवधि में यहाँ काफी परिवर्तन हुआ है। जहाँ 1952 से 1967 तक आम चुनावों में 'दादुओं' ठेकेदारों एवं सवर्ण अभिज्यात्यों की पूरी मर्जी का शासन चलता था। आज की परिस्थितियों में बदलाव आया है। पाठा के कोल जिनका इतिहास, भूगोल एंव अर्थशास्त्र, सब भूख से सन्दर्भित है और जिनको भूख मिटाने के नाम पर मत के सभी ठेकेदारों ने जी भरकर मनमानी करके उनके मतदान व्यवहार को प्रभावित किया था, अब अपेक्षाकृत जागरूक हो गये हैं। इनमें से कई लोग भूख, गरीबी भोगते ही नही वरन् उनके कारण भी समझते हैं। वे राजनीतिक प्रक्रियाओं से भी परिचित होते जा रहे हैं। पाठा में कोलों के ठेकेदारों का कार्य कठिन होता जा रहा है। अभी भी कुछ क्षेत्रों में बंदूक एवं आर्थिक दबाब की नीति चलाकर ताकतवर और चालाक लोग राजनीतिक एवं आर्थिक लाभ प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं। यद्यपि उनकी शक्ति में ह्रास हुआ है। पाठा क्षेत्र के कोलों में अब वह जागरूकता आती जा रही है जो तीन-चार दशक पहले सवर्णो एवं पिछड़ी जातियों में आ चुकी थी। अब वे अपने को संगठित कर अपने हितों को प्राप्त करने हेतु सचेष्ट हो रहे हैं।

1952 के आम चुनाव में इस क्षेत्र से विधान सभा के लिए काँग्रेस से दर्शनलाल धोबी चुने गये थे। 1957 में सियादुलारी इसी दल से टिकट पाकर विजयी हुई थीं। 1962 में पुनः सियादुलारी जीतीं थी। स्वतन्त्रता प्राप्ति में काँग्रेस पार्टी की अहम् भूमिका होने के कारण देश के अन्य क्षेत्रों में भी इसी दल की जीत हुई थी। पाठा क्षेत्र में भी इस पार्टी की विजयी स्थिति रही। पाठा वासियों ने जी खोलकर, तन,मन,धन से काँग्रेस कि मदद की और उसके प्रत्याशी को विजयी बनाया । परन्तु 1967 में इस क्षेत्र में सियादुलारी के खिलाफ सोशलिस्ट पार्टी से लल्लूराम कोल मनका निवासी एवं इन्द्रपाल कोल खरौंद निवासी ने जनसंघ पार्टी की ओर से अपनी उम्मीदवारी का नामांकन किया था। इससे काँग्रेस खेमें में हलचल मच गयी थी। मऊ विधानसभा क्षेत्र में भी कोल मतदाताओं की पर्याप्त संख्या का प्रभाव चुनाव पर पड़ने की आशंका थी। दूसरी ओर मानिकपुर क्षेत्र के वन माफियाओं एवं दादू भी अपने हितों की रक्षा न होने के कारण इसी प्रकार के प्रत्याशी चुनने की प्रतीक्षा कर रहे थे। बहुत सोंच-विचार के बाद मानिकपुर के ठेकेदारों ने एक पढ़े-लिखें कोल, जो इसके पूर्व किसी राजनीतिक दल का सदस्य नहीं था, मात्र एक प्राइवेट बस में कण्डक्टर था, उसे जनसंघ पार्टी की ओर से प्रत्याशी घोषित करवाया था। प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग देकर उसे विजयी बनवाया। दूसरी ओर पूर्वी पाठा के ग्राम मनका के लल्लूराम कोल, जो प्रायः कुछ नहीं करते थे, उन्हें प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के कुछ स्थानीय नेताओं ने दल का टिकट दिलवाया था। लल्लूराम का क्षेत्र में इतना योगदान था कि वे प्रायः कोलों की समस्या प्रधानों एवं अधिकारियों तक पहुँचाते रहते थे। इसलिए अपने क्षेत्र के नेता के नाम से जाने जाते रहे हैं। उन्हें टिकट दिलवाने में रूकमा के राजा बुआ मिश्रा का विशेष योगदान रहा, जो सोशलिस्ट पार्टी के एक सक्रिय कार्यकर्ता ही नहीं बल्कि मऊ क्षेत्र के नेता रहे हैं। श्री मिश्रा ने 1958 में डा. राममनोहर लोहिया के माध्यम से घास की रोटी प्रस्तुत कर सांसदों का ध्यान पहली बार पाठा की ओर आकृष्ट करवाया था। इस प्रकार इन्द्रपाल एवं लल्लू

कोल दोनों किसी दल विशेष से सम्बद्ध नहीं रहे, बल्कि उन्हें खड़ा कराने में स्थानीय नेताओं का हाथ रहा।

1967 के चुनाव में इन्द्रपाल कोल विजयी हुए। परन्तु संविद सरकार के पतन के कारण 1969 में पुनः मध्यावधि चुनाव हुए। इस चुनाव में जनसंघ ने इन्द्रपाल कोल को जो इस दल के विधायक रहे थे, टिकट नहीं दिया गया क्योंकि उन पर यह आरोप था कि वे विधानसभा में काँग्रेस से साँठ-गाँठ करके अपने लिए काँग्रेस में जाने की भूमिका बना रहे हैं। संविद सरकार के पतन एवं अस्थायित्व ने एक बार पुनः काँग्रेस की सियादुलारी को विजयी बनाने में मदद की। इस बार लल्लूराम कोल पुनः चुनाव हार गये । वर्ष '1974 में जब विधानसभा का पुनः चुनाव हुआ तो जनसंघ ने पुनः एक मजबूत प्रत्याशी लक्ष्मी प्रसाद वर्मा को खड़ा किया, जो हरिजन होने के साथ-साथ शिक्षित भी था। लक्ष्मी प्रसाद वर्मा ने सियादुलारी को हराया था। 1977 में आपातकाल से उत्पीड़ित पाठावासियों ने विधान सभा के चुनाव में रमेश चन्द्र कुरील जो जाति के चमार एवं इस क्षेत्र से दूर अतर्रा के रहने वाले थे, भारतीय जनता पार्टी के टिकट पर विजयी हुए थे। इस बार के चुनाव में कोलों ने मुख्यतया नसबन्दी के खिलाफ अपना मत इस प्रत्याशी को दिया था। जनता पार्टी की सरकार के शीघ्र पतन एवं इस क्षेत्र में जनता शासन काल में हरिजनों पर सवर्णो द्वारा किये गये उत्पीड़ने से पुनः काँग्रेस पार्टी के प्रत्याशी शिरोमणि भाई ने चुनाव जीता । शिरामणि भाई जाति के चमार तथा बाँदा के निवासी होने के बावजूद 1980 एवं 1985 का चुनाव भी जीते थे।

इस प्रकार 45 वर्षो से पाठा के राजनीतिक इतिहास में दो दलों की टक्कर सदैव होती रही है। पाठा क्षेत्र के पूर्व जनपद में कम्युनिस्ट पार्टी की पैठ अच्छी रही है, किन्तु उक्त दल पाठा क्षेत्र को कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं छोड़ पाया। इसका कारण यह था कि एक तो दल ने इस क्षेत्र में कोई कार्य नहीं किया। दूसरे स्थानीय 'दादूओं', ठेकेदारों एवं अन्य अभिजात्यों की नजर में यह दल एवं इसकी नीतियाँ उनके हित में नहीं थी, इसलिए उनके सहयोग के अभाव में कम्युनिस्ट पार्टी पाठा क्षेत्र में कोई उपलब्धि प्राप्त नहीं कर

सकी। इसके ही आंशिक भाग चित्रकूट विधानसभा क्षेत्र से कम्युनिस्ट विधायक रामसजीवन सिंह कई बार निर्वाचित किये गये परन्तु मऊ विधानसभा क्षेत्र से आज तक कोई कम्युनिस्ट विधायक नहीं चुना गया। देश के दूसरे राजनीतिक दल जैसे पुरानी प्रजा सोशलिस्ट पार्टी जो बाद में जनता पार्टी में विलीन हो गयी एवं भारतीय लोकदल सरीखी पार्टियों ने इस क्षेत्र में छुट-पुट एवं भिन्न-भिन्न स्थानों पर कुछ कार्य किये हैं। 1985 से 1997 के मध्य भारतीय जनता पार्टी एवं बहुजन समाज पार्टी के सदस्यों ने इस क्षेत्र से चुनाव लड़ा तथा एक-एक बार विजयी हुए। ये दोनों दल आज भी पाठा क्षेत्र में अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं।

काँग्रेस की हरिजन समर्थक नीतियों का प्रभाव यहाँ के आदिवासियों पर विशेष रूप से पड़ा है। स्थानीय अभिजात्यों की पहुँच सत्तारूढ़ दल में अन्दर तक होने के कारण एवं 1977 में जनता पार्टी सरकार में आदिवासी कोलों पर सवर्णो द्वारा किये गये अत्याचारों के कारण काँग्रेस ने पुनः इसी धारणा पर चलने वाली बहुजन समाज पार्टी से तालमेल बनाना प्रारम्भ कर दिया है। भारतीय जनता पार्टी के समर्थकों में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सदस्यों की संख्या अधिक न होने पर भी इस क्षेत्र में सक्रिय कार्य करने एवं मानिकपुर क्षेत्र के उन दबंग 'दादुओं' एवं 'ठेकेदारों' के समर्थन से जो वोट की राजनीति चलाते हैं, भारतीय जनता पार्टी की स्थिति अन्य दलों की तुलना में मजबूत है। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ द्वारा संचालित सेवा समर्पण संस्थान ने जहाँ एक ओर कोलों के धर्मान्तरण को रोका है, वहीं दूसरी ओर स्थान-स्थान पर चिकित्सा एवं अन्य सुविधाएँ पहुँचाकर आदिवासियों का मन जीतने का प्रयास किया है। परिणामतः उन क्षेत्रों में जहाँ सेवा समर्पण संस्थान के विद्यालय एवं चिकित्सालय हैं, वहाँ के कोल इन संस्थानों में कार्यरत कर्मचारियों से सहयोग की अपेक्षा करते हैं। कोलों की इन भावनाओं का लाभ ये कर्मचारी दल विशेष के लिए प्राप्त करने में सफल हो रहे हैं, जो किसी दल विशेष के लिए उपयोगी हैं।

जनतन्त्र में मतदान की राजनीति का बढ़ता प्रभुत्व एवं सत्ता प्राप्त करने का यह सुलभ मार्ग विभिन्न दलों को प्रेरित करता है, कि वे इस क्षेत्र में अपनी पकड़ मजबूत

करें। पाठा क्षेत्र में विभिन्न राजनैतिक दल जैसे भारतीय जनता पार्टी, बहुजन समाज पार्टी, समाजवादी पार्टी एवं अपना दल जैसी पार्टियाँ समयानुसार इनमें राजनीतिक चेतना जगाने हेतु आन्दोलन, सभा एवं प्रदर्शन का आयोजन करने लगे हैं। कोल अपनी समस्याओं के निवारण हेतु अब' उपवास अथवा 'अनशन' जैसे तरीकों को अपनाने लगे हैं जिन्हें ' अपना दल' जैसे राजनीतिक दलों का समर्थन प्राप्त हो रहा है। क्षेत्र में कोलों के विकास कार्यो में लगी स्वैच्छिक संस्थाओं के प्रमुख अपने भ्रष्ट कार्यो में पर्दा डालने का प्रयास कर रहे हैं। अप्रत्यक्ष रूप से संगठन को प्रोत्साहित करने का कार्य इन राजनीतिक दलों द्वारा सम्पादित हो रहा है। 'पाठा कोल अधिकार मंच' का गठन क्षेत्र में कार्य कर रही समाज सेवा संस्थान के प्रमुख की मानसिक चतुरयुक्ति का परिणाम है। पाठा में पहले कोई राजनीतिक गतिविधियाँ नहीं हुआ करती थीं, अब विभिन्न दलों की सक्रियता से अनेक आयोजन, जुलूस, प्रदर्शन ,अनशन यहाँ तक कि मानवाधिकार आयोग तक में मामलों को पहुँचाने में पीछे नहीं है। पाठा के आदिवासी विभिन्न राजनीतिक दलों की सक्रियता से परिचित और प्रभावित हो रहे हैं।

विभिन्न दलों की राजनीतिक गतिविधियों से पाठा के कोल भी प्रभावित है। अपनी समस्याओं के निराकरण के लिए सभाओं का आयोजन करने लगे हैं। प्रतिवर्ष मानिकपुर में कोलों का एक जातीय सम्मेलन होता है।

कोलों के गाँवों में राजनीतिक दलों के प्रत्याशियों के दर्शन मात्र चुनाव के समय पर ही संभव होते हैं। निर्वाचित प्रत्याशी कोलों की समस्याओं को जानने हेतु कभी नहीं आते हैं। इसके अतिरिक्त कोलों की समस्याओं को सुनने एवं जानने हेतु अपने आवासों एवं कार्यालयों में भी उपलब्ध नहीं होते हैं। यदि कभी मिलते भी हैं तो कोलों की समस्याओं के हल में विशेष रूचि नहीं लेते है।

कोलों की राजनीतिक परिस्थिति में परिवर्तन तो हुए हैं किन्तु अन्य गैर कोल समूहों की तुलना में बहुत कम हैं। इसका प्रमुख कारण कोलों में संगठनात्मक नेतृत्व का

अभाव है।वे राजनीतिक दृष्टि से जागरूक अवश्य हुए हैं, किन्तु उनका नेतृत्व गैरकोलों के हाथों में है। गैर कोलों ने ही उन्हें संगठित करके प्रदर्शन, जुलूस, उपवास आदि में सक्रिय बनाया है जो वास्तव में उन संस्था प्रमुखों, नेताओं और उनके दलों के हितों के लिए संयोजित किये जाते हैं। इन्द्रपाल कोल विधायक ने विधायक पद से हटने पर बहुत सक्रिय भूमिका नहीं निभाई है। लल्लूराम कोल ने समय-समय पर अपने को अनौपचारिक रूप से कोलों से जोड़ने का प्रयास किया है। इसी प्रकार अलीवा कोला जो जिला परिषद में , भंग होने से पहले तक मानिकपुर क्षेत्र में कोलों का प्रतिनिधित्व करते रहे हैं, ने कोई अहम भूमिका नहीं अदा की है। बरगढ़ क्षेत्र के दद्दन कोल ने जब से सरकारी अनुदान प्राप्त किया है, अन्य कोलों को अनुदान एवं ऋण आदि लाभ के विषय में जागृत करने की चेष्टा की है। इन्होने 1980 में मऊ विधान सभा क्षेत्र से कॉंग्रेस पार्टी से टिकट मांगा था, जब इनके बदले में शिरोमणि भाई को टिकट मिल गया तब से यह भी निष्क्रिय होकर रह गये हैं। मानिकपुर के गुढ़वा गांव के निवासी पुत्ती लाल कोल इन सब में सबसे कम उम्र के कोल नेता हैं, जो कोलों के विकास के लिए चिन्तन करते हैं। राजन कोल ''पाठा कोल अधिकार मंच'' के प्रमुख तो हैं, किन्तु इनकी भूमिका कोल समस्याओं का निराकरण कम अखिल भारतीय समाज सेवा संस्थान की छवि को अच्छा बनाये रखना ज्यादा है। इस प्रकार कुल मिलाकर पाठा के कोलों में कोई ऐसा नेतृत्व नहीं उभरा जो इनको अच्छे स्तर का नेतृत्व प्रदान कर सके।

कोलों के सामाजिक पार्श्व को जानने के लिये शोधार्थी द्वारा साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से जो तथ्य प्राप्त किये गये उनका विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है -

तालिका संख्या 3.15

कोल आदिवासी महिलाओं का आयु समूहवार विवरण

क्र.	चयनित ग्राम	आयु समूह														
		कुल उत्तरदात्री संख्या	10-20 वर्ष		20-30		30-40		40-50		50-60		60-70		70-80	
			सं0	%	सं0	%	सं0	%	सं0	%	सं0	%	सं0	%	सं0	%
1	इटवा डुडैला	100	10	10.0	20	20.0	50	50.0	28	28.0	17	17.0	02	2.0	00	0.0
2	टिकरिया	100	10	10.0	22	22.0	32	32.0	18	18.0	10	10.0	03	3.0	00	0.0
3	मानिकपुर	100	29	29.0	18	18.0	28	28.0	24	24.0	10	10.0	04	4.0	00	0.0
4	बरगढ बाजार	100	21	21.0	20	20.0	10	10.0	10	10.0	03	3.0	01	1.0	00	0.0
	योग -	**400**	**70**	**17.5**	**80**	**20.0**	**120**	**30.0**	**80**	**20.0**	**40**	**10.0**	**10**	**2.5**	**00**	**0.0**

स्रोत :- क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

तालिका संख्या 3.15 में चयनित अध्ययन क्षेत्र की कोल आदिवासी महिलाओं के आयु समूह सम्बन्धी विवरण का विश्लेषण किया गया है। क्षेत्र की 30-40 वर्ष आयु समूह की 120 महिलाओं की संख्या सर्वाधिक है इसका प्रतिशतांक 30.00 है। 70-80 वर्ष आयु समूह की महिलाओं का प्रतिशतांक शून्य है, जबकि 60-70 वर्ष आयु समूह की महिलाओं का प्रतिशतांक 2.5 है। यह प्रतिशतांक सबसे कम है। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि आयु समूह 20-30, 30-40 तथा 40-50 वर्ष आयु समूह की महिलाओं का प्रतिशत अधिक है। इस आयु समूह की महिलाओं की आर्थिक क्रियाकलापों में संलग्नता अधिक है। आयु समूह 10-20 वर्ष की आयु समूह की महिलाओं की संख्या समग्र में 70 है।

तालिका संख्या 3.16

कोल आदिवासी महिलाओं का धर्म सम्बन्धी विवरण

क्र.	चयनित ग्राम	धर्म सम्बन्धी विवरण								
		कुल उत्तरात्री	हिन्दू		मुस्लिम		सिख		इसाई	
			सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%
1	इटवा डुडैला	100	100	100.0	00	0.0	00	0.0	00	0.0
2	टिकरिया	100	100	100.0	00	0.0	00	0.0	00	0.0
3	मानिकपुर	100	100	100.0	00	0.0	00	0.0	00	0.0
4	बरगढ़ बाजार	100	100	100.0	00	0.0	00	0.0	00	0.0
	योग -	**400**	**400**	**100.0**	**00**	**0.0**	**00**	**0.0**	**00**	**0.0**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

तालिका संख्या 3.16 में आदिवासी कोल महिलाओं के धर्म सम्बन्धी विवरण का उल्लेख किया गया है । अध्ययन क्षेत्र की सभी चयनित महिलाएं हिन्दू धर्म को मानने वाली हैं। पाठा के इस भू-भाग में मुस्लिम तथा सिख धर्म के मानने वालों की संख्या शून्य है, चाहे वे आदिवासी हों या फिर गैर आदिवासी जन। ईसाई धर्म प्रचारकों ने अपने धर्म के प्रचार-प्रसार के माध्यम से इस क्षेत्र के आदिवासियों को धर्मान्तरण हेतु प्रोत्साहित करने का प्रयास, अपने सेवा कार्यो - जैसे चिकित्सा, शिक्षा आदि के माध्यम से किया, किन्तु क्षेत्रीय आदिवासी जन इससे अप्रभावित ही रहे तथा अपनी आदिवासी अस्मिता को संरक्षित रखने का कार्य किया है।

तालिका संख्या 3.17

कोल आदिवासी महिलाओं का शैक्षणिक विवरण

क्र	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	शिक्षा सम्बन्धी विवरण											
			अशिक्षित		क		ख		ग		घ		च	
			सं0	%	सं0	%	सं0	%	सं0	%	सं0	%	सं0	%
1	इटवा डुडैला	100	89	89.0	07	7.0	04	4.0	00	0.0	00	0.0	00	0.0
2	टिकरिया	100	82	82.0	10	10.0	08	8.0	00	0.0	00	0.0	00	0.0
3	मानिकपुर	100	50	50.0	13	13.0	17	17.0	20	20.0	00	0.0	00	0.0
4	बरगढ बाजार	100	71	71.0	14	14.0	10	10.0	05	5.0	00	0.0	00	0.0
	योग -	**400**	**292**	**73.0**	**44**	**11.0**	**39**	**9.75**	**25**	**6.25**	**00**	**0.0**	**00**	**0.0**

स्रोत :- क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - साक्षर/ प्राथमिक

ख - पूर्व माध्यमिक

ग - हाईस्कूल

घ - इण्टरमीडिएट

च - स्नातक तथा अन्य

आदिवासी कोल महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति का विश्लेषण तालिका संख्या 3.17 में किया गया है । अध्ययन क्षेत्र की 73.0 प्रतिशत महिलाएं अशिक्षित है। 11.0 प्रतिशत महिलाएं पूर्व माध्यमिक तथा 6.25 प्रतिशत महिलाएं हाईस्कूल तक की शिक्षा प्राप्त है। इण्टरमीडिएट तथा इससे उच्च स्तर की शिक्षा प्राप्त करने वाली महिलाओं का प्रतिशतांक शून्य है। हाईस्कूल स्तर तक की शिक्षा प्राप्त करने वाली महिलाएं मानिकपुर (20.0) एवं बरगढ़ बाजार (5.0) की है। मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार नगरीय क्षेत्र हैं, जबकि इटवा डुडैला तथा टिकरिया जंगल में आबाद कोल बाहुल्य ग्राम हैं। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्राधारित संरचना का प्रभाव शैक्षणिक स्थिति पर पड़ता है। नगरीय क्षेत्र में अधिवासित कोल महिलाओं में शैक्षणिक जागरूकता ग्रामीण क्षेत्र से अधिक है।

तालिका संख्या 3.18

कोल आदिवासी महिलाओं की वैवाहिक स्थिति सम्बन्धी विवरण

क्र.	चयनित ग्राम	वैवाहिक स्थिति								
		कुल उत्तरदात्री	अविवाहित		विवाहित		विधवा		तलाकशुदा/ परित्यक्ता	
			सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%
1	इटवा डुडैला	100	14	14.0	84	84.0	01	1.0	01	1.0
2	टिकरिया	100	13	13.0	81	81.0	03	3.0	03	3.0
3	मानिकपुर	100	15	15.0	62	62.0	14	14.0	09	9.0
4	बरगढ़ बाजार	100	14	14.0	63	63.0	12	12.0	11	11.0
	योग -	**400**	**56**	**14.0**	**290**	**72.5**	**30**	**7.5**	**24**	**6.0**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

तालिका संख्या 3.18 में कोल आदिवासी महिलाओं की वैवाहिक स्थिति को स्पष्ट किया गया है। क्षेत्र की 290 (72.5) महिलाएं विवाहित हैं जबकि 14.0 प्रतिशत महिलाएं अविवाहित हैं। इनकी संख्या 56 है। 7.5 (30) प्रतिशत महिलाएं विधवा हैं तथा 6.0 प्रतिशत महिलाएं तलाकशुदा अथवा परित्यक्ता हैं।

मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार की उत्तरदात्रियों में से तलाकशुदा अथवा परित्यक्ताओं का प्रतिशत क्रमशः 9.0 (90) और 11.0 (11) है जो तुलनात्मक रूप से इटवा डुडैला तथा टिकरिया ग्रामों की महिलाओं से अधिक है। कमोवेश यही स्थिति विधवा महिलाओं की है।

तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कोल आदिवासियों में तलाक जैसी समस्याऐं विद्यमान हैं।

तालिका संख्या 3.19

कोल आदिवासी महिलाओं के पतियों में नशा करने की प्रवृत्ति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	पति की नशा करने की प्रवृत्ति			
			हॉ		नहीं	
			सं.	%	सं.	%
1	इटवा डुडैला	100	37	37.0	63	63.0
2	टिकरिया	100	42	42.0	58	58.0
3	मानिकपुर	100	67	67.0	33	33.0
4	बरगढ़ बाजार	100	62	62.0	38	38.0
	योग -	**400**	**208**	**52.0**	**192**	**48.0**

स्रोत : क्षेत्रीय संर्वेक्षण के आधार पर

तालिका संख्या 3.19 में आदिवासी कोल महिलाओं के पतियों के नशा करने की प्रवृत्ति को स्पष्ट किया गया है। अध्ययन क्षेत्र की जिन कोल महिलाओं का मानना है कि उनके पति नशा नहीं करते हैं उनका प्रतिशतांक 48.0 है। इनकी संख्या 192 है किन्तु इनमें वे महिलाएं भी सम्मिलित हैं जो अविवाहित हैं। इनकी संख्या 56 (14.0) है। अध्ययन क्षेत्र की 52.0 प्रतिशत महिलाओं ने बताया कि उनके पति कोई न कोई नशा करते हैं। मानिकपुर क्षेत्र के 67.00 प्रतिशत पुरूष नशा करते हैं यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। इटवा डुडैला के 37.0 प्रतिशत पुरूष नशे के आदी हैं इनका प्रतिशत सबसे कम है। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि क्षेत्र के नगरीय क्षेत्रों के पुरूषों में नशा की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है जबकि जंगलों में आबाद 'कोलान' क्षेत्रों के कोल आदिवासी पुरूषों में नशा करने की प्रवृत्ति कम पायी जाती है।

तालिका संख्या 3.20

नशा करने के साधनों का विवरण

क्र.	चयनित ग्राम	नशा करने वालों की संख्या	नशा करने साधन/ प्रकार				
			क	ख	ग	घ	च
			संख्या	संख्या	संख्या	संख्या	संख्या
1	इटवा डुडैला	37	30	25	32	02	01
2	टिकरिया	42	25	36	37	07	00
3	मानिकपुर	67	43	55	60	10	04
4	बरगढ़ बाजार	62	46	56	52	12	07

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - शराब

ख - पान/ गुटका

ग - बीड़ी

घ - अफीम /चरस/ स्मैक

च - अन्य

तालिका संख्या 3.20 में कोल आदिवासी महिलाओं के पतियों के नशा करने के साधनों का विवरण प्रस्तुत किया गया है। अध्ययन क्षेत्र के कोल आदिवासियों द्वारा नशा करने के जिन साधनों का उपयोग किया जाता है उनमें शराब, पान, गुटका, बीड़ी ,अफीम, चरस, स्मैक के साथ अन्य साधन महत्वपूर्ण हैं। ग्रामीण क्षेत्र के आदिवासी कोलों में शराब, पान, गुटका, बीड़ी आदि के सेवन की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है। इन क्षेत्रों के लोगों में अफीम, चरस, स्मैक आदि के सेवन करने वाले आदिवासी कोलों की संख्या कमोवेश कम पायी जाती है। नगरीय क्षेत्रों के समीप अधिवासित कोलों में अफीम, चरस, स्मैक के सेवन

की प्रवृत्ति अधिक दिखाई देती है क्योंकि इन क्षेत्रों में ऐसे नशे के साधनों की उपलब्धता अधिक होती है । वे या तो अपनी आमदनी के द्वारा ऐसे पदार्थो को क्रय कर लेते हैं या फिर गैर आदिवासी लोगों की सेवा करने से उनके साथ ऐसे पदार्थो के सेवन का अवसर प्राप्त हो जाता है। वे इसके बदले कोल लोगों से अपने विभिन्न प्रकार के बेगार करवाते रहते हैं। ग्रामीण अधिवासित कोल प्रायः अपनी बनाई शराब का सेवन करते हैं क्योंकि इन क्षेत्रों में महुआ पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है जिससे वे शराब उतारकर उसका सेवन करते हैं जो एक गैर कानूनी कार्य है।

तालिका संख्या 3.21

कोल आदिवासी महिलाओं के नशा करने की प्रवृत्ति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	महिलाओं में नशा करने की प्रवृत्ति			
			हाँ		नहीं	
			सं.	%	सं.	%
1	इटवा डुडैला	100	24	24.0	76	76.0
2	टिकरिया	100	29	29.0	71	71.0
3	मानिकपुर	100	77	77.0	23	23.0
4	बरगढ़ बाजार	100	60	60.0	40	40.0
	योग -	**400**	**190**	**47.5**	**210**	**52.5**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

तालिका संख्या 3.21 में आदिवासी कोल महिलाओं में भी नशा करने की प्रवृत्ति पायी जाती है क्योंकि कोलों की आर्थिक संरचना में महिलाएं धुरी का कार्य करती हैं और वे प्रायः आर्थिक क्रियाओं के लिए अपने आवासों से बाहर जंगलात में कार्य करती हैं तथा विक्रय हेतु समीपस्थ बाजारों जैसे कर्वी, इलाहाबाद, बाँदा, अतर्रा जैसे नगरीय क्षेत्रों में जाती रहती है। परिणामतः उनमें भी नशा करने की प्रवृत्ति पायी जाती है। अध्ययन क्षेत्र की

190 (47.5) कोल महिलाओं ने स्वीकार किया है कि वे किसी न किसी प्रकार के नशीले पदार्थो का सेवन करती हैं और वे उनकी आदी हैं। 52.5 प्रतिशत महिलाओं ने बताया कि वे किसी प्रकार के नशीले पदार्थो का सेवन नहीं करती हैं। इनमें वे कोल महिलाएं सम्मिलित हें जो अधिक आयु की है या फिर उन्हें नशे के साधन उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में नगरीय क्षेत्रों - मानिकपुर एंव बरगढ़ बाजार की कोल महिलाओं में नशे की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है। सम्भवतः ग्रामीण क्षेत्र की कोल आदिवासी महिलाओं को नशे के पदार्थ सरलता से उपलब्ध नहीं हो पाते हैं या फिर उनकी आय इतनी अधिक नहीं होती कि वे अपने लिए नशीले पदार्थो को क्रय कर सकें।

तालिका संख्या 3.22

कोल आदिवासी महिलाओं के नशा करने के साधनों का विवरण

क्र.	चयनित ग्राम	नशा करने वालों की संख्या	नशा करने के साधनों का विवरण			
			क	ख	ग	घ
			संख्या	संख्या	संख्या	संख्या
1	इटवा डुडैला	24	07	10	24	00
2	टिकरिया	29	10	15	20	00
3	मानिकपुर	77	20	29	56	10
4	बरगढ़ बाजार	60	21	30	60	09
	योग -	**190**				

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - शराब

ख - भांग/ गाँजा / बीड़ी

ग - गुटका

घ - अफीम /स्मैक /चरस

जिन कोल आदिवासी महिलाओं में नशे की प्रवृत्ति पायी जाती है. उनकी संख्या 190 है। तालिका संख्या 3.22 में कोल महिलाओं द्वारा उपयोग किए जाने वाले नशीले पदार्थो का उल्लेख किया गया है । अध्ययन क्षेत्र की कोल महिलाओ द्वारा शराब, बीड़ी, गुटका, अफीम, चरस, स्मैक आदि का सेवन किया जाता है। महिलाओं द्वारा गुटका तथा बीड़ी का सेवन अधिक किया जाता है। शराब का सेवन करने वाली कोल महिलाओं की संख्या कमोवेश कम है। अफीम ,स्मैक, चरस का सेवन करने वाली कोल महिलाओं की संख्या मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार क्षेत्र में पायी गयी जहाँ ऐसे पदार्थो की उपलब्धता अधिक पायी जाती है । गैर आदिवासी लोगों द्वारा कोल महिलाओं को अपने स्वार्थो की पूर्ति के लिए ऐसे पदार्थो के सेवन का आदी बना दिया जाता है । नशे की आदी हो जाने से ऐसी महिलाएं उनके इशारों पर कार्य करने को बाध्य हो जाती है।

एक से अधिक प्रकार के नशे की प्रवृत्ति कोल महिलाओं में पायी जाती है। शराब का सेवन प्रायः ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं द्वारा अपने द्वारा उतारी गयी शराब का किया जाता है, ऐसे गैर कानूनी कार्य के लिए प्रायः पुलिस द्वारा उन्हें उत्पीडन का शिकार होना पड़ता है।

तालिका संख्या 3.23

कोल आदिवासी महिलाओं का बच्चों की शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	बच्चों की शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण			
			हॉ		नहीं	
			सं.	%	सं.	%
1	इटवा डुडैला	100	42	42.0	58	58.0
2	टिकरिया	100	45	45.0	55	55.0
3	मानिकपुर	100	77	77.0	23	23.0
4	बरगढ़ बाजार	100	82	82.0	18	18.0
	योग -	**400**	**246**	**61.5**	**154**	**38.5**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

कोल आदिवासी महिलाओं में अपने बच्चों को शिक्षा दिलाने के प्रति दृष्टिकोण को तालिका संख्या 3.23 में स्पष्ट किया गया है। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि क्षेत्र की 61.5 प्रतिशत कोल महिलाएं अपने बच्चों को शिक्षा दिलानें की इच्छा रखती हैं । इन महिलाओं में वे महिलाएं भी सम्मिलित हैं जो अभी अविवाहित हैं किन्तु वे भविष्य के प्रति अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करना उचित मानती हैं। क्षेत्र की 154 (38.5) कोल आदिवासी महिलाएं बच्चों को शिक्षा दिलाने में कोई रूचि नहीं रखती हैं या फिर बच्चों को शिक्षित कराने को उचित नहीं मानती हैं। इटवा डुडैला की 42.0 प्रतिशत महिलाएं अपने बच्चों को शिक्षित कराना उचित मानती हैं। यह प्रतिशतांक सबसे कम है जबकि बरगढ़ बाजार क्षेत्र की 82.0 प्रतिशत महिलाएं अपने बच्चों को शिक्षा दिलाना उचित मानती है। यह प्रतिशत सबसे अधिक है तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्र की कोल आदिवासी महिलाओं की तुलना में नगरीय क्षेत्र की आदिवासी महिलाओं में बच्चों को शिक्षा

दिलाने में अधिक रूचि है। सम्भवतः नगरीय क्षेत्र में उपलब्ध शिक्षा संस्थाओं तथा गैर आदिवासी बच्चों को विद्यालयों में जाते देखने का प्रभाव कोल आदिवासी महिलाओं पर पड़ता है। ग्रामीण आदिवासी क्षेत्रों में शिक्षा संस्थाओं का अभाव तथा शैक्षणिक परिवेश की अनुपलब्धता, कोल आदिवासी महिलाओं में अपने बच्चों के प्रति शैक्षणिक अभिरूचि उत्पन्न करने में सकारात्मक प्रभाव नहीं डाल पाता है।

******

अध्याय–4

4. आदिवासी कोल महिलाओं की व्यावसायिक एवं आर्थिक संलग्नता

4.1 आदिम अर्थव्यवस्था

4.2 कृषि अर्थव्यवस्था

4.3 औद्योगिक क्रान्ति

4.4 औद्योगिक अर्थ व्यवस्था

4.5 कोल महिलाओं की आर्थिक संरचना

4. आदिवासी कोल महिलाओं की व्यावसायिक एवं आर्थिक संलग्नता

पूर्व अध्याय में कोल आदिवासियों के सामाजिक पार्श्व की विवेचना की गयी है । प्रस्तुत अध्याय में कोल आदिवासी महिलाओं की व्यावसायिक एवं आर्थिक संलग्नता का विवरण प्रस्तुत किया गया है ।

4.1 आदिम अर्थव्यवस्था

आदिम अर्थ व्यवस्था में प्राकृतिक पर्यावरण पर निर्भरता पाई जाती है। आर्थिक क्रियाए, भौगोलिक परिस्थितियॉ जैसे वर्षा ,धूप, बाढ़ आदि पर निर्भर करती है। हकोविट्स और लोवी ने इसका विस्तार से विवेचन किया है। आदिम समाजों में आर्थिक क्रियाएं और श्रम विभाजन की पद्धति काफी सरल थी। श्रम विभाजन आयु और लिंग पर आधारित था। व्यक्तिगत संपत्ति की धारणा अत्यन्त आरम्भिक अवस्था में थी। परिवार, नातेदारी, समूह और उत्पादन के साधनों के स्वामी थे।

आदिम समाज अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आत्मनिर्भर थी अतः उसमें व्यापार की पद्धति का विकास नहीं हुआ था। इन समुदायों में भेंट देने की प्रथा एक ओर तो सामाजिक दायित्व के रूप में विकसित हुई और दूसरी ओर एक प्रकार से यह आदिम व्यापार का भी एक रूप था। आतिथ्य एक प्रकार की आर्थिक सेवा का अंग था। आखेट तथा खाद्य संकलन में जो कुछ भी बच सकता था, उसमें आदिम समाजों में निम्नलिखित प्रथाएं विकसित हुई :-

1. उपहार अथवा भेंट
2. आतिथ्य
3. मुफ्त उधार लेना

4. मुफ्त उधार देना

5. सामान्य उपयोग

इन समुदायों में संपत्ति की तुलना में व्यक्तिगत अथवा पारिवारिक सम्मान अधिक महत्वपूर्ण माना जाता था।

4.2 कृषि अर्थव्यवस्था

आदिम समुदायों में धीरे-धीरे जंगली जानवरों तथा पौधों के स्थान पर मनुष्य ने जमीनों का उपयोग तथा पौधों को उगाने का ज्ञान विकसित किया। इस स्थिति में भी भूमि पूरे वंश समूह अथवा समुदाय की संपत्ति थी। धीरे-धीरे व्यक्तिगत संपत्ति की अवधारणा विकसित हुई। समुदाय में सभी लोग खेती के काम, घर बनाने, जंगल को काटने अथवा आखेट में एक दूसरे से सहयोग करते थे। पशुओं और पौधों के पालन तथा सामूहिक प्रयत्न से जंगल की सफाई के कारण कृषि व्यवस्था विकसित हुई। कृषि व्यवस्था के साथ हल का विकास हुआ। मानवीय श्रम के साथ-साथ पशुओं के श्रम का उपयोग करना भी मनुष्य ने सीखा। उपयोग से अधिक उत्पादन की शुरूआत हुई। इस अतिरिक्त उत्पादन के कारण एक परिवार अथवा एक समुदाय का दूसरे परिवारों और समुदायों से अपने अतिरिक्त उत्पादन का विनिमय आरंभ हुआ। विनिमय के लिए बिचौलियों की प्रथा विकसित हुई। कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था की निम्नलिखित विशेषताएं थी :

1. उत्पादन के मुख्य स्रोत के रूप में भूमि का उपयोग
2. भूमि का सामुदायिक, पारिवारिक अथवा व्यक्तिगत स्वामित्व
3. अतिरिक्त उत्पादन के लिए पारस्परिक विनिमय की पद्धति का विकास
4. नियमित हाटों का विकास
5. स्थानीय व्यापार के केन्द्रों के रूप में ग्रामीण बाजारों का विकास
6. ग्रामों के मुखियों अथवा कई ग्रामों के सरदारों की प्रथा का विकास

खेतों, हस्तशिल्प, पूर्व औद्योगिक नगर और क्षेत्रीय एकीकरण के फलस्वरूप सामंतवाद की नींव पडी। इस व्यवस्था में उत्पादन की इकाई परिवार थी। भूमि उत्पादन का मुख्य स्रोत थी। सामंत के पास आर्थिक और राजनीतिक स्वामित्व दोनों थे। इस व्यवस्था में केन्द्रीय सत्ता नहीं थी। भूमि और सम्पत्ति के स्वामी ग्राम समुदायों और किसानों से रूपया तथा सेवाएं प्राप्त करते थे। इसके बदले में वे आक्रमणकारियों तथा लुटेरों से ग्रामीण एवं किसानों की रक्षा करते थे। इस व्यवस्था में श्रमविभाजन का स्वरूप और भी विकसित हुआ।

उत्पादित वस्तुओं की विविधता के साथ नगरों का विकास हुआ। सामंतो और स्वामियों के राजनीतिक प्रभाव क्षेत्रों से धीरे-धीरे आधुनिक राष्ट्र के सिद्धान्त पर आधारित राज्यों का उदय हुआ। भूमि पर आधारित कृषि अर्थव्यवस्था में जिन धातुओं का उपयोग आरंभ हुआ। उनमें मुख्य धातुएं निम्नलिखित थी।

1. तांबा
2. चांदी
3. सोना
4. लोहा

लकड़ी और लोहे के कारण पहिए पर चलने वाले रथों और बैलगाड़ियों का विकास हुआ। बैल, घोड़ों, ऊँटों एवं भैसों की शक्ति का उपयोग कृषि, यातायात और व्यापार आदि के लिए हुआ। विश्व के अनेक हिस्सों में हाथियों का भी उपयोग हुआ। उत्पादन और यातायात में पशुओं के उपयोग से आदमी के श्रम की बचत हुई।

सामाजिक संरचना के श्रम विभाजन के विकास के साथ सामंत, कृषक, शिल्पी कृषि श्रमिक अथवा दास आदि वर्गों की उत्पत्ति हुई। कृषि के विस्तृत क्षेत्र, अतिरिक्त उत्पादन, हस्तशिल्प के विकास और राजनीतिक सत्ता के विस्तार के साथ व्यापारिक और पूर्व औद्योगिक नगरों की अर्थव्यवस्था विकसित हुई।

आदिम और कृषि पर आधारित दोनों अर्थव्यवस्था भौगोलिक पर्यावरण पर निर्भर थी। दोनों में वस्तुओं एवं सेवाओं के विनिमय के जरिए तथा जनरीतियों से होता था। कृषि पर आधारित व्यवस्था में भाषा, संगठित धर्म तथा स्थायी ठिकानों का विकास हुआ। इस काल में गृह निर्माण की पद्धति में काफी परिष्कार हुआ। बड़े भवन और किले बनाने की क्षमता विकसित हुई। संगीत के सुरों और वाद्यों का विकास हुआ। नृत्य और नाटक की कला विकसित हुई।

इस तरह कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था में सांस्कृतिक क्षेत्र में भी काफी परिष्कृत हुए। पाल वाली नावों के कारण समुद्रों को पार कर दूर के देशों से व्यापार की पद्धति इस काल मं विकसित हुई। इस काल में आर्थिक क्रिया की एक अन्य महत्वपूर्ण प्रविधि विनिमय के लिए मुद्रा का प्रचलन था।

4.3 औद्योगिक क्रान्ति

कृषि हस्तशिल्प वाणिज्य में अतिरिक्त उत्पादन से हुए लाभ तथा सामंती राजनीतिक पद्धति द्वारा स्थापित शांति और व्यवस्था के चलते यूरोप में औद्योगिक क्रांति की शुरूआत हुई। सामंती व्यवस्था में कृषि और शिल्प के औजार छोटे थे। इनमें मानवीय श्रम अधिक लगता था। उत्पादन में समय भी अधिक लगता था और उत्पादन की मात्रा सीमित होती थी।

औद्योगिक क्रान्ति और शुरूआत के मूल में मानव तथा पशु श्रम के स्थान पर यंत्रों की शक्ति का उपयोग था। औद्योगिक क्रांन्ति के साथ विशाल यंत्र कोयला से उत्पादित भाप द्वारा संचालित होने लगे। भाप की जगह प्रायः एक सदी बाद बिजली ने ले ली। उत्पादन में यंत्रों के बढ़ते प्रयोग के कारण उत्पादन, यातायात और वितरण की प्रणाली में इतने व्यापक परिवर्तन हुए कि इस प्रक्रिया को औद्योगिक क्रान्ति कहा जाता है। औद्योगिक

क्रांन्ति ने आधुनिक अर्थव्यवस्था, उत्पादन पद्धति, संगठनों और नए मानवीय संबंधों को जन्म दिया है।

यहां एक प्रश्न विचारणीय है कि औद्योगिक क्रांन्ति की शुरूआत इग्लैण्ड और पश्चिमी यूरोप में ही क्यों हुई ? इस प्रश्न का उत्तर कार्ल मार्क्स और मैक्स बेबर ने दिया है।

कार्ल मार्क्स के अनुसार जर्जर सामंती समाज के पतन के साथ ही औद्योगिक पूंजीवादी व्यवस्था का अभ्युदय हुआ। इसके विकास के पीछे सामंती व्यवस्था के क्रान्तिकारी तत्वों के अतिरिक्त कुछ अन्य सामाजिक परिस्थितियां भी थी। अमेरिका की खोज एवं अफ्रीका के दक्षिणी किनारे से होकर यातायात की शुरूआत ने उभरते हुए पूंजीवादी वर्ग के लिए उद्योगों और बाजार के नए द्वारा खोल दिए। भारत और चीन के बाजार, अमेरिका का उपनिवेशीकरण, अन्य उपनिवेशों से व्यापार, विनिमय और वस्तुओं के उत्पादन के साधनों में वृद्धि ने वाणिज्य, नौ परिवहन तथा उद्योग को ऐसी तेज गति से विकसित किया जो इतिहास में इसके पहले कभी नहीं हुआ था।

नए बाजारों की बढ़ती आवश्यकता की पूर्ति, श्रेणियों के चतुर्दिक संगठित सामंती उत्पादन प्रणाली के द्वारा संभव नहीं थी। सामंती उत्पादन की पद्धति यंत्रों पर आधारित उत्पादन की व्यवस्था के सम्मुख न टिक सकी। परिवार तथा श्रेणी पर आधारित श्रम विभाजन कारखानों के श्रम विभाजन के साथ ही लुप्त हो गया। भाप और यंत्रों के कारण औद्योगिक उत्पादन में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। मार्क्स की मान्यता है कि अठारहवीं सदी में घटित इंग्लैण्ड की औद्योगिक क्रान्ति ने संपूर्ण विश्व को बाजार में बदल दिया। सामंती व्यवस्था को समाप्त कर पूंजीपति वर्ग ने मार्क्स के अनुसार अत्यन्त क्रान्तिकारी भूमिका निभाई। इस व्यवस्था के अन्तर्निहित दोष भी है। यह व्यवस्था मुक्त व्यापार और शोषण पर आधारित है। इस व्यवस्था ने अब तक के अत्यन्त सम्मानित पेशेवरों जैसे डाक्टर, वकील, धर्म पुरोहित, कृषि तथा वैज्ञानिकों को वेतन पाने वाले मजदूर में बदल दिया है।

इसने उत्पादन के साधनों उत्पादन के सम्बन्धों और फलस्वरूप समस्त सामाजिक संबंधों को ही बदल दिया है।

मार्क्स के अनुसार·उपनिवेशों के शोषण, यातायात की नई सुविधाओं, उद्योग और वाणिज्य के विकास तथा सामंती व्यवस्था के अंतर्विरोध के कारण औद्योगिक पूंजीवादी व्यवस्था अठारहवीं सदी के मध्य के इंग्लैण्ड में विकसित होने लगी। इसके बात तो विश्व बाजार की लूट और उपनिवेशों के शोषण के चलते औद्योगिक विकास की इस प्रक्रिया का कोई अंत ही नहीं था। यह व्यवस्था पूंजी और लाभ की भावना पर आधारित है अतः इसे पूँजीवादी व्यवस्था कहते हैं।

मार्क्स के मत के ठीक विपरीत मैक्स वेवर के अनुसार औद्योगिक व्यवस्था और पूँजीवादी प्रणाली विवकेशीलता, संचय की प्रवृत्ति, प्रतिस्पर्धा, कठिन श्रम, समय के मूल्य तथा कर्तव्य भावना पर अधारित हैं। पूँजीवादी की उपरोक्त वर्णित चेतना के मूल में प्रोटेस्टैण्ट धर्म के आचारशास्त्र का हाथ है। प्रोटेस्टैण्ट धर्म अपने अनुयायियों को कर्तव्य बोध, समय के मूल्य तथा बचत के नैतिक पक्ष की सीख देता हैं अपने तर्क की पुष्टि में मैक्स वेवर का कहना है कि आरंभिक उद्योगीकरण और पूँजीवाद का विकास प्रोटेस्टैण्ट धर्म के मानने वाले देशों इग्लैण्ड और अमेरिका में हुआ। औद्योगिक क्रान्ति के बाद प्रौद्योगिकी, ऊर्जा तथा उत्पादन पद्धति में हुए व्यापक परिवर्तन ने आधुनिक आर्थिक व्यवस्था को जन्म दिया है।

4.4 औद्योगिक अर्थ व्यवस्था

उन्नीसवीं सदी के मध्य के बाद में औद्योगिक क्रान्ति के बाद के औद्योगीकरण ने एक निश्चित व्यवस्था का रूप ले लिया है। प्रौद्योगिकी, उत्पादन तथा संगठन की दृष्टि से इसकी कुछ विशेषताएं हैं।

औद्योगीकरण पर आधारित अर्थव्यवस्था अत्यन्त जटिल है। इस व्यवस्था में मनुष्य पर्यावरण से नियंत्रित और प्रभावित होने के स्थान पर पर्यावरण को यथाशक्ति

नियत्रिंत करने की चेष्टा करता है। औद्योगिक अर्थव्यवस्था, विशेषीकरण, जटिल श्रम विभाजन, बडे पैमाने पर उत्पादन तथा विशाल यंत्रों पर आधारित है। मूर का कथन है कि इस व्यवस्था में उत्पादन की इकाई के रूप में परिवार की भूमिका समाप्त हो गई है। यंत्रों का प्रभाव कारखानों तक सीमित नहीं रह गया है बल्कि इसने खेती की पद्धति को भी प्रभावित किया है। इस तरह मनुष्य अपनी भौतिक परिस्थितियों पर आश्रित होने के स्थान पर प्रौद्योगिकी द्वारा निर्मित परिस्थितियों पर अधिक निर्भर होता जा रहा है। जनजातीय और कृषक समाजों में उत्पादन की पद्धति और मात्रा, वर्षा, धूप, भूमि की प्रकृति, उर्बरा शक्ति तथा मानवीय श्रम पर निर्भर करती थी। आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था तथा प्रौद्योगिकी ने मनुष्य और उसके पर्यावरण के संबंध को बदल दिया है। आधुनिक व्यवस्था के अंतर्गत भाप, बिजली, आणविक शक्ति तथा इनके द्वारा संचालित प्रौद्योगिकी ने तापमान तथा वर्षा पर निर्भरता को काफी हद तक कम किया है। नए उपकरणों के कारण मानवीय श्रम में बचत हुई है और थोडे समय में मनुष्य अधिक उत्पादन कर सकता है। इस तरह नए यंत्रों ने पुरानी परिस्थितिकी को न केवल बदल दिया है बल्कि नई परिस्थिति को भी जन्म दिया है जिसके अंतर्गत प्रकृति प्रदत्त पर्यावरण के स्थान पर मानवनिर्मित परिस्थितियां और पर्यावरण विकसित हुए हैं।

आधुनिक प्रौद्योगिकी और मानवनिर्मित परिस्थितियों ने उत्पादन की पद्धति और उसकी मात्रा में परिवर्तन के साथ ही उत्पादन के सम्बन्धों में परिवर्तन किया है। पुरानी सरल व्यवस्था के अंतर्गत आर्थिक संगठन अत्यन्त सीमित था। परिवार ही भूमि अथवा दस्तकारी के उपकरणों का स्वामी होता था। परिवार के लोग ही अपने श्रम से उत्पादन करते थे। अपने उत्पादन के साधनों जैसे हल, बैल, करघा, भट्ठी तथा उत्पादित वस्तुओं अनाज, कपड़ा, औजार आदि का प्रबंध परिवार करता था। उद्योगों के कारण यह अब नए रूप, नई विशेषताओं के साथ हमारे सामने उपस्थित हुआ है। औद्योगिक आर्थिक व्यवस्था की निम्नांकित विशेषताएं हैं :-

1. श्रम के स्थान पर पूंजी का महत्व
2. उत्पादन की इकाई के रूप में परिवार
3. मानवीय और पशुओं के श्रम के स्थान पर विशाल यंत्रों का उपयोग
4. मानवीय तथा पशुश्रम पर आधारित ऊर्जा के स्थान पर भाप, बिजली तथा आणविक ऊर्जा का उत्पादन में उपभोग
5. जीविका के लिए किए गए उत्पादन के स्थान पर विनिमय और लाभ की भावना से किया गया उत्पादन।
6. स्थानीय हाट और बाजार के स्थान पर विश्व बाजार का उदय
7. सहयोग के स्थान पर प्रतिस्पर्धा
8. यातायात तथा संचार के समुन्नत साधन
9. वेतन पर आश्रित और पेशेवर वर्ग
10. मुद्रा पर आधारित अर्थव्यवस्था
11. विशाल कम्पनियों तथा निगमों का जन्म
12. उद्योगपतियों के स्थान पर प्रबंधकों द्वारा उद्योगों का संचालन
13. ग्रामीण समुदायों एवं कृषक व्यवस्था के स्थान पर नगरों और प्रौद्योगिकी पर आधारित अर्थव्यवस्था
14. अत्यन्त जटिल श्रम विभाजन की पद्धति

आधुनिक औद्योगिकी व्यवस्था ने कम्पनी, निगम, शेयर बाजार, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों, बैंक, उद्योगपतियों तथा श्रमिकों के संघ आदि को जन्म दिया है। समाज वैज्ञानिक इन विशाल आर्थिक समूहों को औपचारिक संगठन कहते हैं। ये आर्थिक संगठन नियम, प्रणाली, अवैयक्तिक संबंध तथा आर्थिक हित की पूर्ति की भावना पर आधारित है। इन आर्थिक संगठनों की निम्नांकित विशेषताएं हैं :-

1. इनकी सदस्यता निश्चित नियमों पर आधारित होती है। एक निश्चित अवधि के बाद इनके पदाधिकारियों का चुनाव होता है।

2. इनके सदस्यों की संख्या कभी-कभी इतनी अधिक होती है और इनका आकार इतना बड़ा होता है कि सदस्यों के बीच व्यक्तिगत और प्रत्यक्ष संपर्क का अभाव पाया जाता है।

3. ये सगंठन उत्पादन, वितरण अथवा विनिमय के निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सोच समझ कर बनाये जाते हैं।

4. इनके आकार की विशालता तथा निश्चित उद्देश्यों के कारण इनके सदस्यों के पारस्परिक संबंध भावना के स्थान पर औपचारिक और विधि सम्मत नियमों पर आधारित होते हैं।

5. इन संगठनों के सदस्यों के बीच निश्चित अवधि के बाद होने वाली बैठकों, परिपत्रों और समाचार पत्रों आदि के द्वारा संपर्क स्थापित होता है।

कोल महिलाओं की आर्थिक संलग्नता

अध्ययन क्षेत्र के क्षेत्रीय सर्वेक्षण में आदिवासी कोलों के आर्थिक स्थिति को जानने के लिये सर्वेक्षण से जो तथ्य प्राप्त किये गये उनका वर्गीकरण निम्नवत है -

तालिका संख्या 4.5

आदिवासी कोल परिवारों में कृषि योग्य भूमि की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	कृषि योग्य भूमि की स्थिति			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	इटवा डुडैला	100	45	45.0	55	55.0
2	टिकरिया	100	52	52.0	48	48.0
3	मानिकपुर	100	31	31.0	69	69.0
4	बरगढ़ बाजार	100	36	36.0	64	64.0
	योग -	**400**	**164**	**41.0**	**236**	**59.0**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

तालिका संख्या 4.5 में कोल परिवारों में कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता की स्थिति को दर्शाया गया है। अध्ययन क्षेत्र के 164 (41.0) उत्तरदात्रियों ने स्पष्ट किया कि उनके पास कृषि से सम्बन्धी भूमि उपलब्ध है। 59.0 प्रतिशत कोलों के पास कृषि योग्य भूमि नहीं है। अध्ययन क्षेत्र के टिकरिया के कोलों के पास भू-स्वामित्व का प्रतिशतांक सर्वाधिक (52.0) है। मानिकपुर के कोल जिनके पास भू-स्वामित्व नहीं है उनका प्रतिशतांक 31.0 है। इस क्षेत्र के 69.0 प्रतिशत कोल परिवारों के पास कृषि योग्य भूमि नहीं है। इटवा डुडैला के 45.0 प्रतिशत कोल परिवारों के पास कृषि योग्य भूमि है। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कोलों के पास कृषि योग्य भूमि की अनुपलब्धता है जिससे उनका जीवन अभावग्रस्त बना रहता है।

तालिका संख्या 4.6

कृषि योग्य भूमि के प्राप्त होने का स्रोत

क्रं.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	खेत कृषि योग्य भूमि कहां से प्राप्त हुई					
			पूर्वजों से		स्वयं से		सरकार से प्राप्त	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	45	38	84.4	02	4.5	05	11.1
2	टिकरिया	52	40	76.9	04	7.6	08	15.5
3	मानिकपुर	31	15	48.5	09	29.0	07	22.5
4	बरगढ बाजार	36	19	52.7	11	30.5	06.	16.8
	योग -	**164**	**112**	**68.4**	**26**	**15.8**	**26**	**15.8**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

जिन कोल परिवारों के पास कृषि योग्य भूमि है उन्हें भूमि कहाँ से प्राप्त हुई है उनके स्रोतों का उल्लेख तालिका संख्या 4.6 में किया गया है। क्षेत्र के 68.4 प्रतिशत कोलों को भू-स्वामित्व की प्राप्ति अपने पूर्वजों से हुई है। यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। 15.8 प्रतिशत कोलों ने स्वयं तथा इतने ही प्रतिशत (15.8) कोलों को सरकार द्वारा पट्टे में भूमि

प्राप्त हुई है। ग्रामीण क्षेत्र में अधिवासित इटवा डुडैला के 84.4 प्रतिशत कोलों को अपने पूर्वजों से भूमि विरासत में प्राप्त हुई है। यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। मानिकपुर जो नगरीय भू-भाग है, के अधिवासित कोलों 48.5 प्रतिशत कोलों को अपने पूर्वजों से कृषि योग्य भूमि प्राप्त हुई है। मानिकपुर के 22.5 प्रतिशत कोलों को सरकारी पट्टे प्राप्त हुए हैं । यह प्रतिशत सरकारी पट्टा प्राप्त करने वाले कोलों का सबसे अधिक है। बरगढ़ बाजार के 30.5 प्रतिशत कोलों ने स्वयं कृषि योग्य भूमि को क्रय किया है। इटवा डुडैला में स्वयं भूमि क्रय करने वालों का प्रतिशत 4.5 है यह प्रतिशत अध्ययन क्षेत्र का सबसे कम है। जिन कोल परिवारों के पास भूमि है उसका होना न होने के तुल्य है क्योंकि ग्रामीण क्षेत्र इटवा डुडैला तथा टिकरिया के जिन भागों में कोलों का भू-स्वामित्व है वह या तो बंजर है या फिर उबड़-खाबड़ है। नगरीय भू-भाग के मानिकपुर तथा बरगढ़ बाजार के जिन कोलों को सरकारी अनुदान के रूप में कृषि योग्य भूमि प्राप्त हुई है उसका वास्तविक स्वामित्व उनके पास नहीं है। उनकी भूमि पर क्षेत्रीय दादुओं का कब्जा है।

तालिका संख्या 4.7

उपज की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	उपज की स्थिति			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	इटवा डुडैला	45	08	17.7	37	82.3
2	टिकरिया	52	11	21.1	41	78.9
3	मानिकपुर	31	13	41.9	18	58.1
4	बरगढ़ बाजार	36	14	38.8	22	61.2
	योग -	**164**	**46**	**28.1**	**118**	**71.9**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

जिन कोल परिवारों के पास कृषि योग्य भूमि है उसमें उपज होने की स्थिति जानने का प्रयास शोधार्थी द्वारा किया गया है जिसका विवरण तालिका संख्या 4.7 में दर्शाया गया है। अध्ययन क्षेत्र के 71.9 प्रतिशत कोलों ने स्वीकार किया कि उनके खेतों में उपज नहीं होती है यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। मात्र 28.1 प्रतिशत कोलों के खेतों में उपज तो होती है किन्तु यह उपज उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं होती है। क्षेत्र के मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार के कोलों के खेतों में उपज अधिक होती है। इनका प्रतिशत क्रमशः 41.9 तथा 38.8 है। इटवा डुडैला के 17.7 प्रतिशत कोलों के खेतों में उपज होती है इसी प्रकार टिकरिया के 21.1 प्रतिशत कोलों के खेतों में उपज होती है।

जिन कोलों के कृषि योग्य भूमि में उपज होती है वह वर्ष में एक बार या कहा जाए कि एक ही फसल हो पाती है जिसकी उपज कोलों को मिल पाए, सन्देहजनक होता है क्योंकि फसल पकने तक क्षेत्र के साहूकार और दादू उनकी उपज पर अधिकार यह कहते हुए कर लेते हैं कि वे उनके ऋणी हैं जिसे उन्होंने अभी तक चुकता नहीं किया है। बहुत कम ही कोल भाग्यशाली होते हैं जिन्हें अपनी फसल प्राप्त हो पाती है लेकिन वे अपनी ही उपज का उपभोग नहीं कर पाते हैं उससे होने वाली आय उनके ऋण के ब्याज चुकाने में चली जाती है।

जिन कोलों के खेतों में उपज नहीं होती है उनके सामने कृषि उत्पादन की अनेकानेक समस्याएं होती हैं उनके खेतों को सिंचाई के संसाधन प्राप्त नहीं हो पाते हैं, खेत या तो बंजर भू-भाग में होते हैं या फिर उबड़-खाबड़ जिन्हें समतल करा पाना कोलों के वश ही बात नहीं होती । कृषि योग्य किंचित भू-भाग में यदि वे उत्पादन करने की इच्छा रखते हैं तो भी बैलों आदि के लिए उन्हें क्षेत्र के सामन्तों, जो गैर जनजातीय होते हैं पर निर्भर रहना पड़ता है चूँकि इनकी खेती पूर्णतः प्रकृति की उदारता पर निर्भर होती है। ऐसी स्थिति में यदि सामन्त अपने बैल, हल आदि देने को तैयार भी होते हैं तो पहले वे अपने खेतों में

उनसे (कोलों) बेगार कराते हैं और तब तक फसल उत्पादन हेतु की जाने वाली प्रक्रियों का समय गुजर गया होता है।

इन स्थितियों में कोलों की आर्थिक संरचना में कृषि उत्पादन, भू-स्वामित्व, अपने-अपने द्वारा किए गए उत्पादन के उपभोग की बात करना एक छलावा है भले ही कोल अपने को कृषि योग्य भूमि के स्वामी होने पर गौरवान्वित अनुभव करते हों।

तालिका संख्या 4.8

कोल आदिवासी महिलाओं के पतियों की व्यवसाय की स्थिति

क्र. सं.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री (विवाहित)	पति के व्यवसाय की प्रकृति							
			क		ख		ग		घ	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	84	06	7.2	10	11.9	37	44.0	31	36.9
2	टिकरिया	81	04	4.9	13	16.0	34	41.9	30	37.02
3	मानिकपुर	62	15	24.1	10	16.1	25	40.3	12	19.5
4	बरगढ़ बाजार	63	14	22.2	11	17.6	28	44.4	10	15.8
	योग	**290**	**39**	**13.4**	**44**	**15.3**	**124**	**42.7**	**83**	**28.6**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - नौकरी

ख - स्वयं का व्यवसाय

ग - खेती /मजदूरी

घ - कुछ नहीं

तालिका संख्या 4.8 में कोल महिलाओं के पतियों के व्यवसाय की स्थिति का उल्लेख किया गया है। अध्ययन क्षेत्र के 42.7 प्रतिशत महिलाओं के पति कृषि सम्बन्धी तथा

मजदूरी जैसे कार्यो को करते हैं। यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। 15.3 प्रतिशत स्वयं का व्यवसाय तथा 13.4 प्रतिशत नौकरी जैसे कार्यो से जुड़े हैं।

28.6 प्रतिशत कोल महिलाओं के पति किसी प्रकार का कार्य नहीं करते हैं। परिवार की आय में उनका किसी प्रकार का योगदान नहीं होता। तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण कोलान क्षेत्रों इटवा डुडैला तथा टिकरिया के 36.9 तथा 37.02 प्रतिशत कोल पति किसी प्रकार का कार्य नहीं करते हैं। ग्रामीण कोलान क्षेत्रों की तुलना में नगरीय कोलान क्षेत्र के कोलों के किसी प्रकार के व्यवसाय से सम्बद्ध होने का प्रतिशतांक अधिक है क्योंकि नगरीय क्षेत्र के कोल पुरूषों को यदा-कदा कार्य उपलब्ध हो जाते हैं जो कोल मजदूरी तथा कृषि कार्यो से सम्बद्ध हैं वे बन्धुवा मजदूरों सा जीवन जीने को बाध्य हैं। स्वयं के व्यवसाय करने वाले कोलों का प्रतिशत कम है, जो कोल नौकरी आदि से सम्बद्ध है वे स्थायी कार्य नहीं है वह कार्य भी मजदूरों जैसा ही है।

तालिका संख्या 4.9

कोल आदिवासी महिलाओं के पतियों के प्रतिमाह आय की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कार्यरत पुरूष	पति की आय (प्रतिमाह)									
			250-500		500-1000		1000-1500		1500-2000		2000 से ऊपर	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडेला	53	39	73.5	6	11.3	8	15.2	00	0.0	00	0.0
2	टिकरिया	41	37	72.5	5	9.8	9	17.7	00	0.0	00	0.0
3	मानिकपुर	50	26	52.0	11	21.1	13	26.9	00	0.0	00	0.0
4	बरगढ़ बाजार	53	28	52.8	13	24.6	12	22.6	00	0.0	00	0.0
	योग -	**207**	**130**	**62.8**	**35**	**16.9**	**42**	**20.3**	**00**	**0.0**	**00**	**0.0**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

आदिवासी कोल महिलाओं के पति जो किसी न किसी प्रकार के कार्यो से सम्बद्ध हैं उनकी प्रतिमाह आय की स्थिति को तालिका संख्या 4.9 में दर्शाया गया है। क्षेत्र के 62.8 प्रतिशत कार्यशील पुरूषों की प्रतिमाह आय 250-500 प्रतिमाह है। 500-1000 रूपये प्रतिमाह आय अर्जित करने वाले कोलों का प्रतिशतांक 16.9 है। 1000-1500 रूपये प्रतिमाह आय अर्जित करने वाले कोल महिलाओं के पतियों का प्रतिशतांक 20.3 है। 1500 रूपये प्रतिमाह से अधिक आय अर्जित करने वाले कोलों का प्रतिशतांक शून्य है।

ग्रामीण कोलान क्षेत्रों की तुलना में नगरीय कोलान क्षेत्रों के कोल पुरूषों के आय अर्जित करने का प्रतिशतांक अधिक है। इन क्षेत्रों के कोल पुरूषों का कार्य की उपलब्धता कमोवेश अधिक होती है।

जिल कोलों को कुछ न कुछ आय प्राप्त होती है वह नियमित नहीं होती है। प्रतिमाह होने वाली आय की जो स्थिति कोलों द्वारा स्वीकार की गयी है वह उन्हें प्राप्त होने वाली आय की सर्वाधिक है।

तालिका संख्या 4.10

कोल आदिवासी महिलाओं के स्वयं के कार्य करने की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	स्वयं के कार्य करने की स्थिति			
			हॉं		नहीं	
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	इटवा डुडैला	100	84	84.0	16	16.0
2	टिकरिया	100	89	89.0	11	11.0
3	मानिकपुर	100	87	87.0	13	13.0
4	बरगढ़ बाजार	100	89	89.0	11	11.0
	योग -	**400**	**349**	**87.2**	**51**	**12.8**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

कोल आदिवासी महिलाओं के स्वयं द्वारा आय अर्जित करने की स्थिति को तालिका संख्या 4.10 में दर्शाया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 87.2 (349) प्रतिशत महिलाएं

किसी न किसी प्रकार की आर्थिक गतिविधियों में संलिप्त रहती है। 12.8 (51) प्रतिशत महिलाएं ऐसी है जो किसी भी प्रकार की व्यावसायिक गतिविधियों से सम्बद्ध नहीं है। इनमें वे महिलाएं सम्मिलित हैं जो या तो अधिक उम्र की है या फिर वे शारीरिक रूप से इतनी सक्षम नहीं है कि किसी प्रकार की व्यावसायिक गतिविधियों में सक्रिय रह सकें। ऐसे परिवारों की आर्थिक स्थिति अत्याधिक दयनीय होती है क्योंकि कोलों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की विशेष भूमिका होती है। इन परिवारों को दोनों समय का भोजन मिल पाना असंभव सा होता है। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 'कोलान' क्षेत्र चाहे वे ग्रामीण हो या नगरीय सभी क्षेत्रों की कोल महिलाएं व्यावसायिक गतिविधियों में भाग लेती है। कमोवेश पुरूषों की तुलना में कोल आदिवासी महिलाएं अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कठिन श्रम करती हैं।

महिलाओं और पुरूषों की व्यावसायिक संलग्नता में न होने की स्थिति का यदि विश्लेषण किया जाए तो अध्ययन क्षेत्र की जहां 12.8 प्रतिशत महिलाएं किसी प्रकार की आय अर्जित नहीं करती हैं वहीं 28.6 प्रतिशत कोल पुरूष किसी प्रकार की आय अर्जित नहीं करते हैं (तालिका संख्या 4.8) ।

तालिका संख्या 4.11

कोल आदिवासी महिलाओं की व्यावसायिक संलग्नता की प्रकृति

क्र. सं.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री (विवाहित)	स्वयं के कार्य की प्रकृति							
			क		ख		ग		घ	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	84	04	4.8	80	95.2	00	0.0	00	0.0
2	टिकरिया	89	05	5.6	84	94.3	00	0.0	00	0.0
3	मानिकपुर	87	14	16.2	70	80.4	03	3.4	00	0.0
4	बरगढ़ बाजार	89	16	17.9	68	76.4	05	5.6	00	0.0
	योग	**349**	**39**	**11.3**	**302**	**86.5**	**08**	**2.2**	**00**	**0.0**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - मजदूरी

ख - वनोपज सम्बन्धी कार्य

ग - दुकानदारी

घ - नौकरी

जो कोल महिलाएं व्यावसायिक रूप से किसी न किसी प्रकार का कार्य करते हैं उनमें उनके कार्य की प्रकृति को मजदूरी, वनोपज सम्बन्धी कार्य, दुकानदारी तथा नौकरी के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। अध्ययन क्षेत्र की जो कोल महिलाएं व्यावसायिक रूप में आर्थिक संरचना (कोलों की) की एक इकाई के रूप में कार्य करती हैं उनकी संख्या 349 (87.2) है। इनमें से 86.5 प्रतिशत महिलाएं वनोपज सम्बन्धी कार्यो से सम्बद्ध हैं यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। 11.3 प्रतिशत महिलाएं ठेकेदारों, दादुओं अथवा साहूकारों के अधीन कार्य करती हैं। 2.2 प्रतिशत महिलाएं दुकानदारी करती हैं। नौकरी करने वाली कोल आदिवासी महिलाओं का प्रतिशतांक शून्य है क्योंकि कोल आदिवासी महिलाओं तथा पुरूषों में

शिक्षा का अभाव है। यदि वे किंचित रूप में थोड़ा बहुत शिक्षित है भी तो उनकी शिक्षा इस स्तर की नहीं है कि उन्हें शासकीय या अशासकीय क्षेत्र में नौकरी प्राप्त हो सकें, जो कोल नौक़री कर भी रहे हैं वे किसी बड़े संस्थान में कार्य नहीं कर रहे हैं मात्र दुकानों, फड़ों आदि में ही कार्य कर रहे हैं।

मानिकपुर तथा बरगढ़ बाजार में ठेकेदारों, साहूकारों एवं दादुओं के अधीन कार्य करने वाली कोल महिलाओं का प्रतिशत क्रमशः 16.9 तथा 17.9 है जबकि इटवा डुडैला तथा टिकरिया क्षेत्र में यह प्रतिशत 4.8 तथा 5.6 है।

जंगली भू-भाग में आबाद कोलान क्षेत्रों में वनोपज सम्बन्धी कार्यो को करने वाली महिलाओं का प्रतिशत नगरीय क्षेत्र में रहने वाली महिलाओं की तुलना में अधिक है। वनोपज सम्बन्धी कार्यो में मुख्यतः लकड़ी काटना, तेन्दू पत्ता तोड़ने, पत्थर तोड़ने आंवला बीनने का कार्य प्रमुखतः से किया जाता है जिन्हें वे समीपस्थ बाजारों में बेचने के लिए ले जाती हैं।

जो कोल महिलाएं दुकानदारी से सम्बद्ध हैं वे मुख्यतः मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार क्षेत्रों की हैं और वे अपने कोलान क्षेत्रों में ही गुटका, कम्पट, पुंगे आदि की छोटी-मोटी दुकानदारी करती हैं ये वे महिलाएं हैं जो या तो शारीरिक रूप से अक्षम है तथा श्रम साध्य कार्यो को करने में अक्षम हैं या फिर उनके परिवारों के कोल पुरूषों द्वारा नियमित रूप से कार्य किया जाता है।

तालिका संख्या 4.12

कोल आदिवासी महिलाओं की प्रतिमाह आय की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कार्यरत पुरूष	प्रतिमाह आय की स्थिति									
			रूपये 250-500		500-1000		1000-1500		1500-2000		2000 से ऊपर	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडेला	84	21	25.0	30	35.7	33	39.3	00	0.0	00	0.0
2	टिकरिया	89	20	22.4	41	46.2	28	31.4	00	0.0	00	0.0
3	मानिकपुर	87	11	12.6	24	4.7	52	59.7	00	0.0	00	0.0
4	बरगढ़ बाजार	89	13	14.6	23	5.6	53	59.8	00	0.0	00	0.0
	योग -	**349**	**65**	**18.6**	**118**	**33.9**	**166**	**47.5**	**00**	**0.0**	**00**	**0.0**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

कोल आदिवासियों की आर्थिक संरचना की धुरी कोल महिलाओं की प्रतिमाह आय अर्जित करने की स्थिति को तालिका संख्या 4.12 में दर्शाया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 47.5 (166) प्रतिशत महिलाएं 1000-1500 रूपये तक की आय प्रतिमाह अर्जित करती हैं यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। 250-500 रूपये प्रतिमाह अर्जित करने वाली महिलाओं का प्रतिशतांक 18.6 है तथा 500 से 1000 रूपये तक आप अर्जित करने वाली महिलाओं का प्रतिशत 33.9 (118) है। 1500 रूपये से अधिक आय अर्जित करने वाली महिलाओं का प्रतिशत शून्य है। जो महिलाएं 1000-1500 रूपये प्रतिमाह आय अर्जित करती हैं वे मुख्यतः जंगलात से लकड़ी काटकर समीपस्थ बाजारों में ले जाकर बेंचती है और इस कार्य को वे नियमतः करती हैं, जो कोल महिलाएं मजदूरी या दुकानदारी जैसे कार्यो से जुड़ी हुई हैं उनकी आय कमोवेश कम होती है क्योंकि ऐसी महिलाओं को कार्य नियमित रूप से उपलब्ध नहीं हो पाता है और दुकानदारी से कोई विशेष लाभ की प्राप्ति नहीं हो पाती है। तालिकाओं के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 1000-1500 रूपये तक आय अर्जित करने वाली महिलाओं का प्रतिशत कोल पुरूषों की तुलना में अधिक है जहाँ यह प्रतिशत कोल महिलाओं का 47.5 है वहीं पुरूषों का यह प्रतिशत 20.2 है (तालिका संख्या 4.9) ।

तालिका संख्या 4.13

कोल आदिवासी महिलाओं के व्यवसाय सम्बन्धी स्थल

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री (विवाहित)	व्यवसाय सम्बन्धी स्थल							
			क		ख		ग		घ	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	84	80	95.2	01	1.2	00	0.0	03	3.6
2	टिकरिया	89	84	94.3	03	3.3	00	0.0	02	2.4
3	मानिकपुर	87	70	80.4	07	8.04	03	3.4	07	8.04
4	बरगढ़ बाजार	89	68	76.4	05	5.6	05	5.0	11	12.3
	योग	**349**	**302**	**86.5**	**16**	**4.5**	**08**	**2.5**	**23**	**6.5**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - जंगल में

ख - ठेकेदार

ग - बाजार

घ - घर /दुकान

तालिका संख्या 4.13 में कोल महिलाओं के व्यवसाय सम्बन्धी स्थल का उल्लेख किया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 86.5 प्रतिशत महिलाएं जंगलात क्षेत्र में अपनी व्यावसायिक गतिविधियों को सम्पन्न करती है। 6.5 प्रतिशत महिलाएं दुकान आदि में कार्य करती हैं, 4.5 प्रतिशत महिलाएं ठेकेदारों के अधीन कार्य करती हैं। 2.5 प्रतिशत महिलाएं बाजार आदि में कार्य करती हैं। ग्रामीण कोलान क्षेत्रों इटवा डुडैला तथा टिकरिया की 95.2 तथा 94.3 प्रतिशत महिलाएं जंगलात में कार्य करती हैं । नगरीय क्षेत्र मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार क्षेत्र की कोल महिलाओं यह प्रतिशत क्रमशः 80.4 तथा 76.4 है। ठेकेदारों के अधीन

करने वाली महिलाओं का प्रतिशत इन क्षेत्र में क्रमशः 8.1 तथा 5.6 है जो इटवा डुडैला तथा टिकरिया क्षेत्र की कोल महिलाओं की तुलना में अधिक है।

तालिका संख्या 4.14
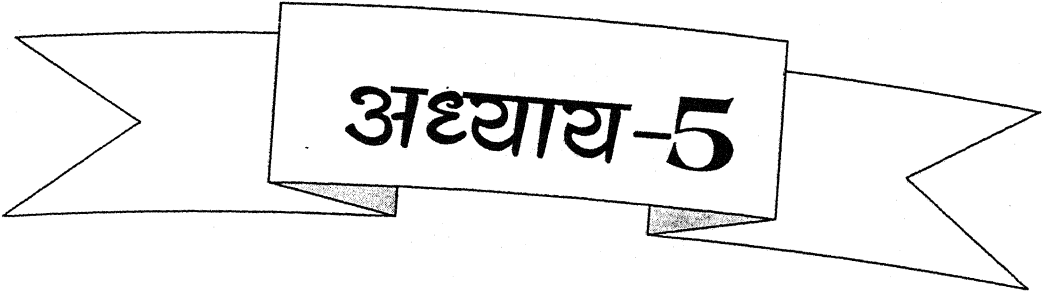
कोल आदिवासी महिलाओं के काम पर आने-जाने का समय

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	काम पर आने-जाने का समय			
			निश्चित		अनिश्चित	
			संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	इटवा डुडैला	84	00	0.0	84	100.0
2	टिकरिया	89	00	0.0	89	100.0
3	मानिकपुर	87	00	0.0	87	100.0
4	बरगढ़ बाजार	89	00	0.0	89	100.0
	योग -	**349**	**00**	**0.0**	**349**	**100.0**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

जो कोल आदिवासी महिलाएं किसी न किसी व्यावसायिक गतिविधि में संलग्न है उनकी संख्या 349 (100.0) है। इन महिलाओं के व्यावसायिक स्थलों में आने-जाने के समय के सम्बन्ध में शोधार्थी द्वारा जानने का प्रयास किया गया। अध्ययन क्षेत्र चाहे वह नगरीय हो या ग्रामीण सभी क्षेत्रों की कोल महिलाओं के अपने व्यावसायिक स्थल पर आने-जाने का समय निश्चित नहीं है। सभी कार्यशील महिलाओं ने यह स्वीकार किया कि उनके अपने व्यावसायिक स्थल पर आने जाने का समय निश्चित नहीं होता है। वर्तमान में जहाँ भागम-भाग की जिन्दगी में सभ्य समाज के लोगों के कार्य एवं समय का निर्धारण रहता है वहीं कोल आदिवासी महिलाओं के कार्य अवधि का निर्धारण नहीं होता और उन्हें सुबह से लेकर शाम तक समस्याओं से दो-चार होना पड़ता है।

*****
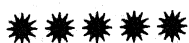
अध्याय-5

5. आदिवासी कोल महिलाओं की व्यावसायिक समस्याएँ

5.1 ऋणग्रस्तता

5.2 भूमि हस्तान्तरण

5.3 निर्धनता की समस्या

5.4 बेरोजगारी एक समस्या

5.5 स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या

5.6 मदिरापान की प्रवृत्ति

5.7 अशिक्षा एक अहम समस्या

5.8 कोल महिलाओं की व्यावसायिक समस्याएँ

5. आदिवासी कोल महिलाओं की व्यावसायिक समस्यायें

पूर्व अध्याय में आदिवासी कोल महिलाओं की व्यावसायिक एवं आर्थिक संलग्नता की विवेचना की गयी है। प्रस्तुत अध्याय में कोल महिलाओं की व्यावसायिक समस्याओं का तार्किक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

आदिवासियों की प्रमुख समस्यायें निम्नवत् दृष्टिगत होती हैं :-

5.1 ऋणग्रस्तता

भारतीय आदिवासियों की समस्याओं में संभवतः ऋणग्रस्तता की समस्या सबसे कठिन है, जिसके कारण जनजातीय लोग साहूकारों, दादुओं एवं सामन्तों के शोषण का शिकार होते हैं। ठेकेदारों तथा अन्य लोगों से सीधे सम्पर्क होने के कारण उत्तरपूर्व के कुछ क्षेत्रों को छोड़कर समस्त भारतीय जनजातीय जनसंख्या ऋणों के बोझ से दबी हुई है।

ऋणग्रस्तता के मूल कारणों में है, निर्धनता, भुखमरी तथा दुर्बल आर्थिक व्यवस्था। नृजातीय अध्ययनों तथा प्रमाणों से यह स्पष्ट पता चलता है कि ठेकदारों तथा अन्य लोगों के द्वारा इनके क्षेत्रों में हस्तक्षेप के पूर्व ये जनजातियाँ इतनी दुर्बल, निर्धन तथा विवश नहीं थी । ये लोग आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर थे। वन सम्पदा पर इनका अधिकार था। दुर्भाग्यवश जब आर्थिक विकास की योजनाओं के अन्तर्गत जनजातीय क्षेत्रों में विकास की बयार आयी तथा इनके क्षेत्र सभी प्रकार के लोगों के लिए खोल दिये गए तो विकास का लाभ उठाने के लिए ये जनजातियाँ तैयार नहीं थी । प्रशासन के संगठित प्रयास की अनुपस्थिति में इन बाहरी तथा तथाकथित सभ्य लोगों ने इन जनजातियों की संवेदनशीलता का भरपूर लाभ उठाया । समय के साथ जनजातियाँ कठिन स्थितियों में पहुँच गयीं जिनमें आज रह रही हैं। यद्यपि हमारे पास ऋणगस्तता से सम्बन्धित वैज्ञानिक तरीकों से इकट्‌ठा किये गए ऑकड़े बहुत कम हैं फिर भी यह कहा जा सकता है कि यह

समस्या गम्भीर है। जनजातियों में ऋणग्रस्तता के आर्थिक पक्ष के साथ सामाजिक व मनोवैज्ञानिक पक्ष भी महत्वपूर्ण हैं। ये लोग समस्त प्रणाली में प्रसन्नता या शांतिपूर्ण जीवन की आशा छोड़ चुके हैं। बहुत से क्षेत्रों में ये जनजातीय लोग ऋणग्रस्तता के कारण ऋणबन्धक होने पर विवश होते हैं तथा यह बन्धन पीढ़ी दर पीढ़ी चलता है। अधिकतर जनजातियों में ऋणबंधक होना इनके जीवन का अभिन्न अंग बन चुका है। सभी जनजातीय समुदायों की ऋणग्रस्तता के कुछ मुख्य कारण हैं :-

1. भूमि तथा वनों पर जनजातीय अधिकारों का हनन
2- कृषि के पुराने तरीकों के कारण कम उत्पादन
3- उपेक्षा तथा जहालत
4- विवाह, मृत्यु, मेलों तथ उत्सवों में अपनी क्षमता से अधिक व्यय करने की प्रवृत्ति
5- भाग्यवादी प्रवृत्ति व संकुचित विचारधारा
6- बिरादरी से निष्कासित किये जाने के भय से जुर्मानों के सम्बन्ध में पंचायत के आदेशों का पालन

इन स्थितियों के कारण जनजातीय लोगों को सदैव रूपये की आवश्यकता रहती है, जिसके कारण यह लोग आसानी से साहूकारों के शोषण का शिकार हो जाते हैं। समय-समय पर लिये गए ऋण, जिनकी ब्याज दरें बहुत अधिक होती हैं मिलकर ऐसी धनराशि में परिवर्तित हो जाते हैं जिसे वापस करना इनकी सामर्थ्य से परे होता है, जिसके फलस्वरूप इनकी भूमि साहूकारों द्वारा ले ली जाती है। "आर्थिक विकास के किसी भी कार्यक्रम का जनजातीय व्यवस्था पर तब तक कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा । जब तब उन्हें साहूकारों के चंगुल से बचाने की समुचित व्यवस्था न की जाये।"।[1] कुछ क्षेत्रों में

[1] जनजातीय विकास पर अध्ययन की एक रिपोर्ट, नई दिल्ली ।

धन के अतिरिक्त वस्तुयें उधार लेने का भी प्रचलन है। यह प्रचलन विशेषतया त्रिपुरा तथा महाराष्ट्र में अधिक है। महाराष्ट्र में इस प्रथा को पलेमोड के नाम से जाना जाता है। इस प्रथा के अन्तर्गत ये लोग बुवाई के समय बीज उधार लेते हैं तथा फसल होने पर बीज की मात्रा का तिगुना या चौगुना अनाज वापस करते हैं। खाने के लिए लिया गया अनाज भी इसी प्रकार वापस किया जाता है। इस प्रकार फसल के उपज का मुख्य भाग या पूरी उपज साहूकार को मिल जाती है। इसी से मिलती-जुलती त्रिपुरा में भी प्रचलित है जिसे 'ददान' कहते हैं। लेनदार पहले से ही सारी फसल बहुत कम दरों पर क्रय कर लेता है।

5.1.1. साहूकार दादुओं की भूमिका

पारम्परिक साहूकारों एवं दादुओं की कार्य पद्धति जनजातीय लोगों के लिए बहुत आसान तथा सरल है। ये साहूकार, अधिकतर इन्हीं जनजातियों के बीच ही रहते हैं। धन का आवश्यकता पड़ने पर जनजातीय लोगों को बहुत दूर नहीं जाना पड़ता तथा साहूकारों एवं दादुओं के द्वारा इनके लिये सदैव खुले रहते हैं। साहूकार इन्हें बिना किसी शर्त के ऋण दे देता है क्योंकि अधिकतर इनके पास गिरवी रखने या सुरक्षा के रूप में देने के लिए कुछ नहीं होता। अपनी आय तथा थोड़ी बहुत भूमि की सहायता से ऋण चुकाने का निश्चय इनके मन में होता है। साहूकार इस निश्चय को एक निधि में रूप में मान्यता देते हैं। परन्तु कहीं-कहीं इन्हें अपनी भूमि गिरवी रखनी पड़ती है। मध्य प्रदेश के कुछ जनजातीय क्षेत्रों में यह प्रथा है। औपचारिकताओं तथा कागजी कार्यवाही के नाम पर इन्हें एक सादे कागज पर या किसी मसौदे पर अंगूठा लगाना होता है, जिसे यह लोग पढ़ नहीं सकते।

राज्य सरकारों द्वारा स्थापित सहकारी ऋण समितियों की तुलना उपरोक्त ऋण प्रणाली से की जाय तो सर्वप्रथम यह बात सामने आती है कि अधिकतर समितियाँ

जनजातीय बस्तियों से दूरी पर स्थित है। ऋण लेने वाले को तमाम उबाऊ औपचारिकताओं को पूरा करने के साथ-साथ गारण्टी लेने वाले को भी इन्हीं स्थितियों से गुजरना पड़ता है। ऋण के लिए प्रार्थना पत्र देने तथा ऋण मिलने में अक्सर दो महीने तक लग जाते हैं तथा भ्रष्ट अधिकारी रिश्वत भी मांगते हैं। इन सबके अतिरिक्त ये सहकारी समितियाँ केवल उत्पादक उद्देश्यों के लिए ही ऋण देती हैं जबकि निर्धन व परेशान हाल जनजातीय लोगों का जीवन-यापन के लिए उपयोग के लिए तथा विभिन्न सामाजिक रीतिरिवाजों को पूरा करने के लिए भी ऋण की आवश्यकता होती है। साहूकार किसी प्रकार की शर्त नहीं रखता या सभी उद्देश्यों के लिए ऋण दे देता है।

अधिकांश जनजातीय लोग अशिक्षित है जिसके कारण इन्हें यह पता नहीं रहता कि साहूकार के खातों में क्या प्रविष्टियाँ की गई हैं। साहूकार की इच्छानुसार ये लोग अंगूठा लगा देते हैं जिससे हमेशा के लिए इनके भाग्य का निर्णय हो जाता है, अधिकतर इस ऋण के मामले, मौखिक रूप से तय होते हैं जिनके कारण ये लोग न्यायालय में भी नहीं जा सकते । इन मामलों में भी ऋण लेने वाले ही परेशान होते हैं। जिन मामलों में लिखा-पढ़ी की गई है इन खातों में खूब बढ़ा-चढ़ा कर प्रविष्टियाँ की जाती हैं। ये लोग यदि ग्राम पंचायत का सहारा लें तब भी कोई लाभ नहीं होता क्योंकि ग्राम पंचायत भी साहूकारों का ही पक्ष लेती हैं। विभिन्न जनजातीय क्षेत्रों के अध्ययन से यह पता चलता है कि ऋणग्रस्तता के कारण बहुत से बंधुआ मजदूर बन जाते हैं तथा उनकी भूमि भी चली जाती है। ऐसी परिस्थितियों में ऋण लेने वाले निम्न परिणामों का शिकार होते हैं :-

1. स्वतंत्रता की समाप्ति तथा उनकी श्रमशक्ति का साहूकारों द्वारा मनमाना प्रयोग।
2. भूमि का हस्तांतरण तथा ऋणदाता द्वारा अधिग्रहण ।
3. युवतियों की विकृत वेश्यावृति

4. यौन बीमारियाँ ।

बड़े ऋणों के बोझ से दबे यह ऋणी जिन्हें साहूकारों या जमीदारों ने बंधुआ मजदूर बना लिया है, इस ऋणग्रस्तता से बाहर निकलने में असमर्थ हैं।

5.2 भूमि हस्तांतरण

नवीनतम आंकड़ों के अनुसार जनजातीय जनसंख्या का लगभग 88 प्रतिशत भाग कृषक या कृषि मजदूर हैं। जनजातियों का अपनी भूमि से बहुत भावनात्मक लगाव रहता है। जीवन-यापन के लिये कृषि ही एक ऐसा साधन है जिस पर ये लोग सदियों से निर्भर हैं। मैदानों में रहने वालों की भांति ज़नजातीय लोग भी भूमि के स्वामित्व की तीव्र इच्छा रखते हैं। झूम भूस्वामी होने के और विभिन्न कारण हैं। अस्थायी कृषकों की संख्या लगातार बढ़ रही है तथा झूम का दायरा सिकुड़ रहा है तथा इसके साथ स्थायी कृषकों की भी संख्या में वृद्धि हुई है। बढ़ती जनसंख्या के कारण भूमि की मांग में वृद्धि हुई है।

हमारे देश में प्रति व्यक्ति भूमि एक एकड़ से भी कम है। जबकि यह दर अमेरिका में 7.5 एकड़ तथा रूस में 4.5 एकड़ है। कृषि पर निर्भर प्रत्येक व्यक्ति के पास औसत रूप से 1.6 एकड़ भूमि है।[1] यह औसत विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग है।

उत्तरी क्षेत्र	1.01 एकड़
पूर्वी क्षेत्र	1.25 एकड़
दक्षिणी क्षेत्र	1.17 एकड़
पश्चिमी क्षेत्र	2.29 एकड़
मध्य क्षेत्र	2.57 एकड़
उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र	2.59 एकड़

[1] जनगणना पुस्तिका (2001), नई दिल्ली ।

जनजातीय क्षेत्रों के भूस्वामित्व में समानता नहीं है। इन जनजातियों की भूमि अधिकतर अनउपजाऊ है। यद्यपि इन लोगों की भूमि का क्षेत्र अजनजातीय कृषकों से अधिक है । परन्तु इससे इनको कोई लाभ नहीं होता। इसके कारण हैं :- अनउपजाऊ मृदा (स्वाएल) पुरानी तथा घिसी-पिटी तकनीक तथा लगातार बढ़ती ऋणग्रस्तता ।

भूमि हस्तांतरण जैसी समस्या के मूल में पहुँचने से पूर्व सामान्य स्थितियों का विवरण करना अनुचित न होगा। संचार व्यवस्था में विस्तार होने के कारण समस्त जनजातीय क्षेत्र बाहरी लोगों के लिये खुल गया । ये बाहरी लोग इन क्षेत्रों में अपने-अपने उद्देश्यों व स्वार्थो के साथ प्रवेश कर गये। इनमें से भूमि अधिग्रहण करने वाले शक्तिशाली लोगों ने जनजातियों के अधिकारों का सबसे अधिक हनन किया ।

5.2.1 भूमि संरक्षण के कारण

धन की कमी भूमि हस्तान्तरण के मुख्य कारणों में से एक है। जब से ये जनजातियॉ सभ्य समाज तथा वित्त संस्थाओं के सम्पर्क में आयीं, धन की कमी के कारण उनकी भूमि का हस्तान्तरण बढ़ता गया । विवाह, उत्सवों, कपड़ो, मदिरा तथा अन्य आवश्यकताओं के लिये जनजातीय लोगों को सदैव धन की आवश्यकता रहती है। कम उपज तथा दुर्बल कृषि व्यवस्था के कारण इन्हें खाद्य सामग्री भी बाजार से खरीदनी पड़ती है। इस प्रकार भूमि हस्तांतरण से साहूकारों, दादुओं तथा दुकानदारों के ऋण एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। साहूकार इन्हें किसी भी समय किसी भी उद्देश्य के लिये बिना शर्त व जमानत के बगैर ऋण देने को तैयार रहते हैं। इन जनजातीय लोगों को केवल एक सादे कागज या किसी मसौदे पर अंगूठा लगाना होता है । मौखिक बातचीत के द्वारा भी ऋण प्राप्त हो जाता है जो बाद में हानिकारक साबित होता है। इन लोगों की अपनी भूमि गवाने के साथ-साथ दासता का जीवन व्यतीत करना पड़ता है।

कुछ समय से इन जनजातियों से राज्य की सहकारी ऋण समितियों एवं बैंकों से ऋण लेना प्रारंभ किया परन्तु इन संस्थाओं के साथ उनके अनुभव अच्छे नहीं रहे। अधिकतर सहकारी समितियां कम समय के लिये ऋण देती हैं तथा यह ऋण केवल उत्पादक उद्देश्यों जैसे कृषि आदि के लिये ही दिये जाते हैं। जनजातीय लोगों को अपनी अन्य आवश्यकताओं के लिये भी ऋण की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त समिति का ऋण न चुका पाने की स्थिति में जेल जाने या उनकी सम्पत्ति जब्त कर लिये जाने की घटनाओं से भी ये लोग डरते हैं। उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुये ये लोग बढ़ी हुई ब्याज की दरों पर भी साहूकारों एवं दादुओं से ही ऋण लेना अधिक सुरक्षित समझते हैं।

अनुसूचित क्षेत्र व अनुसूचित जनजाति आयोग की रिपोर्ट के अनुसार अन्य बहुत से तरीके हैं, जिनके द्वारा बाहरी लोग जनजातियों की भूमि हड़प लेते हैं। इनमें सबसे प्रचलित तरीका है न्यायालय, जहाँ पर जनजातीय लोग बिल्कुल शक्तिहीन होते हैं। उनकी कोई पहुँच नहीं होती । अपने ही विरूद्ध गवाही देने का तरीका भी प्रचलित है। इसमें साहूकार ऋण लेने वाले को प्रलोभन देकर उसी के विरूद्ध उसी से गवाही दिलवाता है।

जनजातियाँ अधिकतर साहूकारों पर निर्भर रहती हैं। ऐसे साहूकार जो बाहर से आते हैं तथा जिन्हें जनजातियों के सामाजिक ढाँचे को बनाये रखने या उनकी आर्थिक व्यवस्था को सुधारने में कोई रूचि नहीं है। कारण पेचीदा न्याय, कानून व्यवस्था, पहले सारे मामले पंचायतों में तय हो जाते थे जिसके कारण इन लोगों को न्यायालय के चक्कर नहीं लगाने पड़ते थे । इन न्यायालयों में अधिक धन व समय दोनों ही की आवश्यकता होती है जोकि जनजातीय लोगों के लिये एक समस्या बन जाती है। इन सबके ऊपर ऋण मिलने के अन्य क्षेत्रों की कमी, जिसके कारण ये लोग सदैव साहूकारों के ऋणों तथा एहसानों से दबे रहते हैं।

5.3 निर्धनता की समस्या

नि:सन्देह दीर्घकालीन व्यापक गरीबी भारत के औपनिवेशिक इतिहास में शुरू से ही चली आ रही है। अपनी आर्थिक समस्यायें हल करने और सर्वतोमुखी विकास करने के हमारे प्रयास हमारी पंचवर्षीय योजनाओं के साथ शुरू हुए। उन्होंने कई मामलों में देश का कायाकल्प भी किया, जैसे ठोस औद्योगिकरण, हरित क्रान्ति जिससे देश में आवश्यकता से अधिक खाद्यान्न पैदा होने लगा, औसत जीवनावधि में वृद्धि हुई, मध्य वर्ग की समृद्धि में तेजी से वृद्धि हुई । हमारे नियोजन का विरोधाभास यह है कि वह भारत के गरीबों के जीवन-स्तर को ऊँचा करने में असफल रहा। गरीबी नीचे स्तर की प्रति व्यक्ति आय में स्पष्ट रूप से निरन्तर दृष्टिगोचर होती रही है और देश की आबादी का एक बड़ा हिस्सा गरीबी रेखा के नीचे ही गुजर-बसर कर रहा है। गरीबी की यह रेखा पहले 3500 रूपये के उपभोग-स्तर पर था और बाद में वह अपने संशोधित रूप में 6400 रूपये के उपयोग स्तर पर पहुँच गई ।

योजना आयोग ने गरीबी की घटना का अनुमान 1983-84 में 374 प्रतिशत और 1987-88 में 29.9 प्रतिशत लगाया । यह प्रतिशत कुल आबादी का है। ग्रामीण आबादी और अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के मामलें में तो यह प्रतिशत इससे काफी अधिक है। योजना आयोग द्वारा संयोजित विशेषज्ञ समिति ने गरीबी की घटना को 1983-84 में 44.8 प्रतिशत और 1987-88 में 39.3 प्रतिशत आंका है। 1993-94 के एन.एस.एस. के आंकड़े अभी जारी नहीं किये गये हैं। अतः देश के 49 करोड़ 30 लाख लोगों के लिए जो गरीबी की रेखा के नीचे रह रहे हैं विकास एक दूर का सपना है।[1]

---

[1] यू.एन.डी.पी. (1993), नई दिल्ली ।

गरीबी की इस स्थिति के लिए बहुत से पहलू जिम्मेदार हैं और वे सभी हमारे नियोजन के प्रतिमान और देश की सामाजिक-राजनीतिक संरचना में मौजूद है। हमारी योजनाओं ने औद्योगिक उन्नति, विशेष रूप से विनिर्माण और कृषि पर आवश्यकता से अधिक बल दिया । कृषि के क्षेत्र में बड़े पैमाने की सिंचाई योजनाओं और रासायनिक उर्वरकों आदि को प्रोत्साहित किया गया है जो वास्तविक रूप से बड़े और सम्पन्न किसानों के लिए लाभप्रद है, लेकिन छोटे और गरीब किसानों के लिए नहीं। आमतौर पर मान यह लिया गया है कि औद्योगिक विस्तार कृषि उत्पादन और रोजगार के अवसरों की वृद्धि से जो लाभ होंगे वे समाज के नीचे से नीचे तबके तक पहुँचेंगे। सर्वथा असमान और पुरोहित राजवाद से ग्रसित समाज में आय के वितरण जैसी छोटी चीज के आधार पर पूरे समाज में व्याप्त अंतरों को कम करने से सभी प्रयास पूर्णतः अनुपयुक्त सिद्ध हुए। विश्लेषकों ने यह भी कहा कि राज्य सरकार ने हस्तक्षेप करने की जितनी भी कार्यवाहियां की जैसे भूमि सुधार, कृषिगत आय और आधिक्य का पुनः वितरण और रोजगार बढ़ाने की दृष्टि से शिक्षा सम्बन्धी बाह्मय संरचनाओं का निर्माण आदि, वे सभी पूरे मन या उत्साह के साथ नहीं की गयीं, उन सब पर उद्यमी और पूंजीवादी वर्ग हो आदि से अंत तक छाया रहा और उन्होंने धीरे-धीरे राजनीतिक और आर्थिक मामलों पर अपना पूरा कब्जा जमा लिया।

इन प्रवृत्तियों के परिणामस्वरूप चौथी योजना अवधि में और उसके बाद भी ग्रामीण इलाकों की गरीबी हटाने के लिए किसी समूह विशेष को हटा देने का लक्ष्य ही निर्धारित किया जाता रहा । इसके अतिरिक्त भूमि सुधार की जो सबसे जरूरी कार्यवाही थी उसकी 'गरीबी हटाओं' कार्यक्रम के अंतर्गत एक आय विशेष और रोजगार पैदा करने की योजनाओं पर बल दिया गया। इनमें दो और योजनाएं शामिल की गयी थी वे : रोजगार के अवसर पैदा करने वाली योजनाएं, आई.आर.डी.पी. जिन्हें ऋणों और 'मार्जिन मनी' देकर खेती और अतिरिक्त आय के जरिए पैदा करने में मदद करनी थी,

रोजगार के लिए वैयक्तिक क्षमताएं पैदा और प्रशिक्षित करने के लिए टी.आर.वाई.एस.ई. एम. के साथ ही ऐसे अनेक कार्यक्रम जिनसे ग्रामीण महिलाओं के अतिरिक्त आय बढ़ सके। 1980 के प्रारम्भिक वर्षो में आई.आर.डी.पी. का विस्तार और सर्वथा लाभहीनों तक पहुँचाने के लिए उस कार्यक्रम को ज्यादा से ज्यादा पैना करने के बाद वह स्थिति पर थोड़ा बहुत प्रभाव डालने में सफल हो सका।

दूसरों की तुलना में अनुसूचित जनजातियों में गरीबी का स्तर बहुत अधिक शोचनीय है। 1983-84 ग्रामीण जनजाति समुदाय में 58.4 प्रतिशत व्यक्ति गरीबी की रेखा से नीचे थे । स्मरण रहे लगभग 94 प्रतिशत जनजाति के लोग ग्रामीण इलाकों में ही रहते हैं। शहरी आबादी में गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले 39.9 प्रतिशत थे। आठवीं योजना के दौरान जनजातियों पर काम करने वाले कार्यकारी समूह ने अनुमान के अनुसार 1991 में 99.24 लाख जनजाति परिवार गरीबी की रेखा के नीचे थे। आई. आर.डी.पी. की एक योजना ने आठवीं योजना अवधि में लगभग 42 प्रतिशत परिवारों की सहायता की । फिर भी ऐसा कोई अनुमान उपलब्ध नहीं है जिससे सही रूप में यह जाना जा सके कि जनजातियों के कितने परिवार गरीबी की रेखा से ऊपर आ सके हैं। आई.आर.डी.पी. के मूल्यांकन के अनुसार गरीबी की रेखा पार करने वाले परिवारों का प्रतिशत बहुत ही कम है। यह भी अनुभव किया गया है कि जनजाति समुदाय के ज्यादातर हिस्सों को दरिद्र बनाने और होशियार बनाने की जिम्मेदारी राष्ट्रीय विकास के बड़े पैमाने के लक्ष्यों को पूरा करने की कार्यवाइयों पर रही हैं। जनजातीय समुदाय धीरे-धीरे एक ऐसी प्रक्रिया का शिकार होता गया जिसमें एक ओर तो उनके साधनों के आधार और उत्पादन राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था से अस्त व्यस्त हुआ और दूसरी ओर उनके परम्परागत सामुदायिक अधिकारों और आर्थिक मूलाधारों का अपहरण राज्य सरकार और व्यापारी हितों द्वारा किया गया। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के भूतपूर्व कमिश्नर डा. बी.डी. शर्मा के कथनानुसार मौजूदा परिस्थितियों की

गहरी जाँच से स्पष्ट है कि इस जनसमाज को पांच स्तरों पर वचित किया गया जैसे (1) साधनों पर जो उनके परम्परागत अधिकार थे उनको मान्यता नहीं दी गयी और उनके लिए उन साधनों के इस्तेमाल पर पाबन्दी लगाई गयी । (2) काम करने वालों को उत्पादन के साधनों से अलग किया गया (3) मजदूरों को उनकी उचित मजदूरी नहीं दी गई (4) उनकी स्वाधीनता का सौदा किया गया (5) मनोवैज्ञानिक रूप से उन्हें अपने को हीन और वंचित समझने के लिए विवश होना पड़ा जिसके फलस्वरूप उनमें अपनी इज्जत और अपने आत्मसम्मान की भावना समाप्त हो गयी । दूसरे शब्दों में वन-उत्पादन जंगलों से सम्बन्धित उनके परम्परागत अधिकारी पूरी तरह छिन गये । जनजातियों की अच्छी उपजाऊ जमीनें उन लोगों के हाथों में चली गयीं जो उनके समाज के नहीं हैं। जनजाति के लोग दिन-प्रतिदिन गरीब होते जा रहे हैं। यही नहीं वे बड़ी संख्या में मजदूरी करने लगे हैं और इन मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी भी नहीं मिलती। स्वयं सरकारी विभाग भी इन्हें उतनी मजदूरी नहीं देते जो सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम मजदूरी है। औद्योगिक विकास और सिंचाई की बड़ी-बड़ी परियोजनाओं से जहाँ बड़े और सम्पन्न काश्तकारों को लाभ पहुँचा है वहीं जनजाति के परिवारों को अपने बड़े-बड़े मूल स्थान छोड़ने और विस्थापित होने के लिए मजबूर होना पड़ा है।

हमारी कानून व्यवस्था इतनी लचर है कि न उन्हें पर्याप्त मुआवजा मिला और न उनके साथ इंसाफ हो सका है। इन विस्थापितों के पुनःस्थापन का कार्य भी जैसा होना चाहिए था वैसा नहीं हो सका है। आन्ध्र प्रदेश की 22 जिलों के अध्ययन (1990) से स्पष्ट है कि सरकारी कार्यक्रमों से अनुसूचित जातियों और पिछड़ी हुई जातियों ने तो लाभ उठाया है किन्तु जनजाति के लोग उनकी तुलना में भी घाटे में रहे हैं। गरीबी की रेखा के मामले में भी अनुसूचित जातियों और पिछड़ी हुई जातियों को लाभ हुआ है उनका एक बड़ा हिस्सा उस रेखा से ऊपर आया है किन्तु अनूसूचित जनजातियों पर 'गरीबी हटाओं' कार्यक्रम का कुछ ज्यादा प्रभाव नहीं डाल सका है। अतः अनुसूचित

जनजातियों की गरीबी दूर करने के लिए एकदम नई कल्पनाशील और प्रभावपूर्ण पद्धतियाँ अपनानी होंगी। विकास के लिए विश्वभर में जो प्रगति हो रही है उससे सम्पत्ति पर अधिकार ज्यादातर बड़े और शक्ति सम्पन्न लोगों का ही हो रहा है जबकि प्रकृति और उस पर आश्रित रहने वाली मनुज संतान उत्तरोत्तर गरीब होती जा रही है। इस प्रकार आदिवासी समाज सदा से दमनकारी बाहरी लोगों से एक ऐसा संघर्ष या युद्ध करते हैं जिससे दोनों पक्ष समान नहीं है और आदिवासियों को ही पराजित होना पड़ता है।

जनजातियों को वंचित करने और दरिद्र बनाने के इस व्यापक प्रयास के संदर्भ में गरीबी हटाओं और ग्रामीण लोगों को रोजगार दिलाने के कार्यक्रमों के अलावा जनजाति क्षेत्रों में सार्वजनिक वितरण पद्धति में संशोधन या सुधार, सहकारी योजनाएँ तथा अन्य अनेक क्षेत्रों में सरकार द्वारा की जा रही इसी प्रकार की समस्त कार्यवाइयाँ अभी तक विस्तृत रूप से प्रभावशाली या परिणामकारी सिद्ध नहीं हो सकी हैं।

5.4 बेराजगारी एक समस्या

जनजातियों का एक बहुत बड़ा भाग (लगभग 85 प्रतिशत) कृषि क्षेत्र में काम करता है। उसमें कुछ किसान हैं कुछ सीमांतक खेती करते हैं और शेष खेतिहर मजदूर हैं। उनका एक छोटा हिस्सा औद्योगिक क्षेत्र में है। वे कारखानों में मजदूरी करते हैं। कुछ समूह जिनमें नीलगिरि पर्वत के टोड़ा, उ.प्र. में हिमालयी उपक्षेत्र के भोटिया, जम्मू-कश्मीर क्षेत्र के बकरेवाले आदि आते हैं, पशुपालक हैं। कुछ दस्तकार हैं जैसे पश्चिम बंगाल के मछली, बिहार और मध्य प्रदेश के असुर और अगेरिया लोहारी का काम करते हैं। लगभग 70 जनजातियां शिकार करती हैं और जंगलों से वस्तुएं एकत्र करके अपनी उदर पूर्ति करती हैं । इनमें से ज्यादातर दक्षिणी भारत में हैं। अभी हाल में जनजातियों के काफी लोगों ने या तो प्रवासी खेतिहर मजदूरों का व्यवसाय अपना लिया है या फिर वे ईट के भट्ठों पर और इमारत बनाने के काम में अदक्ष मजदूरों का काम

करने लगे हैं। जनजातियों की कुल आबादी के बीच कुछ बहुत कम ऐसे व्यक्ति भी हैं जो पढ़े लिखे हैं। गरीबी और दरिद्रता जनजातियों की किस्मत में है। केवल उत्तर-पूर्व भारत की जनजातियाँ खुशनसीब हैं क्योंकि उन क्षेत्रों में उनके विकास का आदर्श "शिक्षा-पहले" के सिद्धान्त पर आधारित रहा है।

वर्तमान परिद्रश्य में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा निश्चित रोजगार गारण्टी योजना पर (एन.आर.ई.पी.) जिसमें केन्द्र और राज्य की सरकारों ने बराबर की पूँजी लगाई है, से काम हो रहा है। ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम (आर.एल.ई.जी.पी.) को 1983 से अमल में लाया जा रहा है। इन दोनों कार्यक्रमों का लक्ष्य ग्रामीण भूमिहीन को न्यूनतम सुनिश्चित स्तर का रोजगार दिलाना है। इन भूमिहीनों में ज्यादातर अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के लोग हैं। इन्हें वर्ष के उन महीनों में रोजगार दिलाना आवश्यक है जब इनके पास कोई काम नहीं होता।

1989 में एन.आर.ई.पी. और आर.एल.ई.जी.पी. दोनों को एक राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रमों में जिसे जवाहर रोजगार योजना (जे.आर.वाई.) कहते हैं, आत्मसात कर दिया गया। इस कार्यक्रम में 80 प्रतिशत धन केन्द्र सरकार और 20 प्रतिशत धन राज्य सरकार लगा रही है। जवाहर रोजगार योजना के उद्देश्य हैं : अतिरिक्त लाभकर योजना की व्यवस्था, उत्पादक सामुदायिक परिसम्पत्तियों का सृजन और ग्रामीण क्षेत्रों में कुल मिलाकर जीवन शैली को उन्नत करना। जवाहर रोजगार योजना में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने की विशेष व्यवस्था है, जनजातियों के लोगों के लिए समन्वित परियोजनाएं चलाने तथा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लोगों की वैयक्तिक सहायताओं के लिए जिला और गांव पंचायत स्तर के साधनों का 15 प्रतिशत तक सुरक्षित कर दिया गया है। यही नहीं, अनुसूचित जनजाति के लाभार्थ काम की जांच और उन्हें रोजगार के अवसर सुनिश्चित करने के निर्देश भी दिये गये हैं। इन सबके अलावा, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति

और अनुसूचित जनजाति वित्त और विकास निगम भी इस दिशा में प्रयासरत है। उसकी स्थापना 1989 में विशेष रूप से इन दोनों अनुसूचित जातियों के व्यापार, व्यवसाय, पेशे और अन्य आर्थिक क्रियाकलाप की पहचान और उनका पता लगाकर उपलब्ध कराने के लिये की गयी थी । साथ ही उसका कार्यक्रम सहायता देने वाली ऐसी परियोजनाएं चलाने का भी है जिनसे इन जातियों को रोजगार मिल सके। जनजातीय विकास कार्यक्रमों और विविध प्रकार के सरकारी और गैर-सरकारी दस्तावेजों व अध्ययनों से यह जाहिर है कि जनजातीय क्षेत्रों में रोजगार की स्थिति शोषण, साधनों की चोरी, प्रतिक्रिया के अभाव, नीचे स्तर के सरकारी कर्मचारियों के निर्दय और निर्मम रूख तथा अन्य अनेक विरोधी तत्वों से अब भी भरी हुई है।

5.5 स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं

जनजातीय लोगों का सामान्य स्वास्थ्य बहुत बुरा नहीं है परन्तु लगातार संक्रमण से उनको अक्सर बीमारियों का सामना करना पड़ता है। जन स्वास्थ्य की आधुनिक सुविधाओं का कितना भाग इन जनजातियों तक पहुँचता है ? इस प्रश्न पर विचार करने से पूर्व हमें जनजातियों की स्वास्थ्य समस्याओं का परीक्षण करना चाहिये। वैसे तो जनजातियाँ बहुत सी बीमारियों से ग्रस्त रहती हैं परन्तु सबसे अधिक मात्रा में जल संक्रामक रोग पाये जाते हैं जिनसे बहुत लोगों की मृत्यु हो जाती है। पीने के पानी की उपलब्धता में कमी इन रोगों का मुख्य कारण है। जिन स्थानों पर प्रचुर मात्रा में जल उपलब्ध है वहाँ पर भी जल गंदा व दूषित होता है। फलस्वरूप अधिकतर लोग पेट-आँत तथा चर्मरोगों तथा टी.बी. के शिकार हो जाते हैं। कालरा, पेचिश, अतिसार, नहरूआ आदि बीमारियाँ इसी दूषित जल के प्रयोग के कारण हो जाती हैं।

खनिजों तथा अन्य तत्वों की कमी भी बीमारियों का कारण है। क्षेत्र में घेघा जैसी गले की बीमारी अधिक है। इसका कारण है आयोडीन की कमी। पोषण तत्वों

की कमी के कारण बहुत सी जनजातियों में क्षय रोग का आधिक्य है। अधिकतर जनजाति के लोगों के शरीर में सभी प्रकार के प्रतिरक्षक का विकास नहीं हुआ है। ये लोग आसानी से किसी भी नयी बीमारी का शिकार हो जाते हैं। घेबर आयोग के अनुसार एक ऐसी बीमारी है जिससे जनजातीय लोग सदा भयभीत रहते हैं। यह रोग आन्ध्र प्रदेश के एजेन्सी क्षेत्र के उत्तरी भागों, दक्षिणी उड़ीसा, महाराष्ट्र के चन्दा जिले तथा मध्य प्रदेश के बस्तर जिले में अधिक पाया जाता है। कुष्ठ रोग सम्पूर्ण भारत में व्याप्त है। अतः जनजातियाँ भी इससे अछूती नहीं रही। आन्ध्र प्रदेश, असम की मिकिर पहाड़ियों, पश्चिम बंगाल के बांकुरा तथा पुरूलिया जिलों, बिहार के संथाल परगना तथा उड़ीसा में मयूरभंज से पुरी तक के क्षेत्रों में इस रोग का बाहुल्य है। जनजातियों में खुजली, चर्मरोग, चेचक तथा इनेमिया जैसे रोग भी आम है।

यह बात सही है कि सरकार स्वास्थ्य तथा चिकित्सा की दिशा में अधिक से अधिक सुविधायें प्रदान करने की इच्छुक हैं, फिर भी इस प्रकार की योजनाओं की असफलता के निम्नकारण हैं :-

(1) सही दृष्टिकोण की आवश्यकता

(2) कार्यकर्ताओं तथा कर्मचारियों की समस्या

(3) अपर्याप्त संचार व्यवस्था

(4) दवाओं के वितरण से सम्बन्धित नियम

प्रायः जनजातीय लोग सरकारी चिकित्सालयों में कम ही आते हैं। इसका कारण है कि इनकी अपनी चिकित्सा पद्धतियाँ सुदूरवर्ती तथा दुर्गम क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियों में यह विश्वास व्याप्त है कि बीमारियाँ दैवी शक्तियां, भूत प्रेतों के प्रकोप या किसी परपंरा या नियम के उल्लंघन के कारण होती हैं। ये लोग मानते हैं कि दैवी शक्तियों के कारण आयी बीमारियों या दुर्भाग्य का उपचार भी उसी प्रकार होना चाहिये । इसीलिये सुदूरवर्ती तथा दुर्गम क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियों के अपने ओझा, जादूगर

तथा शामन होते हैं। सभी उपचारों से निराश होने के बाद ही यह लोग स्वास्थ्य कर्मचारियों से सम्पर्क करते हैं। डाक्टरों द्वारा ओझाओं को अपना प्रतिद्वन्दी समझने के कारण स्थितियाँ और भी गम्भीर हो जाती है। घेबर कमीशन की टिप्पणी के अनुसार "एक सरल प्रकृति का मनुष्य पुजारी तथा डाक्टर दोनों के पास जायेगा । पुजारी उसके लिए प्रार्थना करेगा, डाक्टर उसे दवा देगा। मान्यता यह है कि ईश्वर पुजारी की प्रार्थना सुनता है जिससे दवा का प्रभाव बड़ जायेगा। डाक्टर एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से दैवी शक्तियां काम करती हैं।" आधुनिक चिकित्सा पद्धति को इन जनजातियों तक पहुँचाने के उद्‌देश्य को पूरा करने के लिये स्थानीय विश्वासों, आस्थाओं, तथा संवेदनाओं को ध्यान में रखना आवश्यक है। घेबर कमीशन ने उत्तर-पूर्वी जनजातियों का दिलचस्प उदाहरण प्रस्तुत किया है। इन क्षेत्रों में डाक्टरों तथा स्वास्थ्य कर्मचारियों से, वहाँ के स्थानीय एवं पारंपरिक चिकित्सकों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने का आग्रह किया जाता है। डाक्टरों को यह निर्देश है कि वह लोग क्षेत्रीय उपचार पद्धति का न तो विरोध करें और न ही उसे अन्ध-विश्वास कहे। इसके स्थान पर इस प्रकार की पद्धति को उन्हें विश्व की अन्य मनौवैज्ञानिक तथा आस्था उपचार पद्धतियों की भांति सम्मान देना चाहिए। एक बुद्धिमान डाक्टर स्थानीय ओझाओं व पुजारियों से मित्रता करके उन्हें अपने चिकित्सालयों में आमंत्रित करेगा। उन्हें प्रार्थना तथा बलि करने से नहीं रोकेगा तथा उन्हें यह समझायेगा कि आधुनिक चिकित्सा पद्धति उनकी प्रणाली की पूरक है। मनोवैज्ञानिक रूप से स्थानीय पुजारियों की भूमिका अत्याधिक महत्वपूर्ण है। यदि किसी रोगी को यह विश्वास है कि इस पर किसी भूत-प्रेत का साया है तो ऐसी स्थिति में यह पुजारी ही इसके मन में बैठे डर को दूर कर इसका उपचार कर सकते हैं। चिकित्सा कर्मचारियों के लिये आवश्यक है कि यह लोग जनजातीय ओझाओं तथा हवाओं के प्रति सही दृष्टिकोण तथा व्यवहार रखें। अनुसूचित क्षेत्र व अनुसूचित जनजाति आयोग की रिपोर्ट के अनुसार "सफल चिकित्सक वह है जो स्वास्थ्य सम्बन्धी सामाजिक मान्यताओं में

रूचि रखता हो। जनजातियों की स्वप्नों का स्वास्थ्य पर प्रभाव, "जैसी मान्यताओं तथा जनजातीय चिकित्सा पद्धति को सम्मान देता हो।"

स्वास्थ्य कर्मचारियों तथा प्रशिक्षित नर्सो की कमी भी भारतीय जनजातीय स्वास्थ्य की समस्या का एक महत्वपूर्ण पहलू है। अधिकतर स्वास्थ्य कर्मचारी (पुरूष और महिलायें) गाँवों तथा जनजातीय क्षेत्रों में जाने के इच्छुक नहीं हैं। इसका कारण है समुचित आवास, शिक्षा एवं अन्य व्यवस्थाओं की कमी के साथ-साथ मनोरंजन के साधनों की भी कमी होना। घेबर कमीशन के अनुसार बीस वर्षो के लिये एक विशेष स्वास्थ्य सेवा का गठन करके इस समस्या को हल किया जा सकता है। स्थानीय लोगों को ऐसा प्रशिक्षण दिया जाय जिससे कि बीस वर्षो के बाद यही लोग अपने चिकित्सालयों को सुचारू रूप से चला सकें। इसके साथ-साथ आयुर्वेदिक दवाओं, जड़ी-बूटियों के प्रयोग को प्रोत्साहित करना चाहिये। ये लोग इन जड़ी-बूटियों का प्रयोग पहले से ही करते आ रहे हैं अतः इन्हें इस प्रकार की चिकित्सा पद्धति स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

जनजातीय क्षेत्रों की भौगोलिक स्थितियों तथा दुर्गमता को ध्यान में रखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि सचल दवाखाने स्थिर चिकित्सालयों से अधिक लाभप्रद सिद्ध होंगे। यह सचल दवाखानें भी छोटी-छोटी गाड़ियों में होने चाहिए जिससे कि ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर भी आसानी से पहुँच सके। इस प्रकार के सचल दवाखानों के लिये एक जीप अधिक उपयोगी होगी जिसमें एक डाक्टर, कर्मचारी तथा दवायें आसानी से जा सकती हैं। कभी-कभी अच्छी किस्म की बैलगाड़ियों का भी प्रयोग किया जा सकता है। उत्तर-पूर्वी क्षेत्रों में इन स्वास्थ्य इकाइयों को दुर्गम स्थानों पर पैदल चलना पड़ता है तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में भी शिविर लगाकर आपरेशन किये जाते हैं। इन स्थितियों में सद्भाव व समर्पण के बिना कार्य करना असम्भव है।

सुदूरवर्ती क्षेत्रों में दवाओं की माँग व पूर्ति के नियम बहुत जटिल हैं। दवाओं की मात्रा की जांच मैदानों के मापदण्ड से की जाती है। इस प्रकार के नियम

बनाते समय इस बात पर ध्यान नहीं दिया जाता है कि जनजातीय क्षेत्रों में डाक्टरों को उपचार करने के साथ-साथ जलवायु की विविधता का भी सामना करना पड़ता है तथा कभी-कभी आकस्मिक आवश्यकताओं तथा चिकित्सा के लिये विशेष प्रकार की दवाओं को भंडार में रखना पड़ता है।

जनजातीय लोगों के स्वास्थ्य से सम्बन्धित समस्याओं में पेय पदार्थो का सेवन भी एक महत्वपूर्ण समस्या है। महुआ, बाजरा, चावल, जौ तथा अन्य अनाज के दानों को सड़ा कर मदिरा बनायी जाती है। यह पारंपरिक मदिरा घरों में बनायी जाती है तथा समस्त परिवार इसका सेवन करता है। सीधे-सीधे जनजातीय लोगों को घर में मंदिरा बनाने से रोका जाता है तथा बाहरी लोगों द्वारा बनायी गयी मदिरा क्रय करने को बाध्य किया जाता है। इस मदिरा के आदी जो जाने के बाद यह निर्धन जनजातीय लोग अपनी सम्पत्ति बेचते हैं या ऐसे समझौते करते हैं जिनमें इनका शोषण निश्चित होता है। इस समस्या का एक ही व्यावहारिक हल है। बाहरी ठेकेदारों तथा मदिरा को इन क्षेत्रों से बाहर निकाल दिया जाय जिससे यह जनजातीय लोग अपने घरों में मदिरा बनाकर अपनी परंपराओं तथा संस्कृति का स्वतंत्रतापूर्वक निर्वाह कर सकें।

जनजातीय लोगों में अफीम तथा अन्य औषधियों की लत भी एक गम्भीर स्वास्थ्य समस्या है। अरूणाचल प्रदेश की सिंहफो जनजाति इसका ज्वलंत उदाहरण है। लगभग 150 वर्ष पूर्व इन लोगों की संख्या 40 हजार थी जो अब लगभग एक हजार रह गयी है। यद्यपि कई युद्धों, बीमारियों तथा कुपोषण ने भी अपनी भूमिका निभायी परन्तु अफीम के दुर्व्यसन ने इन्हें सबसे अधिक हानि पहुँचाई है। ऐसा विश्वास है कि अफीम के कारण इनकी जनन क्षमता भी कम हो गई, मृत्यु दर तथा भुखमरी बढ़ गई । यह सिंहफो लोग दिन भर अफीम व तम्बाकू पीते देखे जा सकते हैं। अफीम सिंहफों जीवन का एक अभिन्न अंग बन गयी है। अपने पशुओं तथा भूमि का ध्यान यह लोग नहीं रखते परन्तु अफीम अवश्य खरीदते हैं। यह लोग बुरी तरह से अफीम के आदि हो

चुके हैं तथा इनके पूर्वजों को इसका सेवन करना अंग्रेजों ने सिखाया । कुछ गम्भीर सिंहफों को सुधारकों तथा अन्य स्वैच्छिक संस्थाओं ने अफीम के दासों को इससे दूर रखने का प्रयास प्रारम्भ किया है।

जनजातियों को स्वास्थ्य शिक्षा देना अतिआवश्यक है। अधिकतर जनजातियाँ अशिक्षित हैं, परन्तु चलचित्रों तथा बीडियों कैसेटों की सहायता से इन्हें स्वास्थ्य तथा सफाई के मूल सिद्धान्तों से अवगत कराना चाहिये। जनजातियों के स्वास्थ्य स्तर को बेहतर बनाने के लिए राज्य सरकारों, केन्द्र सरकार, गैर-सरकारी संस्थाओं तथा स्वास्थ्य कर्मचारियों को मिलजुल कर प्रयास करने चाहिए।

5.6 मदिरापान की प्रकृति

जनजातियों में मदिरापान का अत्याधिक चलन है। अधिकतर जनजातियाँ मदिरापान के सम्बन्ध में बहुत संवेदनशील हैं तथा महुँए के पेड़ को पवित्र मानती हैं। मदिरापान सादियों से उनकी सामाजिक परम्पराओं का एक भाग है। इस प्रकार के अव्यावसायिक समाज में मदिरा को भी भूमि के अन्य उत्पादों के स्तर पर ही रखा जाता है। ये जनजातियाँ अपने घरों में मदिरा बनाती हैं तथा इस प्रकार के अधिकतर पेयों में कोई विशेष नशा नहीं होता। मदिरा अधिकतर शक्तिबर्द्धक का कार्य करती है। अतः यह कहा जा सकता है कि मदिरापान इन जनजातियों के रीतिरिवाजों का एक अभिन्न अंग है तथा इनकी सामाजिक परंपराओं में घुल-मिल गयी है।

बाजरे तथा चावल द्वारा अपने घरों में बनायी गयी मदिरा जनजातियों में बहुत लोकप्रिय है। अलग-अलग क्षेत्रों में इसके विभिन्न नाम हैं। यह मध्य प्रदेश में "हँडिया", असम में "पोंग" , उत्तर-पूर्वी क्षेत्रों में "जू" पंजाब तथा हिमाचल प्रदेश में "तुदगी", आन्ध्र प्रदेश में "काल्ही" बिहार में "पछावे" तथा देश के विभिन्न जनजातीय क्षेत्रों में अलग-अलग नामों से जानी जाती है। उत्सवों, विवाहों, मृत्यु, दाह संस्कार तथा

अन्य समारोहों के समय जनजातियाँ मदिरा बनाती हैं तथा उनका सेवन करती हैं। कभी-कभी इच्छा होने पर भी जंगलों या घरों में इस प्रकार की मदिरा बनाकर मित्रों के साथ इसका सेवन किया जाता है।

अंग्रेजी प्रशासन के आगमन से इनकी स्वतंत्रता तथा मानसिक शांति भंग हो गयी । अंग्रेजी प्रशासन ने एक ऐसी आबकारी प्रणाली प्रारम्भ की जो जनजातीय लोगों के लिये विदेशी थी । सरकार तथा मदिरा बनाने वाले व्यवसायियों ने जनजातियों की मदिरापान परम्परा में अभिरूचि ली तथा उन्हें अधिक से अधिक मदिरा का उपभोग करने के लिए विवश किया जिससे कि राजस्व तथा बिक्री दोनों में वृद्धि हो । बस्तर में इस नयी विदेशी प्रणाली से जो कि स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल नहीं थी, ठेकेदारों का चलन प्रारम्भ हो गया जिनका उद्‌देश्य केवल अधिक से अधिक लाभ कमाना था। जनजातियों की पुरानी व पारम्परिक प्रणाली पर रोक लग गयी । इन स्थितियों में मदिरापान अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया जिसके कारण इन जनजातीय लोगों की बहुत दुर्गति हुई ।[1] बम्बई प्रेसीडेन्सी में 1938 के दौरान डी. सिंनिंग्टन के सर्वेक्षण के अनुसार "अंग्रेजी सरकार द्वारा मदिरा विक्रय को बढ़ाकर राजस्व कमाने की नीति ने जनजातीय लोगों पर बुरा तथा हानिकारक प्रभाव डाला है।"

संविधान के अनुच्छेद 46 में अन्तर्गत राज्यों को यह निर्देश दिये गये है कि अनुसूचित जनजातियों को सभी प्रकार के सामाजिक अन्याय तथा शोषण से बचाया जाय तथा सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाय। अनुच्छेद 47 ने राज्य सरकारों को उनके कर्तव्यों से अवगत कराते हुए स्पष्ट किया कि राज्य सरकार अपने प्राथमिक कर्तव्यों के अन्तर्गत अपने क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के जीवन स्तर, पोषण तथा जन-स्वास्थ्य के विकास में योगदान दें तथा चिकित्सा के उद्‌देश्यों के अतिरिक्त सभी स्थितियों में मदिरा पान तथा अन्य नशीली दवाओं के प्रयोग पर, जोकि स्वास्थ्य के लिये हानिकारक हैं,

---

[1] ग्रिक्सन, डब्लू, बी. - पाँचवी योजना में जनजातीय विकास कुछ मूलभूत नीतियाँ

निषेधाज्ञा जारी करेगी। विभिन्न योजनाओं में भुखमरी उन्मूलन के कार्य को प्रारम्भ करने के लिये सर्वप्रथम शोषण समाप्त करना आवश्यक है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए जनजाति विकास की सभी योजनाओं में शोषण समाप्त करने को प्राथमिकता दी गई है। दुर्भाग्यवश मदिरा विक्रय जनजातियों के शोषण का एक प्रबल माध्यम है। धेबर कमीशन द्वारा जनजातियों में मदिरापान तथा इसके प्रभाव की समस्या का अध्ययन तथा विश्लेषण करते समय आश्चर्यजनक तथ्य सामने आया कि कुछ स्थानों पर बाहरी मदिरा का चलन स्वतंत्रता के पश्चात प्रारम्भ हुआ । कमीशन के अनुसार "हम इस प्रकार के बाहरी हस्तक्षेप के औचित्य को समाप्त नहीं कर सके। विशेषतया तब जबकि जनजातियों के पास अपनी बनायी मदिरा पर्याप्त मात्रा में है तथा इसे यह लोग सामाजिक रूप से मान्यता व सम्मान भी देते हैं ।" अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के भूतपूर्व आयुक्त प्रो.एस.के.बोस (1970-71) ने इन मदिरा विक्रेताओं को जनजातीय क्षेत्रों में "शोषण का माध्यम" बताया है। धेबर कमीशन ने इस प्रकार की मदिरा के विक्रय पर रोक लगाने का सुझाव दिया है।

मदिरा विक्रय की वर्तमान प्रणाली जनजातीय आर्थिक व्यवस्था के लिए अत्याधिक हानिकारक है। सरकार द्वारा लाइसेंस प्राप्त ठेकेदारों द्वारा बाहरी मदिरा के विक्रय ने जनजातियों को बहुत सी समस्याओं से उलझा दिया है। मदिरा विक्रय एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से तमाम बाहरी असामाजिक तत्व इनके पिछड़े समुदायों के बीच पहुँचकर अवांछनीय तथा आपत्तिजनक कार्य करते हैं। इस प्रकार के ठेकेदार स्थानीय लोगों के बीच भय उत्पन्न करने के उद्देश्य से लठेत तथा गुण्डों को संरक्षण देते हैं। यह लोग बलपूर्वक अनाधिकृत रूप से आदिवासियों की झोपड़ियों में प्रवेश कर इन्हें मदिरा बनाने से रोकते हैं। लाइसेंस प्राप्त दुकानदार फेरीवालों को गाँव-गाँव में भेजते हैं जिससे कि मदिरा के विक्रय में वृद्धि हो। जनजातीय समुदायों के समक्ष इन गैर-कानूनी गतिविधियों से बचने का कोई उपाय नहीं है। प्रत्येक गाँव में इस प्रकार की गैर कानूनी

दुकानें जनजातीय युवकों के लिए आकर्षण का केन्द्र बन जाती हैं। इस प्रकार जनजातीय लोग ऋणग्रस्त होते हैं तथा उनकी भूमि के हस्तांतरण तथा अधिग्रहण तक की नौबत आ जाती है। नियमों का उल्लघंन होता है परन्तु अधिकतर सरकारी अधिकारी तो इन ठेकेदारों से मिले होते हैं जिसके कारण किसी प्रकार की कार्यवाही नहीं होती । ठेकेदार इन क्षेत्रों में अपनी मनमानी करते हैं। कुछ क्षेत्रों में तो इन ठेकेदारों के प्रति विवाह, प्रति फसल या प्रति परिवार मदिरा की एक निश्चित मात्रा, क्रय तथा उपभोग करना आवश्यक कर दिया है। ऐसा न किये जाने पर इन जनजातीय लोगों को गैर-कानूनी ढंग से मदिरा बनाने जैसे सही या गलत मामलों में फँसाने या जेल भिजवा देने जैसी बातों से भयभीत किया जाता है। प्रभावशाली व्यवसायी आबकारी, पुलिस, राजस्व, वन तथा अन्य सम्बन्धित विभागों के अधिकारियों का प्रश्रय प्राप्त करने में सक्षम हैं। जनजातीय लोग इन बाहरी लोगों के समक्ष अपने को अकेला पाते हैं। कुछ नये अध्ययनों से पता चला है आबकारी विभाग द्वारा प्राप्त अधिक राजस्व का सीधा सम्बन्ध अधिक ऋणग्रस्तता तथा भूमि हस्तांतरण से हैं। उपरोक्त तथ्यों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि बाहरी मदिरा की लत जनजातियों की विभिन्न समस्याओं तथा दुर्दशा का एक मूलभूत कारण है। अपनी इन समस्याओं से छुटकारा पाने तथा साहूकारों के चंगुल से बाहर आने के लिये इन जनजातियों को मदिरा से दूर रखना आवश्यक है। बाहरी मदिरा के विक्रय तथा उपभोग की बुराइयों से इन जनजातियों द्वारा स्वयं बनायी गयी मदिरा को कोई सम्बन्ध नहीं है। अपने घरों में बनायी गयी मदिरा सदियों से इनके जीवन का एक अभिन्न अंग रही है तथा इस मदिरा के उपभोग से इनके सामाजिक व आर्थिक ताने-बाने पर किसी प्रकार का बुरा प्रभाव नहीं पड़ा है।

प्रशासन में बाहरी मदिरा के विक्रय के पक्षधर एक दल का तर्क है कि ठेकेदारी प्रथा समाप्त करने से मदिरा के उपभोग में वृद्धि होने का डर है। दूसरी और जनजातीय कल्याण में रूचि रखने वाले लोगों का मानना है कि कोई भी सामाजिक

परम्परा सदैव नियंत्रित रहती है। ऐसी स्थितियों में स्थानीय समुदाय मदिरा बनाने के अवसरों को सुनिश्चित करते हैं। किसी भी व्यक्ति को मनमाने की अधिकतम सीमा निर्धारित करेगी। जनजाति विकास व कल्याण का समर्थक एक दल सम्पूर्ण मद्य निषेध की विचारधारा पर बल देता है तथा इनके मूल्यों तथा परम्पराओं को कोई महत्व नहीं देता।

ऐसे तत्व इस बात पर विचार नहीं करते कि घरेलू मदिरा इन जनजातियों के जीवन का एक अभिन्न अंग है। इनकी धार्मिक व पारम्परिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ इस मदिरा से इन्हें स्वास्थ्य लाभ भी होता है तथा उनके कठिन व परिश्रमी जीवन में कुछ आनन्द की अनुभूति भी होती है। पारम्परिक मदिरा सेवन की प्रथा को त्यागना उनकी स्वेच्छा पर निर्भर करता है। बहुत सी जनजातियाँ मदिरा पान की हानियों को भलीभाँति समझती हैं जिसके कारण अनेक जनजातीय क्षेत्रों में बाहरी मदिरा के सेवन के विरोध में आन्दोलन भी हुए हैं। बिहार का भगत आन्दोलन इसी प्रकृति का था। मदिरा पान के विरोध में कार्यरत सामाजिक संगठनों की सहायता के लिये विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों को प्रारम्भ करना चाहिये। जब तक इस प्रकार के आन्दोलनों का नेतृत्व जनजातियों द्वारा स्वयं न किया जाय, उनके घरेलू मदिरा सेवन में हस्तक्षेप नहीं होना चाहिये। इन्हें चावल व अन्य अनाजों के विभिन्न प्रयोगों के प्रति स्वयं जागरूक होना चाहिये ऐसा होने पर वे स्वयं ही इस परम्परा को त्यागने की दिशा में क्रियाशील हो जायेगें। जनजातियों की परिस्थितियों के प्रति अपने उत्तरदायित्व के अन्तर्गत सर्वप्रथम प्रशासन को जनजातीय क्षेत्रों से अजनजातीय ठेकेदारों को निष्कासित करके इनका कड़ा विरोध करना चाहिये।

5.7 अशिक्षा एक अहम समस्या

जनजातीय समूहों पर औपचारिक शिक्षा का प्रभाव बहुत कम पड़ा है। भूतपूर्व प्रयासों के फलों को अधिक विस्मय से नहीं देखना चाहिये क्योंकि 1950 से पहले

जनजातीय लोगों को शिक्षित करने के लिये भारत सरकार की कोई भी प्रत्यक्ष योजना नहीं थी। संविधान के प्रभावी होने के पश्चात् अनुसूचित जनजाति के लोगों के शिक्षा स्तर में वृद्धि करना केन्द्र तथा राज्य सरकारों का उत्तरदायित्व हो गया है। जनजातीय जनसंख्या में औपचारिक शिक्षा के विस्तार का अनुमान जनगणना के आँकड़ों से लगाया जा सकता है। 1931 की जनगणना के अनुसार केवल 0.7 प्रतिशत जनजातीय लोग ही शिक्षित थे। 1991 में यह संख्या बढ़कर 29.60 प्रतिशत हो गयी जबकि पूरे देश में लगभग 50 प्रतिशत शिक्षित लोग थे। उत्तर प्रदेश में 2001 की जनगणना के अनुसार 29536 व्यक्ति साक्षर हैं जिनमें 21184 पुरूष तथा 8352 महिलाएं साक्षर हैं। जनजातीय महिलाओं में शिक्षा की दर बहुत कम है। उत्तर-पूर्वी क्षेत्रों की खासी तथा गारों आदि जनजातियों को छोडकर जिन्होंने ईसाई मिशनरियों से खूब लाभ उठाया, पूरे जनजातीय समाज में शिक्षा का स्तर अच्छा नहीं है। शिक्षा समान स्तर पर रहने तथा समान अवसरों को प्राप्त करने का प्रभावी मापदण्ड नहीं है। ऐसी स्थिति में जनजातीय लोग देश के अन्य लोगों से बहुत पीछे रह जाते हैं।

5.7.1 सामाजिक तथ्य

सरकार द्वारा अधिक से अधिक स्कूल खोलने तथा शिक्षा पर अधिक व्यय करने से जनजातीय लोगों की शिक्षा पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ा है। इस प्रकार की शैक्षिक नीतियों के निर्धारण में सामाजिक पक्ष बहुत महत्वपूर्ण होता है। जनजातियों के लिये केवल औपचारिक शिक्षा की अधिक आवश्यकता नहीं है। इनके लिये ऐसी शिक्षा नीति लाभदायक होगी जिसके अन्तर्गत उन्हें शिक्षित करने के साथ-साथ उनके अंधविश्वासों तथा पूर्वाग्रहों को भी दूर किया जा सकें।

उत्तरपूर्व की कुछ जनजातियों के अतिरिक्त अधिकतर जनजातियों में यह भावना तथा विश्वास व्याप्त है कि शिक्षा से बच्चे उनसे अलग हो जाते हैं। इस प्रकार की

कुछ घटनाओं ने इन्हें बाहरी शिक्षा से दूर रहने को प्रेरित किया। इसके अतिरिक्त बहुत सी जनजातियों का मानना है कि बच्चों को बाहरी लोगों द्वारा चलाए जा रहे स्कूलों में भेजने से उनके देवता क्रुद्ध हो जायेंगे।

5.7.2 आर्थिक पक्ष

जनजातियों द्वारा शिक्षा की ओर कम ध्यान देने के आर्थिक कारण भी हैं। अधिकतर जनजातीय परिवार इतने निर्धन हैं कि वे लोग अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेज सकते हैं। एल्विन (1963) के अनुसार "एक जनजातीय परिवार के लिए अपने बच्चों को स्कूल भेजना आवश्यक रूप से आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। इससे इनके जीवन-यापन के संघर्ष तथा पारम्परिक श्रम विभाजन की योजना गड़बड़ा जाती है- बहुत से माँ-बाप ऐसी स्थिति में नहीं होते हैं कि अपने बच्चों को स्कूल भेज सकें"। एल.आर. एल. श्रीवास्तव (1968) द्वार जनजातीयों की शैक्षिक स्थिति पर किये गये सर्वेक्षण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि शिक्षा के प्रति उदासीनता का महत्वपूर्ण कारक है, इन जनजातियों की आर्थिक स्थिति । अधिकतर जनजातियों को खाने के लिये पर्याप्त मात्रा में भोजन तक नहीं मिलता । ऐसी स्थिति में ये लोग शिक्षा की बात सोच भी नहीं सकते । बच्चों को स्कूल भेजने से एक ओर तो एक कमाने वाला कम हो जाता है तथा दूसरी ओर उसकी शिक्षा पर व्यय भी होता है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली के अन्तर्गत कोई भी बच्चा कम से कम दस साल बाद ही परिवार की आर्थिक स्थिति सुधारने में सहायक हो सकता है। इन परिवारों की विवशता है कि ये लोग इतने धैर्य का परिचय नहीं दे सकते । ऐसी शिक्षा प्रणाली इन्हें संतुष्ट कर सकती है। जिससे इन्हें तत्काल लाभ होना प्रारम्भ हो जाय।

कोल महिलाओं की व्यावसायिक समस्याएँ

अध्ययन क्षेत्र से प्राप्त तथ्यों के आधार पर आदिवासी कोल महिलाओं की निम्नांकित समस्याएँ परिलक्षित हुई हैं ।

तालिका संख्या 5.8

कोल आदिवासी महिलाओं की व्यावसायिक सन्तुष्टि की स्थिति

क्र	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री (कार्यशील)	व्यावसायिक सन्तुष्टि की स्थिति			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	84	18	21.5	66	78.5
2	टिकरिया	89	17	19.2	72	80.8
3	मानिकपुर	87	09	10.4	78	89.6
4	बरगढ़ बाजार	89	10	11.3	79	88.7
	योग -	**349**	**54**	**15.4**	**295**	**84.6**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

पाठा क्षेत्र में अधिवासित कोल आदिवासियों की आर्थिक संरचना की महत्वपूर्ण इकाई कोल महिलाओं की उनकी व्यावसायिक सन्तुष्टि की स्थिति को तालिका संख्या 5.8 में दर्शाया गया है । तालिका में उन कोल आदिवासी महिलाओं की सन्तुष्टि का उल्लेख किया गया है जो व्यावसायिक रूप में विभिन्न आय के स्रोत से सम्बद्ध हैं। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र की 84.6 (295) प्रतिशत व्यावसायिक रूप से सन्तुष्ट नहीं है। मात्र 15.4 (54) प्रतिशत महिलाएं ही व्यावसायिक रूप से अपने आप को सन्तुष्ट मानती हैं । क्षेत्र के मानिकपुर की 89.4 प्रतिशत महिलाएं अपने को सन्तुष्ट नहीं मानती है। यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। ग्रामीण भू-भाग में अवस्थित इटवा डुडैला की 78.5 प्रतिशत महिलाएं व्यावसायिक रूप में असन्तुष्ट हैं।

तालिका संख्या 5.9

व्यावसायिक सन्तुष्टि न होने के कारण

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	व्यावसायिक सन्तुष्टि न होने के कारण							
			क		ख		ग		घ	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	66	30	45.4	15	22.7	17	25.7	04	6.2
2	टिकरिया	72	26	36.1	22	30.5	14	19.4	10	13.0
3	मानिकपुर	78	30	38.4	20	25.6	18	23.0	10	12.0
4	बरगढ़ बाजार	79	29	36.7	21	26.5	19	24.0	10	12.8
	योग -	**295**	**115**	**38.9**	**78**	**26.4**	**68**	**23.0**	**34**	**11.7**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - पर्याप्त आय नहीं होती

ख - श्रम की तुलना में कम आय

ग - काम की अनुपलब्धता

घ - शारीरिक / मानसिक शोषण

जो कोल आदिवासी महिलाएं व्यावसायिक रूप से असन्तुष्ट है, उनके असन्तुष्ट होने के कारणों को जानने का प्रयास शोधार्थी द्वारा किया गया । जिन कारणों को तालिका संख्या 5.9 में दर्शाया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 38.9 (115) प्रतिशत महिलाएं इस कारण से असंतुष्ट है क्योंकि उन्हें पर्याप्त आय प्राप्त नहीं होती है। यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। 26.4 (78) प्रतिशत महिलाओं का मानना है कि श्रम की तुलना में उन्हें कम आय होती है। 23.0 प्रतिशत महिलाओं का मानना है कि वे जितना काम कर सकती हैं उसकी तुलना में उन्हें काम उपलब्ध नहीं हो पाता है । 11.7 (34) प्रतिशत महिलाएं शारीरिक एवं मानसिक शोषण का शिकार होती है जिससे वे अपने

व्यवसाय से सन्तुष्ट नहीं है। ग्रामीण क्षेत्र की तुलना में नगरीय कोल महिलाओं को शारीरिक एंव मानसिक शोषण का शिकार प्रायः होना पड़ता है क्योंकि कि इन क्षेत्रों में उन्हें नगरीय तथाकथित सभ्य समाज के लोगों के सम्पर्क में रहना पड़ता है।

इटवा डुडैला तथा टिकरिया की 45.4 तथा 36.1 प्रतिशत महिलाएं अत्याधिक मेहनत करती हैं किन्तु उन्हें पर्याप्त आय प्राप्त नहीं होती है।

तालिका से स्पष्ट होता है कि कोल आदिवासी महिलाएं मेहनत से भय नहीं खाती हैं उनमें कार्य करने की इच्छा शक्ति प्रबल रूप में विद्यमान है किन्तु अधिक श्रम करने के बावजूद उन्हें जो सन्तुष्टि प्राप्त होनी चाहिए वह प्राप्त नहीं हो पा रही है। प्रायः उन्हें आर्थिक क्षति उठाने के साथ-2 शारीरिक तथा मानसिक शोषण का शिकार होना पड़ता है।

तालिका संख्या 5.10

आय खर्च करने के मद

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	आय खर्च करने के मद					
			क		ख		ग	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	84	59	70.3	25	29.7	00	0.0
2	टिकरिया	89	61	68.5	26	29.2	02	2.3
3	मानिकपुर	87	55	63.2	22	25.2	10	11.6
4	बरगढ़ बाजार	89	59	66.2	25	28.1	05	5.7
	योग -	**349**	**234**	**67.0**	**98**	**28.0**	**17**	**5.0**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - घरेलू खर्च

ख - निजी खर्च

ग – बच्चों की पढ़ाई पर खर्च

तालिका संख्या 5.10 में महिलाओं द्वारा जो आय अर्जित की जाती है उसे व्यय करने के मदों का उल्लेख किया गया है। क्षेत्र की 67.0 (234) प्रतिशत महिलाएं अर्जित की जाने वाली आय को घरेलू खर्चो अर्थात अपने परिवार की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति में व्यय करती हैं। 28.0 (98) प्रतिशत महिलाएं अपनी निजी आवश्यकताओं की पूर्ति में तथा 5.0 प्रतिशत महिलाएं बच्चों की पढ़ाई आदि में अपनी आय को खर्च करती हैं। ग्रामीण क्षेत्र के इटवा डुडैला तथा टिकरिया की जो महिलाएं अपनी आय को घरेलू खर्चो में व्यय करती हैं उनका प्रतिशत 70.3 (59) तथा 68.5 (61) है। बच्चों की पढ़ाई पर सर्वाधिक व्यय मानिकपुर की कोल महिलाएं करती हैं । इनका प्रतिशत 11.6 (10) है इटवा डुडैला की शून्य प्रतिशत महिलाएं बच्चों की पढ़ाई पर अपनी आय को खर्च करती हैं। जो कोल महिलाएं निजी आवश्यकताओं की पूर्ति में अधिक व्यय करती है । उन कोल परिवारों में आय अर्जित करने वालों की संख्या एक से अधिक होती है। निजी खर्चो में महिलाएं प्रायः अपनी निजी उपयोग की वस्तुएं उन बाजारों से क्रय कर लेती हैं जिनमें वे वनोत्पादों को बिक्री हेतु ले जाती हैं। नगरीय क्षेत्र की कोल महिलाएं चूंकि अपने बच्चों को पढ़ाने की रूचि रखती है इसलिए वे अपनी आय को बच्चों की पढ़ाई पर खर्च करती है।

तालिका संख्या 5.11

पतियों/ परिवार के सदस्यों द्वारा आय से धन मांगने की स्थिति

क्र	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री (कार्यशील)	पतियों /परिवार के सदस्यों द्वारा आय मांगने की स्थिति			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	84	07	8.3	77	91.7
2	टिकरिया	89	10	11.3	79	88.7
3	मानिकपुर	87	22	25.3	65	74.7
4	बरगढ़ बाजार	89	26	29.3	63	70.7
	योग -	**349**	**65**	**18.6**	**284**	**81.4**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

तालिका संख्या 5.11 में कोल आदिवासी महिलाओं के पतियों /परिवार के सदस्यों द्वारा उनके द्वारा अर्जित की ज़ाने वाली आय से धन मांगने की स्थिति को दर्शाया गया है। अध्ययन क्षेत्र की आय अर्जित करने वाली 349 (87.25) महिलाओं में से 18.6 प्रतिशत महिलाओं से उनके पतियों/ परिवार के सदस्यों द्वारा धन की मांग की जाती है। 81.4 (284) प्रतिशत महिलाओं के पतियों /परिवार के सदस्यों द्वारा धन की मांग नहीं की जाती है। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्र को कोलान क्षेत्रों की तुलना में नगरीय क्षेत्र के कोलान क्षेत्रों के कोल पुरूषों द्वारा अपनी पत्नियों /महिलाओं से उनकी आय से धन की मांग की जाती है, मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार क्षेत्रों में यह प्रतिशत 25.3 तथा 29.3 है। जिन पुरूषों द्वारा धन की मांग की जाती है वे कुछ भी आय अर्जित नहीं करते हैं तथा अपनी नशीली प्रवृत्ति के कारण वे अपनी नशीले पदार्थो को क्रय करने के लिए धन की मांग करते रहते हैं।

तालिका संख्या 5.12

वनोत्पाद संकलन में वन विभाग के कर्मचारियों की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री (कार्यशील)	वन विभाग के कर्मचारियों की स्थिति			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	84	72	85.7	12	14.3
2	टिकरिया	89	68	76.4	21	25.6
3	मानिकपुर	87	57	65.5	30	34.5
4	बरगढ़ बाजार	89	61	68.5	28	31.5
	योग -	**349**	**258**	**73.9**	**91**	**26.1**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

नवीन कानूनों के कारण वनों पर से आदिवासियों के एकाधिकार की समाप्ति हुई है। परिणामस्वरूप वनोत्पाद संकलित करने के दौरान वन विभाग के कर्मचारियों द्वारा कोल महिलाओं को वनोत्पाद संकलित करने तथा लकड़ी काटने आदि में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। तालिका संख्या 5.12 में शोधार्थी द्वारा कोल आदिवासी महिलाओं से वन विभाग के कर्मचारियों से होने वाली परेशानियों का उल्लेख किया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 73.9 (258) प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि वनोत्पाद संकलित करने के दौरान वन विभाग के कर्मचारियों द्वारा रोका जाता है तथा तरह-तरह की परेशानियाँ खड़ी की जाती है। इटवा डुडैला तथा टिकरिया की 85.7 तथा 76.4 प्रतिशत महिलाओं ने माना कि उन्हें अक्सर वन विभाग के कर्मचारियों से दो-चार होना पड़ता है। मानिकपुर तथा बरगढ़ बाजार क्षेत्र में यह प्रतिशत (65.5, 68.5) कमोवेश कम है। सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों (कोलान) में वन विभाग के कर्मचारियों कोल आदिवासी महिलाओं को परेशान होना पड़ता है, यदि वे इसका विरोध करती हैं तो उन्हें पुलिस द्वारा पकड़वाने की धमकी दी जाती है। कोल महिलाओं ने इसे गंभीर समस्या

माना। उनका कहना था कि उनके व्यवसाय का यह मुख्य आधार है इसका दूसरा विकल्प सोचना मात्र काल्पनिक ही है।

तालिका संख्या 5.13

वन विभाग कर्मचारियों से बचने के तरीके

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री (कार्यशील)	वन विभाग के कर्मचारियों से बचने के तरीके			
			क	ख	ग	घ
			संख्या	संख्या	संख्या	संख्या
1	इटवा डुडैला	12	8	4	5	3
2	टिकरिया	21	10	5	6	4
3	मानिकपुर	30	15	10	12	10
4	बरगढ़ बाजार	28	17	13	14	9
	योग -	**91**				

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - उनकी सेवा करके

ख - प्रार्थना करके

ग - चकमा देकर

घ - उनकी मांग पूरा करके

वनोत्पादों के संकलन के दौरान वन विभाग के कर्मचारियों द्वारा जब कोल आदिवासी महिलाओं को कानून का सहारा लेकर धमकाया या वनोत्पादों को संकलित करने से मना किया जाता है तो उससे कोल महिलाएं किस प्रकार से निपटती हैं उसका विश्लेषण तालिका संख्या 5.13 में किया गया है। कोल महिलाओं ने शोधार्थी को स्पष्ट किया कि वन विभाग के कर्मचारियों द्वारा परेशान किए जाने पर वे उनकी सेवा करके, प्रार्थना करके, उन्हें चकमा देकर या फिर उनकी नैतिक/ अनैतिक माँगों को पूरा करके, उनसे बचती है जो वन विभाग के कर्मचारी कोलान क्षेत्रों में आकर रूकते हैं उनके लिए

खाना तथा शराब जैसी वस्तुओं की व्यवस्था कोलों द्वारा की जाती है। ऐसा करने पर ही उन्हें जंगलात से लकड़ी काटने, आँवला बीनने, तथा चोरी छिपे तेंदू पत्ता तोड़ने का अवसर प्राप्त हो पाता है।

तालिका संख्या 5.14

संकलित वनोत्पादों के विक्रय केन्द्रों की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	विक्रय केन्द्रों की स्थिति							
			क		ख		ग		घ	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	84	22	26.1	20	23.8	40	47.6	02	2.5
2	टिकरिया	89	24	26.9	23	25.8	32	35.9	10	11.4
3	मानिकपुर	87	11	12.6	25	28.7	47	54.0	04	4.7
4	बरगढ़ बाजार	89	14	15.7	10	11.2	49	55.0	16	17.1
	योग -	**349**	**71**	**20.3**	**78**	**22.3**	**168**	**48.1**	**32**	**9.3**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - ठेकेदार को

ख - संस्थान में

ग - बाजार में

घ - वन विभाग के क्रय केन्द्रों पर

कोल आदिवासी महिलाओं द्वारा संकलित किये गए वनोत्पादों को बेचने के केन्द्रों का उल्लेख तालिका संख्या 5.14 में किया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 48.1 (168) प्रतिशत कोल महिलाओं द्वारा बाजारों में अपने वनोत्पादों को विक्रय हेतु ले जाया जाता है। यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। 22.3 (78) प्रतिशत महिलाएं क्षेत्र में कार्यरत स्वयंसेवी संस्थानों के विक्रय केन्द्रों पर अपने उत्पादों को बेचती हैं। 20.3 (71) प्रतिशत महिलाएं

ठेकेदारों को तथा 9.3 (32) प्रतिशत द्वारा वन विभाग द्वारा स्थापित क्रय केन्द्रों पर वनोत्पादों की बिक्री की जाती है।

बाजारों में वनोत्पादों को बेचने का प्रतिशतांक अधिक होने का कारण उत्पाद का सही तथा त्वरत भुगतान का प्राप्त होना है।

तालिका संख्या 5.15

बाजार जाने के साधन

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	बाजार जाने के साधन							
			क		ख		ग		घ	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	100	11	11.0	00	0.0	89	89.0	00	0.0
2	टिकरिया	100	20	20.0	05	5.0	71	71.0	04	4.0
3	मानिकपुर	100	00	0.0	17	17.0	83	83.0	00	0.0
4	बरगढ़ बाजार	100	00	0.0	21	21.0	79	79.0	00	0.0
	योग –	**400**	**31**	7.7	**43**	**10.7**	**322**	**80.5**	**04**	**1.0**

स्रोत – क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क – पैदल

ख – बस

ग – रेलवे

घ – बैलगाड़ी

तालिका संख्या 5.15 में कोल आदिवासी महिलाओं के बाजार जाने के साधनों का उल्लेख किया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 80.5 (322) प्रतिशत कोल महिलाएं ट्रेन से बाजारों में जाती हैं। ट्रेन से चलने वाली कोल महिलाओं का प्रतिशतांक सर्वाधिक है। 10.7 (43) प्रतिशत महिलाएं बस से 7.7 (31) प्रतिशत पैदल तथा 1.0 (4) प्रतिशत

पैदल ही बाजार जाती है। चयनित कोलान क्षेत्र इलाहाबाद से जबलपुर रेलवे परिपथ पर अवस्थित है। यही कारण है कि कोल महिलाएं प्रायः ट्रेन में यात्रा करती हैं। इटवा डुडैला से यात्रा करने के लिए ट्रेन ही मात्र साधन है। बस आदि का संचालन यहाँ से नहीं होता है। ट्रेन में कोल महिलाओं को अपने वनोत्पाद रखने की भी सुविधा होती है। मानिकपुर से जबलपुर की दिशा तथा इलाहाबाद एवं बाँदा की दिशाओं में यात्रा करने हेतु बहुतायत में ट्रेन की सुविधा उपलब्ध है जिसका लाभ कोल महिलाएं उठाती हैं।

तालिका संख्या 5.16

रेल यात्रा के दौरान टिकट क्रय करने की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री (कार्यशील)	टिकट क्रय करने की स्थिति			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	89	09	10.1	80	89.9
2	टिकरिया	71	10	14.1	61	85.9
3	मानिकपुर	83	13	15.7	70	84.3
4	बरगढ़ बाजार	79	12	15.2	67	84.8
	योग -	**322**	**44**	**13.6**	**278**	**86.4**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

जो कोल महिलाएं ट्रेन से यात्रा करती हैं उनके द्वारा ट्रेन में टिकट लेने की स्थिति का उल्लेख किया गया है। क्षेत्र की 86.4 (278) प्रतिशत महिलाएं ट्रेन की यात्रा करते समय टिकट क्रय नहीं करती है। मात्र 13.6 (44) प्रतिशत महिलाएं ही कभी-कभार ट्रेन का टिकट खरीदती है। इटवा डुडैला तथा टिकरिया की 89.9 तथा 85.9 प्रतिशत कोल आदिवासी महिलाओं द्वारा कभी भी टिकट क्रय नहीं किया जाता है।

टिकट न लेने का कारण उनकी निर्धनता है। ट्रेन चाहे पैसेन्जर हो या मेल कोल महिलाएं हिम्मत के साथ अपने वनोत्पादों के साथ यात्रा करती हैं तथा लकड़ी

के गट्ठो को ट्रेन के प्रवेश द्वार से लेकर दो डिब्बों के जोड में रखकर यात्रा करती हैं। इन कोल महिलाओं के साथ कोई न कोई युवा कोल भी चलता है जो ट्रेन चल जाने की स्थिति में वैक्युम खोलने का कार्य करता है। कोलों की यात्रा से अन्य यात्रियों को परेशानी का सामना करना पडता है किन्तु वे किसी की परवाह न करते हुए यात्रा करती हैं।

तालिका संख्या 5.17

ठेकेदार के व्यवहार से संतुष्टि की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री (कार्यशील)	ठेकेदार के व्यवहार से सन्तुष्टि की स्थिति			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	84	17	20.3	67	79.7
2	टिकरिया	89	21	25.6	68	76.4
3	मानिकपुर	87	09	10.4	78	89.6
4	बरगढ़ बाजार	89	10	11.3	79	88.7
	योग -	**349**	**57**	**16.3**	**292**	**83.7**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

तालिका संख्या 5.17 में कोल आदिवासी महिलाओं का ठेकेदारों के व्यवहार से सन्तुष्टि की स्थिति को दर्शाया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 83.7 (293) प्रतिशत महिलाएं जिनका ठेकेदारों से किसी न किसी का सम्पर्क होता है सन्तुष्ट नहीं है। 16.3 (57) प्रतिशत महिलाएं ठेकेदारों के व्यवहार से सन्तुष्ट हैं। मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार की 89.6 तथा 88.7 प्रतिशत महिलाएं ठेकेदारों के व्यवहारों से सन्तुष्ट नहीं रहती हैं। कोलान क्षेत्र चाहे ग्रामीण हो या नगरीय सभी की कोल महिलाएं ठेकेदारों के व्यवहार से सन्तुष्ट नहीं रहती हैं। अध्ययन क्षेत्र के टिकरिया (52.9), मानिकपुर (53.9) तथा

बरगढ़ बाजार (56.9) की महिलाएं ठेकेदारों द्वारा शारीरिक एवं मानसिक शोषण के कारण सन्तुष्ट नहीं है।

ठेकेदारों द्वारा कोल आदिवासी महिलाओं का आर्थिक शोषण इटवा डुडैला की कोल महिलाओं का सर्वाधिक 59.7 है। जंगलात में अवस्थित होने के कारण जागरूकता के अभाव तथा ठेकेदारों पर निर्भरता के कारण इन महिलाओं द्वारा विरोध करना उचित नहीं माना जाता है।

तालिका संख्या 5.18

सन्तुष्ट न होने का कारण

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	सन्तुष्ट न होने का कारण					
			क		ख		ग	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	67	22	32.8	40	59.7	05	7.5
2	टिकरिया	68	36	52.9	25	36.7	07	10.4
3	मानिकपुर	78	42	53.9	24	30.8	12	15.3
4	बरगढ़ बाजार	79	45	56.9	22	27.8	12	15.3
	योग -	**292**	**145**	**49.6**	**111**	**38.0**	**36**	**12.4**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - शारीरिक/ मानसिक शोषण

ख - आर्थिक शोषण

ग - मांग पूरी न करने पर काम से हटाना

कोल महिलाएं जो ठेकेदारों के व्यवहारों से सन्तुष्ट नहीं रहती हैं उनके कारणों का उल्लेख तालिका संख्या 5.18 में किया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 49.6

(145) प्रतिशत कोल महिलाओं का मानना है कि ठेकेदारों द्वारा उनका शारीरिक एवं मानसिक शोषण किया जाता है। 38.0 (111) प्रतिशत महिलाएं आर्थिक शोषण के कारण तथा 12.4 (36) प्रतिशत महिलाएं माँग (अनैतिक) पूरी न करने पर काम से हटा देने की धमकी के कारण सन्तुष्ट नहीं रहती है। अध्ययन क्षेत्र के टिकरिया (52.9), मानिकपुर (53.9) तथा बरगढ़ बाजार (56.9) की महिलाएं ठेकेदारों द्वारा शारीरिक एवं मानसिक शोषण के कारण सन्तुष्ट नहीं हैं।

ठेकेदारों द्वारा कोल आदिवासी महिलाओं का आर्थिक शोषण इटवा डुडैला क्षेत्र की कोल महिलाओं का सर्वाधिक 59.7 है। जंगलात में अवस्थित होने के कारण जागरूकता के अभाव तथा ठेकेदारों पर निर्भरता से इन महिलाओं द्वारा विरोध करना उचित नहीं माना जाता है।

तालिका संख्या 5.19

विक्रय की जाने वाली वस्तुओं की नाप तौल की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	वस्तुओं का मापन					
			क		ख		ग	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	84	39	46.4	21	25.0	24	28.6
2	टिकरिया	89	34	38.2	35	39.3	20	22.5
3	मानिकपुर	87	53	60.9	22	25.2	12	13.8
4	बरगढ़ बाजार	89	55	61.8	20	22.4	14	15.8
	योग -	**349**	**181**	**51.8**	**98**	**28.0**	**70**	**20.2**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - तराजू से तौलकर

ख - किसी बर्तन से नापकर

ग - अनुमान से

तालिका संख्या 5.19 में कोल आदिवासी महिलाओं द्वारा संकलित वनोत्पादों की बिक्री किए जाने के दौरान उनकी नाप तौल की स्थिति का उल्लेख किया गया है। क्षेत्र की 51.8 प्रतिशत महिलाओं ने माना कि उनके वनोत्पादों को तौलकर खरीदा जाता है। 28.0 प्रतिशत महिलाओं के वनोत्पादों को किसी बर्तन से नाप कर उनकी तौल कर ली गयी मानी जाती है। 20.2 प्रतिशत महिलाएं मानती हैं कि उनके उत्पादों को अनुमान के आधार पर क्रय कर लिया जाता है। संस्थानों द्वारा क्रय किए जाने वाले उत्पादों को प्रायः किसी बर्तन से नापकर क्रय कर लिया जाता है जबकि ठेकेदारों द्वारा अनुमान के आधार पर वस्तुओं की नाप तौल कर ली जाती है।

तालिका संख्या 5.20

विक्रय की गयी वस्तुओं के भुगतान की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	विक्रय वस्तुओं के भुगतान की स्थिति					
			हाँ		नहीं		कभी-कभी	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	84	65	77.3	17	26.2	02	2.5
2	टिकरिया	89	63	70.8	16	17.9	10	11.3
3	मानिकपुर	87	70	80.3	15	17.2	02	2.5
4	बरगढ़ बाजार	89	69	77.5	12	13.4	08	8.1
	योग -	**349**	**267**	**76.5**	**60**	**17.1**	**22**	**6.4**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

कोल आदिवासी महिलाओं द्वारा विक्रय की गयी वस्तुओं के भुगतान की स्थिति का विश्लेषण तालिका संख्या 5.20 में किया गया है। क्षेत्र की 76.5 (267) प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि उनका भुगतान उन्हें समय पर प्राप्त हो जाता है।

6.4 (22) प्रतिशत महिलाएं मानती हैं कि कभी-कभी भुगतान में विलम्ब हो जाता है। 17.1 (60) प्रतिशत महिलाएं मानती है कि उनके द्वारा विक्रीत वस्तुओं या मजदूरी का भुगतान समय पर नहीं किया जाता है।

कोल महिलाओं द्वारा जिन वस्तुओं का विक्रय बाजार में किया जाता है उसका भुगतान उन्हें तुरन्त प्राप्त हो जाता है किन्तु कभी-कभी वस्तुओं या मजदूरी का भुगतान समय पर नहीं किया जाता है।

कोल महिलाओं द्वारा जिन वस्तुओं का विक्रय बाजार में किया जाता है उसका भुगतान उन्हें तुरन्त प्राप्त हो जाता है किन्तु जिन वस्तुओं का विक्रय वन विभाग के क्रय केन्द्रों संस्थानों या फिर ठेकेदारों के यहाँ बेची जाती है उनके भुगतान में उन्हें बहुत परेशानी होती है। ठेकेदारों अथवा वन विभाग के अधीन किये जाने वाले कार्यो की मजदूरी का भुगतान विलम्ब से तो होता ही है, पूरी मजदूरी भी उन्हें प्राप्त नहीं हो पाती जिससे उन्हें आर्थिक शोषण का शिकार होना पड़ता है।

तालिका संख्या 5.21

काम पर जाने वाली कोल आदिवासी महिलाओं के परिवार के सदस्यों के व्यवहार की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	परिवार के सदस्यों के व्यवहार की स्थिति					
			क		ख		ग	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	84	66	78.5	14	16.6	04	4.8
2	टिकरिया	89	60	67.4	16	17.9	13	14.7
3	मानिकपुर	87	25	28.7	20	22.9	42	48.4
4	बरगढ़ बाजार	89	30	33.7	26	29.2	33	37.1
	योग -	**349**	**181**	**51.8**	**76**	**21.8**	**92**	**26.4**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क - सामान्य

ख - मधुर

ग - तनावपूर्ण

तालिका संख्या 5.21 में काम पर जाने वाली महिलाओं के परिवार के सदस्यों के व्यवहार का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 51.8 (181) प्रतिशत महिलाओं के परिवार के सदस्य, उनके बाहर काम पर जाने के बावजूद उनके साथ सामान्य व्यवहार रखते हैं। 26.4 (92) प्रतिशत महिलाओं के परिवार के सदस्यों का व्यवहार उनके प्रति तनावपूर्ण रहता है। 21.8 (76) प्रतिशत महिलाओं के परिवार के सदस्यों का व्यवहार कार्यशील महिलाओं के प्रति व्यवहार मधुर रहता है।

ग्रामीण कोलान क्षेत्रों की तुलना में नगरीय कोलों का व्यवहार उनकी कार्यशील महिलाओं के प्रति अधिक तनावपूर्ण रहते हैं। मानिकपुर तथा बरगढ़ बाजार की महिलाओं का प्रतिशत क्रमशः 48.4 तथा 37.1 है। इटवा डुडैला की महिलाओं का यह प्रतिशत मात्र 4.8 है।

तालिका संख्या 5.22

कोल आदिवासी महिलाओं को संवैधानिक ज्ञान की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री (कार्यशील)	संवैधानिक अधिकारों के ज्ञान की स्थिति			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	100	00	0.0	100	100.00
2	टिकरिया	100	03	3.0	97	97.0
3	मानिकपुर	100	14	14.0	86	86.0
4	बरगढ़ बाजार	100	12	12.0	88	88.0
	योग -	**400**	**29**	**7.2**	**371**	**92.8**

स्रोत : क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

कोल आदिवासी महिलाओं को व्यावसायिक गतिविधियों के कारण प्रायः शोषण का शिकार होना पड़ता है । ऐसी स्थिति में वे शोषण से मुक्ति हेतु क्या उपाय करती हैं उन्हें संवैधानिक नियमों के संज्ञान की स्थिति क्या है का उल्लेख तालिका संख्या 5.22 में किया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 92.8 (371) प्रतिशत महिलाओं को किसी भी प्रकार के संवैधानिक प्राविधानों का ज्ञान नहीं है। मात्र 7.2 (29) नियमों की जानकारी तो हैं किन्तु कभी वे इनसे लाभ प्राप्त करने की हिम्मत नहीं जुटा पाती । मानिकपुर तथा बरगढ़ बाजार क्षेत्र की 14.0 तथा 12.0 प्रतिशत महिलाओं को ही संवैधानिक व्यवस्थाओं का ज्ञान हैं किन्तु यह ज्ञान मात्र पुलिस में शिकायत करने तक ही सीमित है। महिला आयोग, अनुसूचित जाति, जनजाति आयोग सम्बन्धी ज्ञान तो दूर की बात है । इसके पीछे शैक्षणिक पिछड़ापन तथा जागरूकता के अभाव के साथ अपनी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति में ही इतना व्यस्त रहना पड़ता है कि संवैधानिक प्राविधानों को जानना दूर की बात है।

अध्याय-6

6. आदिवासी कोल महिलाएँ एवं रोजगारोन्मुख योजनाएँ

6.1 संवैधानिक सुरक्षाएँ

6.2 जनजातीय विकास की योजनाएँ

6.3 जनजातीय उप योजना

6.4 जनजातीय उप योजना के क्षेत्र

6.5 केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाएँ

6.6 कोल महिलाएँ एवं योजनाएँ

6. आदिवासी कोल महिलाएं एवं रोजगारोन्मुख योजनाएं

पूर्व अध्याय में आदिवासी कोल महिलाओं की व्यावसायिक समस्याओं का उल्लेख किया गया है । प्रस्तुत अध्याय में आदिवासी कोल महिलाओं तथा रोजगारोंन्मुख योजनाओं तथा संवैधानिक प्राविधानों की विवेचना की गयी है ।

6.1 संवैधानिक सुरक्षाएं

संविधान में अनुसूचित जनजातियों के लिए जो व्यवस्थाएं की गयी हैं उन्हें मुख्यतः दो भागों में बांटा जा सकता है - (1) सुरक्षा तथा (2) विकास । अनुसूचित जनजातियों के हितों की सुरक्षा इनके विकास के लिए बहुत ही आवश्यक है। सुरक्षा संबंधी प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 15(4), 16(4), 19(5), 23, 29, 46, 164, 332, 334, 335 व 338, 339(1), 371(क), 371(ख), 371(ग), पांचवी अनुसूची तथा छठी अनुसूची में निहित है। अनुसूचित जनजातियों के विकास से संबंधित प्रावधान मुख्य रूप से अनुच्छेद 275(1) प्रथम उप-बंध तथा 339(2) में निहित हैं।

6.1.1 अनुसूचित जनजाति की सुरक्षा संबंधी प्रावधान

अनुच्छेद 15 धर्म, वंश, जाति, लिंग अथवा जन्म-स्थान के आधार पर किसी भी प्रकार के विभेद का निषेध करता है। परन्तु अनुसूचित जनजाति तथा अनुसूचित जाति की सुरक्षा हेतु इस अनुच्छेद का खंड 4 एक अवसर प्रदान करता है। यह राज्य को सामाजिक तथा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के नागरिकों अथवा अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए कोई विशेष प्रावधान बनाने का अधिकार प्रदान करता है। यह प्रावधान अनुच्छेद 46 में उल्लिखित नीति के अनुसार है, जिसके तहत राज्य सरकार को विशेष ध्यान देकर पिछड़े वर्ग के लोगों के शैक्षिक व आर्थिक हितों का विकास करना चाहिए तथा सामाजिक अन्याय से इनकी रक्षा करनी चाहिए । इस खंड का समावेश विशेष रूप से किया गया है, ताकि सामाजिक अथवा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के नागरिकों

की प्रगति के लिए राज्य सरकार द्वारा बनाए गए किसी विशेष प्रावधान को भेदमूलक मान्य कानूनी न्यायालयों में चुनौती दिए जाने से रोका जा सकें।

अनुच्छेद 16(4)

पदों व सेवाओं में आरक्षण अनुच्छेद 16 के खंड 1 व 2 में उल्लिखित सरकारी रोजगार के मामलों में अवसर की समानता के अधिकार के प्रति अनुच्छेद 16(4) एक अन्य अपवाद है।

अनुच्छेद 14 व 16(4)

अनुच्छेद 14 व 16(4) को इस तरह से न समझा जाना चाहिए, जिससे ये एक-दूसरे को निरर्थक कर दें। यदि अनुच्छेद 16(4) के तहत किए गए आरक्षण को किसी यथोचित सीमा के तहत रखा जाता है तो अनुच्छेद 14 का कोई उल्लंघन नहीं होगा। परन्तु यदि आरक्षण की अधिकता है, अर्थात् कुल पदों का 50 प्रतिशत से अधिक है तो उन्नत वर्गो के सदस्यों को कानून के तहत बराबरी के अधिकार से वंचित करना माना जाएगा।

अनुच्छेद 15(4) व 16(4)

इन दोनों अनुच्छेदों में, पिछड़े वर्गो के हितों की सुरक्षा के प्रावधान हैं, परन्तु जहां अनुच्छेद 15(4) सरकार को अपने सभी क्षेत्रों में पिछड़े वर्गो के प्रति सुरक्षात्मक विभेद प्रदान करने का अवसर देता है, वहीं अनुच्छेद 16(4) सरकार के अधीन नौकरियों में विशेष रूप से सुरक्षात्मक विभेद का अधिकार प्रदान करता है। अनुच्छेद 15(4) अन्य मामलों, जैसे-राज्य के शासकीय शैक्षिक संस्थानों में प्रवेश से संबन्धित है।

अनुच्छेद 19(5) सम्पत्ति में आदिवासियों के हितों की सुरक्षा

भारत की सम्पूर्ण सीमा के भीतर स्वतंत्र रूप से विचरण एवं आवास तथा सम्पत्ति के अर्जन व निपटान करने के अधिकार की गारंटी प्रत्येक नागरिक को है, परन्तु

अनुच्छेद 19(5) के तहत अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के हितों की सुरक्षा हेतु सरकार विशेष प्रतिबंध लागू कर सकती है।

अनुसूचित जनजातियां आर्थिक दृष्टि से पिछड़े तथा भोले-भाले निष्कपट लोग होते हैं, जिन्हें चालाक व कपटी लोग बड़ी आसानी से धोखा दे देते हैं। अतः ऐसे कई प्रावधान हैं जिनमें विशेष परिस्थितियों को छोड़, उनकी स्वयं की सम्पत्तियों को भी वे हस्तांतरित नहीं कर सकते । आदिवासियों के स्वंय के हित में तथा उनके निजी लाभ के लिये आदिवासी क्षेत्रों या अनुसूचित क्षेत्रों में स्वतंत्र रूप से घूमने अथवा बसने या सम्पत्ति अर्जित करने के आम नागरिक के अधिकार को प्रतिबंधित करने के लिए कानून बनाए जा सकते हैं।

इस अनुच्छेद में "आम नागरिकों के हितों" के साथ अनुसूचित जनजातियों का विशेष उल्लेख दर्शाता है कि अनुसूचित जनजातियों की सुरक्षा के लिए बनाए गए प्रतिबंधों को खंड 5 के तहत बरकरार रखा जाएगा, चाहे इस प्रकार का प्रतिबंध आम नागरिक के हित में न हो।

हालांकि यह खंड अनुसूचित जातियों के बारे में कुछ भी उल्लेख नहीं करता, इनकी सुरक्षा के लिए भी प्रतिबंधों को लागू किया जा सकता है, चूंकि ये एक पिछड़े वर्ग से हैं, अतः इनके भी शोषण को रोकना आम जनता के हित में होगा।

अनुच्छेद 23

अनुच्छेद 23 मानव शरीर की सौदेबाजी, बेगार, बंधक मजदूर तथा अन्य प्रकार के जबरन श्रम का निषेध करता है। जहां तक अनुसूचित जनजातियों का प्रश्न है, यह प्रावधान बहुत की महत्वपूर्ण है, क्योकि इनमें से अधिकांश लोग बंधक मजदूर के रूप में नियोजित हैं।

अनुच्छेद 29 सांस्कृतिक व शैक्षिक अधिकार

अनुच्छेद 29(2), अनुच्छेद 15 के खंड 4 के द्वारा नियंत्रित है, जिसका संविधान में समावेश प्रथम संशोधन अधिनियम, 1951 के द्वारा किया गया है। इससे अनुच्छेद 15 व 29, अनुच्छेद 16(4), 46 व 340 के समरूप आ गए तथा इसने सरकार को शासकीय शैक्षिक संस्थानों में पिछड़े वर्गो के नागरिकों को सीटों के आरक्षण के लिए संवैधानिक अधिकार दिया।

अनुच्छेद 29 के अनुसार, सांस्कृतिक अथवा भाषायी अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा अथवा संस्कृति को समुचित बनाए रखने का अधिकार है। यह अनुच्छेद अनुसूचित जनजातीय समुदायों को अपनी भाषाओं, बोलियों तथा संस्कृतियों को बनाए रखने के लिए सुरक्षा प्रदान करता है। सरकार कोई अन्य संस्कृति अथवा भाषा कानून द्वारा उन पर नहीं लाद सकती।

अनुच्छेद 46

यह अनुच्छेद अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य कमजोर वर्गो के शैक्षिक एंव आर्थिक हितों के विकास के बारे में प्रावधान करता है।

अनुच्छेद 164

यह अनुच्छेद बिहार, उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश राज्यों में आदिवासी कल्याण के लिए एक प्रभारी मंत्री की नियुक्ति का अधिकार प्रदान करता है। इन राज्यों में आदिवासियों की काफी जनसंख्या है तथा आदिवासियों के कल्याण से संबंधित मामलों के लिए मंत्री का विशेष प्रावधान होना इस बात का द्योतक है कि अनुसूचित जनजातियों के हितों की सुरक्षा के लिए संविधान के निर्माता कृतसंकल्प थे।

अनुच्छेद 320 (4)

अनुच्छेद 320(4) में यह उल्लेख है कि अनुच्छेद 16 के खंड 4 में संदर्भित किसी प्रावधान के सम्बन्ध में अथवा अनुच्छेद 335 के प्रावधानों को प्रभावी रूप में दिए जाने के सम्बन्ध में लोक सेवा आयोग से सलाह-मसविरा करने की आवश्यकता नहीं है।

अनुच्छेद 330, 332 तथा 334

अनुच्छेद 330 के अनुसार, अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के लिए लोक सभा में सीटों का आरक्षण किया जाएगा। अनुच्छेद 332 के अनुसार, प्रत्येक राज्य की विधान सभा में सीटों का आरक्षण किया जाएगा । अनुच्छेद 332 के अनुसार प्रत्येक राज्य की विधान सभा में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए भी सीटों का आरक्षण किया जाएगा।

अनुच्छेद 334 के अनुसार, संविधान के आरंभ होने के 40 वर्षो की अवधि में, अर्थात 1990 में इस प्रकार का आरक्षण समाप्त हो जाएगा। आरंभ में इस संविधान के लागू होने से 10 वर्ष की अवधि के लिए था, परन्तु अनुच्छेद 334 में किए गए संशोधन के अनुसार इसे अगले 30 वर्षों के लिए, अर्थात वर्ष 1990 के अंत तक बढ़ा दिया गया। अब यह फिर संविधान संशोधन द्वारा 10 साल के लिए और बढ़ा दिया गया है, अर्थात् अब यह आरक्षण 2010 के अंत तक चालू रहेगा।

विशेष अधिकारी अनुच्छेद 338

अनुच्छेद 338 के अनुसार, अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के लिए राष्ट्रपति के द्वारा एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति करने का प्रावधान है। संविधान के तहत अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों को सुरक्षा प्रदान करने संबंधी सभी मामलों की जांच करने का दायित्व विशेष अधिकारी का होगा। इन सुरक्षाओं के क्रियान्वयन के बारे में उन्हें राष्ट्रपति द्वारा दिए गए निर्देशानुसार नियत अंतराल के पश्चात एक रिपोर्ट राष्ट्रपति

को देनी होगी । राष्ट्रपति इस प्रकार की सभी रिपोर्टो को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष पटल पर रखवाएंगे । इस प्रकार के अधिकारी को अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के लिए आयुक्त (कमिश्नर) के रूप में नियुक्त एवं पदेन किया गया है।

अनुसूचित जनजाति विकास संबंधी प्रावधान :-

अनुसूचित जनजातियों के आर्थिक विकास संबंधी प्रावधान मुख्यतः अनुच्छेद 275(1) तथा 339 (2) में निहित है। संक्षेप में अनुच्छेद 275(1) का प्रथम उपबंध, भारत सरकार के अनुमोदन से कोई भी राज्य सरकार द्वारा अपने क्षेत्र में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण को बढ़ावा देने अथवा अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासनिक स्तर को राज्य के अन्य क्षेत्रों के सामान्य प्रशासनिक स्तर तक ऊपर उठाने के उद्देश्य से चलाई जाने वाली विकास योजनाओं के खर्च की पूर्ति के लिए अनुदान के प्रावधान का उल्लेख करता है । इस अनुच्छेद के अनुपालन में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या वाले राज्यों को विशेष केन्द्रीय सहायता दिए जाने का प्रावधान किया गया है। इस प्रावधान के अनुसार, अनूसूचित जनजातियों के कल्याण हेतु आवश्यक विशेष योजनाओं के लिए अनुदान की व्यवस्था का प्रावधान है तथा ये योजनाएं केन्द्र सरकार के पूर्व अनुमोदन से प्रभावी रूप से चलाई जानी चाहिए । परन्तु ऐसा नहीं किया जाता है। बिना किसी विशेष योजनाओं के अनुदानों को राज्यों में बांट दिया जाता है।

अनुच्छेद 339(2) और भी एक कदम आगे हैं। इसके तहत केन्द्रीय कार्यपालिका राज्यों को अ.ज.जा. कल्याण सम्बन्धी निर्देश जारी कर सकती है। यह केन्द्रीय कार्यपालिका को राज्य में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए निर्देश में विर्निदिष्ट ऐसी योजनाएं बनाने तथा क्रियान्वित करने सम्बन्धी दिशा-निर्देश जारी करने का अधिकार प्रदान करता है।

राज्य सरकारों द्वारा इस सम्बन्ध में अच्छा प्रदर्शन नहीं रहा है । इसके बावजूद भी केन्द्र द्वारा प्रावधानों में प्रदत्त शक्तियों का न तो अभी तक उपयोग किया गया है

और न ही इन पर कोई दिशा-निर्देश जारी किया गया है। इस दिशा में केन्द्र द्वारा आवश्यक कदम उठाना न केवल अपेक्षित है, बल्कि संवैधानिक उत्तरदायित्व है।

6.2 जनजातीय विकास की योजनाएं

6.2.1 स्वतंत्रता के पश्चात जनजातीय विकास के प्रयास

स्वतंत्रता के बाद आदिवासियों के आर्थिक विकास के लिए विभिन्न प्रयास किए गए हैं। प्रथम प्रयास 1954 में किया गया था, जब सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के संपूरन के लिए 43 विशेष बहुउद्देशीय विकास परियोजनाओं को ग्रामीण क्षेत्रों के व्यापक विकास के उद्देश्य से पांच वर्षो के लिए आरंभ की गई थी । इनमें से प्रत्येक को 27 लाख रूपये की अतिरिक्त लागत भी प्रदान की गई थी । चूंकि ये परियोजनाएं ऐसे क्षेत्रों में थी, जोकि छितरी आबादी वाले पहाड़ी और व क्षेत्र थे तथा जहां दूरसंचार तथा संस्थागत सुविधाओं की कमी के कारण अधिक विस्तार सेवा कार्यकर्ताओं द्वारा निजी ध्यानाकर्षण अपेक्षित था। अतः इन प्रयासों से अपेक्षित सफलता की प्राप्ति नहीं हुई ।

सन् 1956 में एल्विन समिति द्वारा स्थिति का पुनरावलोकन किया गया, जिसने आदिवासी क्षेत्रों में विविधतापरक योजनाओं को अविलम्ब आरंभ करने की सिफारिश की । समीक्षा करने के पश्चात 1957 में परियोजनाओं को आदिवासी विकास खंड़ो के अल्प गहन माडल के द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। आदिवासी विकास खड के लिए प्रतिमान को 150 से 200 वर्ग मील के क्षेत्र तथा लगभग 25 हजार की आबादी तक सीमित रखा गया । खंडो को गहन विकास कार्यक्रम के तहत आदिवासियों के लिए काम करना था उन्हें चार मुख्य क्रियाकलापों पर ध्यान केन्द्रित करना था - आर्थिक विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा संचार, और उनके पास निश्चित लक्ष्य चाहिए थे ।

अप्रैल 1960 में अनुसूचित क्षेत्र तथा अनुसूचित जनजाति आयोग, जो कि सामान्यतः ढेबर आयोग कहलाता है, द्वारा आदिवासी परिप्रेक्ष्य की गहन समीक्षा की गई और इसने अपनी रिपोर्ट अक्टूबर 1961 में प्रस्तुत की । आयोग ने पाया कि आदिवासी क्षेत्रों में

विकास की दर बहुत ही कम है, निवेश तथा अन्य सुरक्षा संबंधी कदम भी अपर्याप्त हैं और सरकार द्वारा अवलिम्ब ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। इसमें अनुसूचित क्षेत्रों के अंदर और बाहर रहने वाले सभी आदिवासियों की सुरक्षा के लिए व्यापक विधानों तथा आदिवासी क्षेत्रों के लिए सरल प्रशासनिक प्रणाली पर बल दिया गया । इसने 50 प्रतिशत से अधिक आदिवासी जनसंख्या वाले सभी क्षेत्रों के लिए आदिवासी विकास खण्ड की योजना की सिफारिश की ।

आयोग की सिफारिश को मानते हुए खंड को विकास की माध्यम इकाई रखा गया । तीसरी पंचवर्षीय योजना के अंत तक इस योजना को कुल आदिवासी जनसंख्या के लगभग 40 प्रतिशत आबादी को समाहित करते हुए लगभग 500 खंडो में कार्यान्वित किया गया । इससे आदिवासी जनसंख्या का एक बहुत बडा भाग विकास संबंधी कार्यक्रमों से वंचित रहा । जहां तक सुरक्षा संबंधी उपायों और विकासशील कार्यक्रमों की बात है, आदिवासियों की स्थिति लगभग अपरिवर्तनीय रही । जनजातीय विकास कार्यक्रमों की समीक्षा करने के लिए 1969 में शीलू आओ की अध्यक्षता में समिति नियुक्त की गई। इसने पाया कि ढेबर आयोग की अधिकांश सिफारिशें कार्यान्वित नहीं हो पाई हैं, अतः इसने कहा कि इन्हें बिना किसी विलंब के तत्काल लागू किया जाना चाहिए। इसने खंड योजना को पर्याप्त मान नामंजूर कर दिया । ऐसा पाया गया कि योजना और कार्यान्वयन की मूल इकाई के रूप में प्रभावी रूप से कार्य करने के लिए खंड बहुत ही छोटा था। आदिवासियों की मुख्य समस्याएं ऋणग्रस्तता, भू-हस्तांतरण, आर्थिक पिछड़ापन तथा संचार व्यवस्था में कमी से संबंधित है । विकास का व्यापक कार्यक्रम बनाते हुए इन समस्याओं का निराकरण प्राथमिकता के आधार पर किया जाना चाहिए। चौथी योजना के दौरान चार राज्यों में छह आदिवासी विकास एजेन्सियों को आरम्भिक योजनाओं के रूप में आरंभ किया गया । इनमें से मध्य प्रदेश में दो, उड़ीसा में दो तथा बिहार और आन्ध्र प्रदेश में एक-एक थी । बाद में चौथी योजना के अंत में उड़ीसा में दो और एजेंन्सियां आरंम्भ हो गई । प्रत्येक एजेन्सी के अन्तर्गत खंडों का

एक समूह आता था और प्रत्येक एजेन्सी से साधनों के एकत्रीकरण के द्वारा समकालित आधार पर विविध कार्यक्रमों और सुरक्षा सम्बन्धी उपायों को लिए जाने की आशा थी । चौथी योजना में इन एजेन्सियों को लगभग 44 करोड़ रूपये आवंटित किए गए थे । यह आवंटन सामान्य व्यय के अलावा था। हालांकि, व्यावहारिक रूप में एजेन्सी का दृष्टिकोण वास्तव में एक कृषि विकास कार्यक्रम बना रहा और अपेक्षित परिणामों की प्राप्ति में असफल रहा इस कार्यक्रम का विस्तार अन्य क्षेत्रों में नहीं किया गया और ब्लाकों को विकास की एक चौथी के रूप में जारी रखा गया।

6.3 जनजातीय उप-योजना

योजना आयोग द्वारा गठित 'जनजातीय क्षेत्र विकास कृत्यक बल' द्वारा पांचवी पंचवर्षीय योजना की पूर्व जनजातीय स्थिति की पुनः समीक्षा की गई । इसने विचार व्यक्त किया कि पूर्व आयोगों तथा समितियों द्वारा पाई गयी कमिंयों व दोषों को सामान्यतः दूर नहीं किया गया । विकास कार्यक्रमों की असफलता का एक प्रमुख कारण यह था कि अनुसूचित जनजातियों और आदिवासी क्षेत्रों को विकास की प्रमुख समस्या के रूप में न देखकर, कल्याण सम्बन्धी समस्या के रूप में देखा गया। अनुसूचित जनजातियों का कल्याण पिछड़े वर्ग सेक्टर के अंतर्गत लघु व्यय पर आधारित जारी रहा, न कि सामान्य सेक्टर के व्यय पर। आदिवासी क्षेत्रों के प्रशासनिक ढांचे में सरलता की कमी रही । जटिलता के कारण यह आदिवासियों की समझ से बाहर रहा , अतः इसे उनसे कोई अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं मिली । इसलिए आदिवासी क्षेत्रों के एकीकृत विकास के लिए इस प्रकार का प्रशासनिक ढांचा उपयुक्त नहीं हो सकता । कृत्यक बल ने सिफारिश की कि आदिवासी क्षेत्रों में संतुलित सामाजिक-आर्थिक विकास सुनिश्चित करने के लिए पांचवी तथा परवर्ती योजनाओं के लिए एकीकृत विकास की नीति की आवश्यकता होगी । 1974-75 में एक 'जनजातीय उप-योजना कार्यक्रम' को प्रस्तुत किया गया। इस योजना में जनजातीय समुदायों के जीवन स्तर को सुधारने पर बल दिया गया। इसका तात्कालिक उद्देश्य सभी प्रकार के शोषण को समाप्त

करना, लोगों की अंतःशक्ति का निर्माण करना, सामाजिक और आर्थिक विकास की प्रक्रिया को तेज करना तथा उनकी संगठनात्मक क्षमताओं में सुधार लाना था। जनजातीय लोगों से संबंधित कोई भी लाभकारी विकास प्रक्रिया तब तक सफल नहीं होगी जब तक कि विविध प्रकार के शोषण को रोका नहीं जाता।

आदिवासियों को शोषण से रोकने के लिए इसने एकीकृत साख विपणन सेवा, कृषि एवं लघु वनोपज का विपणन, निवेश तथा आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं की आपूर्ति, उत्पाद उद्देश्यों के लिए साख, सामाजिक आवश्यकताओं का उपभोग, वैधानिक एवं कार्यकारी उपायों के माध्यम से पूर्व ऋणों से मुक्ति और परिणामपरक दायित्व से निपटने के लिए उपयुक्त उपायों को अपनाने की सिफारिश की भू-हस्तांतरण को रोकने, पूर्व में हस्तांतरित भूमि की पुनः प्राप्ति, बंधक मजदूर जैसी प्रथाओं को समाप्त करने, आधुनिक औद्योगिककृत क्षेत्रों के प्रभाव वाले अंचलों में उत्पन्न समस्याओं को हल करने और शराब उत्पाद शुल्क एवं वन नीतियों की समीक्षा करने पर विशेष रूप से ध्यान दिए जाने की आवश्यकता हैं ।

जनजातीय अर्थव्यवस्था के विकास के लिए 'जनजातीय उप योजना' कार्यक्रम ने कृषि, भूमि-सुधार, सिंचाई, खेती के उन्नत तरीकों और भू-अभिलेखों को पूरा करने को उच्च प्राथमिकता देने, बागवानी, पशुपालन एवं सम्बद्ध व्यवसायों के क्षेत्र में कार्यक्रमों के जरिए उपलब्ध मानव-शक्ति की बेहतर उपयोगिता के लिए रोजगार के अवसर उत्पन्न करने, स्थानीय कच्चे माल पर आधारित कुटीर उद्योगों का विकास करने, ताकि क्षेत्र के निर्यात परिवेश में अर्द्ध-संसाधित एवं संसाधित वस्तुओं के अनुपात को अधिकतम किया जा सके तथा सामाजिक-आर्थिक विकास को गति प्रदान करने के लिए वैधानिक, संस्थागत एवं भौतिक क्षेत्रों सहित मूलभूत ढांचे को विकसित करने की सिफारिश की ।

जनजातीय उप योजना को तैयार करते समय, जिसका उद्देश्य जनजातीय परिवारों पर केन्द्रित रहते हुए क्षेत्र का विकास करना है, जनजातीय समस्याओं की पूर्णरूप से समीक्षा की गई। इसके अंतर्गत निम्नलिखित बिन्दु शामिल किए गए :-

1. जनजातीय संकेन्द्रण के क्षेत्रों की पहचानकरण और सीमांकन,
2. सामाजिक-सांस्कृतिक अवरोधों तथा विकास में परिवर्तन के प्रवर्तकों को पहचानना,
3. जनजातीय क्षेत्रों की संभावनाओं, विशेष समस्याओं तथा महसूस की जाने वाली आवश्यकताओं का मूल्यांकन करना,
4. उप-योजना के लिए उपलब्ध स्रोतों का मूल्यांकन करना,
5. सेक्टरवार कार्यक्रमों को प्रतिपादित करना तथा
6. उपयुक्त प्रशासनिक ढांचे की प्रकल्पना करना ।

6.4 जनजातीय उप-योजना के क्षेत्र

जनजातीय उप योजना कार्यक्रम को 17 राज्यों तथा दो संघ शासित क्षेत्रों के कुछ पहिचाने क्षेत्रों में लागू किया गया है, ये हैं - आन्ध्रप्रदेश, असम, बिहार, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, मणिपुर, उड़ीसा, राजस्थान, सिक्किम, तमिलनाडु, त्रिपुरा, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, अंडमरन एवं निकोबार द्वीप समूह तथा दमन द्वीप । इस कार्यक्रम को चार जनजातीय बाहुल्य राज्यों - अरूणाचल प्रदेश, मिजोरम, मेघालय और नगालैण्ड तथा दो संघशासित क्षेत्रों - लक्षद्वीप एवं दादरा व नगर हवेली में लागू नहीं किया गया, क्योंकि इनकी सम्पूर्ण योजना जनजातीय लोगों के विकास और कल्याण के प्रति अभिलक्षित है।

आदिवासी उप कार्यक्रम के मुख्य तत्व एकीकृत जनजातीय विकास परियोजनाएं संशोधित क्षेत्रीय विकास योजना तथा अंतर निवासीय क्षेत्र एवं आदिम जनजातीय समूह परियोजनाएं हैं। जनजातीय उप योजना कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए उपर्युक्त राज्यों और संघ-शासित क्षेत्रों में 191 एकीकृत जनजातीय विकास परियोजनाएं बनाई गई। प्रत्येक एकीकृत जनजातीय विकास परियोजना में ब्लाकों /तालुकों /तहसीलों या 50 प्रतिशत अथवा अधिक जनजातीय जनसंख्या वाले सम्पूर्ण जिलों को शामिल किया गया। परियोजना क्षेत्रों की

रूपरेखा बनाते समय मुख्य तत्वों जैसे - आदिवासी जनसंख्या की प्रधानता, क्षेत्र संसक्ति तथा प्रशासनिक व्यवहार्यता को ध्यान में रखा गया। कुछ राज्यों - जैसे पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, केरल तथा तमिलनाडु में जहां जनजातीय जनसंख्या का संकेन्द्रण संसक्ति परिक्षेत्र में नहीं है, एकीकृत जनजातीय विकास परियोजना क्षेत्रों को चित्रित करने के लिए एक लचीले दृष्टिकोण को अपनाया गया। इसके अलावा, नौ राज्यों में जिनके अंतर्गत लगभग 50 लाख आदिवासी जनसंख्या आती है, 285 संक्षवियों भी बनाए गए। ऐसे क्षेत्रों में जहां न्यूनतम कुल जनसंख्या 10 हजार हो तथा जनजातीय संकेन्द्रण 50 प्रतिशत या अधिक हो, परिवारोन्मुखी आय जनहित कार्यक्रमों को लेते हुए पारिवारिक विकास पर बल दिया गया है । छठी योजना के अंत तक जनजातीय उप योजना कार्यक्रम के तहत 17 राज्यों तथा दो संघ-शासित क्षेत्रों की कुल जनजातीय जनसंख्या का लगभग 75 प्रतिशत भाग शामिल कर लिया गया था।

जनजातीय उप योजना कार्यक्रम की सुविधाओं को बाद में विभिन्न राज्यों के शेष 25 प्रतिशत बिखरे हुए जनजातीय लोगों के लिए विस्तार करने का निर्णय लिया गया। इस प्रकार शत-प्रतिशत जनजातीय जनसंख्या को जनजातीय उप योजना के कार्यक्रमों के अधीन ले आया गया। सातवी योंजना के दौरान गरीबी की रेखा से नीचे जीवन-यापन करने वाले परिवारों को आर्थिक सहायता दी गई। छठी योजना के दौरान लगभग 28 लाख परिवारों के लक्ष्य के मुकाबले लगभग 39 लाख परिवारों को आर्थिक सहायता दी गई। सातंवी योजना के दौरान 41.56 लाख परिवारों को आर्थिक सहायता देने का लक्ष्य रखा गया है।

कुछ जनजातीय समुदाय और समूह अभी भी अर्थव्यवस्था के आदिम या आरंभिक चरणों में हैं। इन लोगों के विकास के लिए विशेष योजना बनाने और कार्यक्रम के कार्यान्वयन की आवश्यकता हे। चौदह राज्यों और दो संघशासित क्षेत्रों में ऐसी 74 आदिम जनजातियों की पहचान कर ली गई है। इसके अंतर्गत लगभग 13 लाख जनजातीय लोग आते हैं।

1. राज्य योजना व्यय-कोष से,

2. आदिवासी क्षेत्रों के लिए केन्द्रीय मंत्रालयों में क्षेत्रीय व्यय से,

3. आदिवासी क्षेत्रों के लिए विशेष केन्द्रीय आवंटन से, तथा

4. संस्थागत वित्त व्यवस्था, मुख्यतः बैंको से

राज्य योजना से उप योजना को राशि का प्रवाह जनजातीय विकास कार्यक्रमों के लिए संसाधन का मुख्य आधार है तथा अन्य स्रोतो से व्यय उप योजना के पूरक हैं। राज्य योजना से इस उद्देश्य के लिए व्यय की मात्रा निम्नलिखित मदों को दृष्टिगत रखते हुए प्राप्त होती है।

1. कुल जनसंख्या,

2. भौगोलिक क्षेत्र,

3. विकास का तुलनात्मक स्तर, तथा

4. सामाजिक सेवाओं की स्थिति

राज्य योजना व्यय में विभाज्य तथा अभाज्य अंश होते हैं। वे निवेश जिनका लाभ किसी क्षेत्र विशेष तक सीमित नहीं रहता, अभाज्य अंश होते हैं, आदिवासी क्षेत्र को देय सुविधा की संभूति सुनिश्चित करने के लिए संसाधनों की मात्रा व उपयोग की समीक्षा की जानी चाहिए । विभाज्य अंश की धनराशि के वितरण के लिए आदिवासी क्षेत्रों को उनके सामाजिक एवं आर्थिक विकास के वितरण के स्तर के आधार पर प्राथमिकता दी जानी चाहिए। संस्थागत वित्त व्यवस्था को आदिवासी क्षेत्रों में वितरण को सुनिश्चित करने के लिए विशेष समस्याओं,यदि कोई हैं, को ध्यान में रखना चाहिए । राज्य के प्रत्येक कार्यक्रम से आदिवासी क्षेत्रों के लिए सुविधाओं के संभावित बहाव की मात्रा निश्चित की जानी चाहिए तथा इसी अनुपात में मात्रा आदिवासी क्षेत्रों के लिए होनी चाहिए। जनजातीय उप योजना के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता की भूमिका उन सभी संसाधनों में पूरक की होना चाहिए जिसे राज्य मान्यताओं, केन्द्रीय मंत्रालयों तथा वित्तीय संस्थानों के द्वारा संचालित किया जा सकता है।

पहली योजना से दसवीं योजना तक कुल व्यय तथा जनजातीय उप योजना जनजातीय क्षेत्र के लिए कुल व्यय निम्नानुसार है :-

पंचवषीय योजना/ वार्षिक योजना	कुल राज्य योजना राशि	जनजातीय उप योजना के लिए वित्तीय कोष का वितरण	कुल राशि का प्रतिशत (करोड़ रू0 में)
प्रथम योजना	1,980	19.93	1.00
द्वितीय योजना	4,672	42.92	0.90
तृतीय योजना	8,577	50.53	0.6
चतुर्थ योजना	15,902	75.00	0.5
पांचवी योजना	17,692	751.00	4.25
छठी योजना	42,390	3,718.00	8.77
सातवी योजना	1,19,209	11,592.00	10.27
आठवी योजना	1,66,956	15,800.00	8.54
नवी योजना	2,89,147	23,375	8.05
दशवीं योजना	3,92,453	53,754	13.06

उप योजना कार्यक्रम के लांगू होने के पश्चात जनजातिय उपयोजना क्षेत्रों की ओर कोषों के संवितरण में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, परन्तु अधिकांश कोष अप्रयोगमूलक रहे और इसके परिणामस्वरूप जनजातीय क्षेत्रों और जनजातीय समुदायों को आनुपातिक सुविधाएं प्राप्त नहीं हुई हैं।

जनजातीय उप योजना की लगभग 50-60 प्रतिशत राशि का निवेश स्थान के आधार पर केवल बड़ी और मध्यम सिंचाई, ऊर्जा, औद्योगिक तथा अन्य परियोजनाओं पर किया गया। इसे जनजातीय उप योजना के अंतर्गत निवेश के रूप में दर्शाया गया, परन्तु आदिवासियों को अनुपातिक सुविधाएं प्राप्त नहीं हुई । वास्तव में इस प्रकार इन परियोजनाओं से प्रमुख रूप से गैर आदिवासियों को ही लाभ मिला है। व्यक्तिगत क्षेत्रों में भी राज्य योजना से जनजातीय उप योजना में वित्तीय कोष का संवितरण अप्रयोगमूलक रहा। यहां तक कि विभाज्य सेक्टरों में भी संपूर्ण राज्य के लिए सेक्टर के आधार पर आवंटन किया गया है,

न कि व्यक्तिगत एकीकृत जनजातीय विकास परियोजनाओं के आधार पर । इससे अनुसूचित जनजातियों की भौतिक सुविधाओं पर एक प्रकार की रोक लगी रही, जोकि वस्तुतः निष्फल रही।

राज्य सरकारों की विशेष योजनाओं में प्रयासों को पूरा करने के लिए 'विशेष केन्द्रीय सहायता राशि' का उपयोग अंतर-पूर्ति के रूप में नहीं किया गया। राज्य सरकार के योजना एवं वित्त विभागों द्वारा इस राशि के आवंटन को सेक्टरवार बनाया गया, न कि एकीकृत जनजातीय विकास परियोजनावार । एकीकृत जनजातीय विकास परियोजना के परियोजना अधिकारी का इस प्रकार की राशि पर किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं होता । अतः परिवारोन्मुखी योजनाओं में इसकी उपयोगिता की जांच करना कठिन हो गया ।

6.5 केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाएं

अनुसूचित जनजातियों के विकास की केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाओं का एक महत्वपूर्ण पक्ष संघ सरकार और राज्य सरकार के बीच दायित्व का विभाजन है। प्रत्येक केन्द्रीय मंत्रालय और विभाग, अपने मंत्रालय अथवा विभाग से सम्बन्धित सभी मामलों के बारे में सर्वोच्चतम माना जाता है ।

कल्याण मंत्रालय की मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियां, कोचिंग तथा परीक्षा पूर्व प्रशिक्षण केन्द्रों जैसी संबंधित सुविधाएं और पुस्तक बैंक जैसी शैक्षिक सुविधाएं आदि कुछ ऐसी योजनाएं हैं, जो अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों, दोनों के लिए समान रूप से लागू है। बालिका छात्रावास, अनुसंधान व प्रशिक्षण तथा स्वैच्छिक संगठनों को सहायता नामक तीन योजनाओं के तहत अनुसूचित जनजातियों के लिए अलग से प्रावधान भी किया गया है। केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाओं के तहत बाल छात्रावासों का निर्माण कार्य भी शुरू किया गया है।

जनजातीय उप योजना पांचवी पंचवर्षीय योजना से चालू है, परन्तु आदिवासी क्षेत्रों की स्थिति में किसी प्रकार की स्पष्ट प्रगति यह नहीं ला सकी । राज्य

सरकार की योजना के तहत यह सेक्टरवार योजनाओं का मात्र एकीकरण बनकर रह गई है। राज्य सरकार की योजना के अंतर्गत सामान्य योजनाओं और कार्यक्रमों को जनजातीय क्षेत्रों में लागू किया गया है जोकि स्थानीय आदिवासियों की आवश्यकताओं और इच्छाओं की पूर्ति करने में असफल रही । जनजातीय उपयोजना के वित्तीय कोष का सेक्टरवार प्रवाह आदिवासी क्षेत्रों में निवेशों के असंतुलन की समस्या का समाधान नहीं कर सका । क्षेत्र-विशेष कार्यक्रमों की अनुपस्थिति में निवेशों की व्यावहारिक उपलब्धियों को जान पाना कठिन हे। सभी स्वच्छता, संचार, कृषि उत्पादकता, बागवानी, उद्योग, आदि से सम्बन्धित असंरचनात्मक विकास के बारे में आधारभूत जानकारी को अब तक सारणीबद्ध नहीं किया गया है। किसी समय सीमा में आदिवासी क्षेत्रों के विकास के लिए नियोजित कार्यक्रम बनाने के लिए इस प्रकार की सूचना एक आधार है।

जनजातीय क्षेत्रों के संतुलित विकास में गति प्रदान करने के लिए एकीकृत जनजातीय विकास परियोजना को जीवनक्षम प्रशासनिक इकाई के रूप में माना गया था। प्रत्येक एकीकृत जनजातीय विकास परियोजना का प्रधान एक वरिष्ठ अधिकारी होता है, परन्तु उसके पास न तो विकास एजेन्ट के रूप में और न ही समन्वयक के रूप में कार्य करने की कोई भूमिका होती है। जहां तक जनजातीय उप योजना के क्षेत्रों का संबंध है प्रशासनिक ढांचे में कोई एकरूपता नहीं है। कुछ राज्यों में एकीकृत जनजातीय परियोजना जिला ग्रामीण विकास एजेंसी का एक अधीनस्थ संगठन है। कुछ राज्यों में अलग से कोई एकीकृत जनजातीय विकास परियोजना की प्रशासनिक व्यवस्था स्थापित नहीं की गई है। संघ सरकार अर्थात गृह मंत्रालय अब कल्याण मंत्रालय ने वांछित परिणाम की प्राप्ति हेतु जनजातीय उप योजना कार्यक्रम के निष्पादन के लिए परिवर्तनीय अभिगम को अपनाया है।

कोल महिलाएँ एवं योजनाएँ

आदिवासी कोल महिलाओं से उनके क्षेत्र में संचालित विभिन्न प्रकार की योजनाओं एवं संवैधानिक व्यवस्थाओं की संदर्भ में जो तथ्य प्राप्त हुये हैं उससे निम्नांकित निष्कर्ष परिलक्षित हुये हैं ।

तालिका संख्या 6.6

कोल आदिवासी महिलाओं की बैंक सम्बन्धी ज्ञान की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	बैकों के सम्बन्ध में ज्ञान			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	100	49	49.0	51	51.0
2	टिकरिया	100	53	53.0	47	47.0
3	मानिकपुर	100	65	65.0	35	35.0
4	बरगढ़ बाजार	100	64	64.0	36	36.0
	योग -	**400**	**231**	**57.7**	**169**	**42.3**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

कोल आदिवासी महिलाएं जिनकी कोलों की आर्थिक संरचना में महत्वपूर्ण भूमिका होती है, के बैंको सम्बन्धी ज्ञान की स्थिति को तालिका संख्या 6.6 में दर्शाया गया है। चयनित अध्ययन क्षेत्र की 57.7 प्रतिशत महिलाओं को बैको के सम्बन्ध में ज्ञान है। 42.3 प्रतिशत कोल महिलाओं को बैंक क्या होती है, का ज्ञान नहीं है। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि इटवा डुडैला क्षेत्र की 51.0 प्रतिशत महिलाओं को बैंको का ज्ञान नहीं है। यह प्रतिशत सर्वाधिक है । जबकि मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार की जिन कोल महिलाओं को बैंक आदि का ज्ञान है उनका प्रतिशत क्रमशः 35.0 एवं 36.0 प्रतिशत है। ग्रामीण क्षेत्र की तुलना में नगरीय क्षेत्र की महिलाओं को बैंक क्या होती है का ज्ञान तुलनात्मक रूप में अधिक है।

तालिका संख्या 6.7

कोल आदिवासी महिलाओं के बैंक जाने की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	बैक जाने की स्थिति			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	49	05	10.2	44	89.8
2	टिकरिया	53	06	11.3	47	88.7
3	मानिकपुर	65	16	24.6	49	75.4
4	बरगढ़ बाजार	64	18	28.1	46	71.9
	योग -	**231**	**45**	**19.4**	**186**	**80.6**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

चयनित अध्ययन क्षेत्र की जिन कोल आदिवासी महिलाओं को बैंक के सम्बन्ध में ज्ञान है। उनके बैंक जाने की स्थिति को जानने का प्रयास शोधार्थी द्वारा किया गया जिसे तालिका संख्या 6.7 में दर्शाया गया है। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि क्षेत्र की 19.4 प्रतिशत महिलाएं ही यदा-कदा बैंक जाती है जबकि 80.6 प्रतिशत कोल महिलाएं कभी बैंक नहीं गयी हैं। ग्रामीण क्षेत्र के इटवा डुडैला तथा टिकरिया की आदिवासी कोल महिलाओं के बैंक जाने का प्रतिशत क्रमशः 10.2 तथा 11.3 है जबकि मानिकपुर तथा बरगढ़ बाजार की कोल महिलाओं का प्रतिशत, जो बैंक जाती हैं या गयी हैं क्रमशः 24.6 तथा 28.1 है।

शोधार्थी द्वारा कोल महिलाओं के बैंक न जाने की स्थिति /कारणों को जानने का प्रयास किया गया । अध्ययन से स्पष्ट हुआ कि चूंकि परिवारों की आय इतनी नहीं होती है कि वे अपनी बचत के लिए बैंको आदि का सहारा लें वे अपनी अल्प आय से किसी प्रकार से अपने परिवारों का भरण-पोषण करती हैं।

तालिका संख्या 6.8

बैकों से मिलने वाली सुविधाओं का ज्ञान

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	बैकों से मिलने वाली सुविधाओं का ज्ञान			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	49	05	10.2	44	89.8
2	टिकरिया	53	06	11.3	47	88.7
3	मानिकपुर	65	16	24.6	49	75.4
4	बरगढ़ बाजार	64	18	28.1	46	71.9
	योग -	**231**	**45**	**19.4**	**186**	**80.6**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

कोल आदिवासी महिलाओं से यह जानने का प्रयास किया गया है कि उन्हें बैंको से मिलने वाली सुविधाओं का ज्ञान है या नहीं। जिसका विवरण तालिका संख्या 6.8 में दर्शाया गया है। क्षेत्र की 19.4 प्रतिशत महिलाओं को बैंको से मिलने वाली सुविधाओं का ज्ञान है जबकि 80.6 प्रतिशत कोल महिलाएं बैंको से मिलने वाली सुविधाओं से अनभिज्ञ है। अध्ययन क्षेत्र इटवा डुडैला तथा टिकरिया की तुलना में मानिकपुर तथा बरगढ़ बाजार की कोल महिलाओं को तुलनात्मक रूप से बैंको से मिलने वाली सुविधाओं का ज्ञान अधिक है। इस तथ्य के पीछे सम्भवतः ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्र की जागरूकता की भिन्नता का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है।

तालिका संख्या 6.9

कोल आदिवासी महिलाओं को बैंको से प्राप्त होने वाली सुविधाओं की जानकारी की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	बैकों से कौन-2 सी सुविधाएं मिलती हैं		
			क	ख	ग
			संख्या	संख्या	संख्या
1	इटवा डुडैला	05	5	3	5
2	टिकरिया	06	6	4	6
3	मानिकपुर	16	16	13	16
4	बरगढ़ बाजार	18	18	14	18

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

क – जमा करना/ निकालना

ख – व्यवसाय के लिए ऋण

ग – पैसा सुरक्षित रहता है

तालिका संख्या 6.9 में आदिवासी कोल महिलाओं को बैंकों से प्राप्त होने वाली सुविधाओं की जानकारी होने की स्थिति का उल्लेख किया गया है। चयनित अध्ययन क्षेत्र की कुल 45 कोल महिलाएं ऐसी हैं जो यदा-कदा बैंक आती जाती हैं। इन महिलाओं को ही बैकों से प्राप्त होने वाली सुविधाओं का ज्ञान है। शोधार्थी द्वारा साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से पूंछे गये प्रश्नों के उत्तर में मात्र इन्हीं 45 कोल महिलाओं से बैंको से प्राप्त होने वाली सुविधाओं का सकारात्मक उत्तर दिया। इन महिलाओं में ग्रामीण एवं नगरीय अधिवासों की स्थिति का उनकी जागरूकता पर पड़ने वाला प्रभाव स्पष्टतया परिलक्षित हुआ।

तालिका संख्या 6.10

कोल आदिवासी महिलाओं की बैंक से ऋण प्राप्त करने की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	बैंक से ऋण प्राप्त करने की स्थिति			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	100	0.0	0.0	100	100.0
2	टिकरिया	100	01	1.0	99	99.0
3	मानिकपुर	100	03	3.0	97	97.0
4	बरगढ़ बाजार	100	02	2.00	98	98.0
	योग -	**400**	**06**	**1.5**	**394**	**98.5**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

जिन कोल महिलाओं को बैंको से प्राप्त होने वाली सुविधाओं का ज्ञान है तथा वे बैंक यदा-कदा आती जाती रहती हैं उनके द्वारा बैंको से ऋण प्राप्त करने की स्थिति को तालिका संख्या 6.10 में दर्शाया गया है। अध्ययन क्षेत्र की मात्र 1.5 प्रतिशत महिलाओं ने बैंक से ऋण की सुविधा प्राप्त की है जबकि 98.5 प्रतिशत महिलाएं ऐसी हैं जिन्होंने बैंको से प्राप्त होने वाली ऋण सुविधा को अपने किसी भी उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्राप्त नहीं किया। इटवा डुडैला की किसी भी कोल आदिवासी महिला द्वारा बैंक से ऋण की सुविधा प्राप्त नहीं की गयी । इनका प्रतिशत शून्य है । टिकरिया, मानिकपुर तथा बरगढ़ बाजार की जिन कोल महिलाओं ने बैंको से ऋण प्राप्त किया है उनका प्रतिशत क्रमशः 1.0, 3.0,2.0 है। मानिकपुर की कोल महिलाओं का प्रतिशत 3.0 है जो क्षेत्र का सर्वाधिक प्रतिशत है।

वर्तमान में जहाँ एक ओर बैंकिग प्रणाली आधुनिकतम तकनीक से समृद्धता प्राप्त किये हुये हैं "ऑन लाइन ट्रेडिंग" की नवीनतम अवधारणा अपने विकास के उच्चतम बिन्दु को प्राप्त कर रही हैं वहीं दूसरी ओर पाठा क्षेत्र में अधिवासित आदिवासी समाज के वे लोग हैं जो अभाव ग्रस्त जीवन जीने को बाध्य हो रहे हैं। कोलों की आर्थिक संरचना की

धुरी कोल महिलाएं हाड़-तोड मेहनत के बावजूद अपनी आजीविका अर्जन के लिए संघर्षरत हैं। उन्हें बैंक सम्बन्धी ज्ञान है भी तो इस रूप में कि जिन दुकानों में वे अपने वनोत्पादों के विक्रय के लिये जाती हैं वे बैंक के पास हैं या फिर वे बैंक वाली सड़क से जाने पर मिलती है। क्षेत्र की जिन कोल आदिवासी महिलाओं को बैंक का ज्ञान है वे मात्र बैंक ही जानती हैं, बैंक का क्या नाम है इसका उन्हें ज्ञान नहीं है। बैंक में पैसा कैसे जमा या निकाला जाता है इसके ज्ञान की शून्यता की स्थिति उनमें व्याप्त है।

बेरोजगारी दूर करने के उद्देश्य से राज्य द्वारा बैंको के माध्यम से स्वरोजगार हेतु कम ब्याज दरों पर ऋण उपलब्ध कराने की सुविधा दी जा रही है किन्तु कोल आदिवासी महिलाओं के लिए यह मात्र दिवास्वप्न ही है क्योंकि बैंको से ऋण प्राप्त करने के लिए जिस प्रक्रिया को उन्हें पूरा करना होगा, वह उनकी सीमा से परे की स्थिति सा है, उनके पास उनकी अपनी कोई हैसियत नहीं है । यदि कुछ कोल हैं जो प्रक्रिया को पूरा कर सकते हैं तो उनके नाम पर बैंको से ऋण तो प्राप्त कर लिया जाता है किन्तु उसका लाभ उन्हें प्राप्त नहीं होता है। क्षेत्र के प्रभावी दादू इसके लिए प्रयास करते हैं और ऋण से प्राप्त होने वाले धन का स्वयं उपयोग करते हैं जबकि ऋण को चुकाने का कार्य कोल ही करते हैं। यही कारण है कि जब ग्रामीण क्षेत्र में कोई जीप आती है तो कोल भागकर जंगलो में छुप जाते हैं उन्हें इस बात का डर होता है कि पता नहीं 'दादुओं' ने कब उनसे अंगूठे का निशान किसी कागज में लगवा लिया हो और उससे कर्ज प्राप्त कर लिया हो जिसका भुगतान न करने के कारण सरकारी जीप उन्हें गिरफ्तार करने आ रही हो।

तालिका संख्या 6.11

कोल आदिवासी महिलाओं को सरकारी योजनाओं की जानकारी की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	सरकारी सुविधाओं/ योजनाओं का ज्ञान			
			हाँ		नहीं	
			संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	100	07	7.0	93	93.0
2	टिकरिया	100	08	8.0	92	92.0
3	मानिकपुर	100	22	22.0	78	78.0
4	बरगढ़ बाजार	100	21	21.0	79	79.0
	योग -	**400**	**58**	**14.5**	**342**	**85.5**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

तालिका संख्या 6.11 में कोल आदिवासी महिलाओं को सरकारी योजनाओं की जानकारी की स्थिति क्या है, को दर्शाया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 85.5 (342) प्रतिशत महिलाओं को सरकार द्वारा चलायी जा रही जन कल्याणकारी योजनाओं का ज्ञान बिल्कुल नहीं नहीं है। क्षेत्र की मात्र 14.5 प्रतिशत महिलाएं ऐसी हैं जिन्हें सरकार द्वारा संचालित की जा रही योजनाओं का ज्ञान है, इनमें ग्रामीण एवं नगरीय अधिवासों का प्रभाव परिलक्षित हो रहा है। क्षेत्र के इटवा डुडैला तथा टिकरिया में जिन कोल महिलाओं का सरकारी योजनाओं का ज्ञान है उनका प्रतिशत क्रमशः 7.0 एवं 8.0 है, जबकि मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार में यह प्रतिशत 22.0 एवं 21.0 है।

तालिका संख्या 6.12

कोलान क्षेत्रों में विकास कार्यक्रमों में जानकारी देने की स्थिति

क्र.	चयनित ग्राम	कुल उत्तरदात्री	कर्मचारियों द्वारा विकास कार्यक्रमों की जानकारी					
			हाँ		नहीं		कभी-2	
			संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
1	इटवा डुडैला	100	07	7.0	83	83.0	10	10.0
2	टिकरिया	100	11	11.0	76	76.0	13	13.0
3	मानिकपुर	100	21	21.0	65	65.0	14	14.0
4	बरगढ़ बाजार	100	20	20.0	60	60.0	20	20.0
	योग -	**400**	**59**	**14.7**	**284**	**71.0**	**57**	**14.3**

स्रोत - क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर

तालिका संख्या 6.12 में कोलान क्षेत्रों में विकास कार्यक्रमों के प्रचार-प्रसार की स्थिति को दर्शाया गया है। अध्ययन क्षेत्र की 71.0 (284) प्रतिशत महिलाओं ने स्पष्ट किया कि उनके क्षेत्र में विकास कार्यक्रमों की जानकारी देने के लिए विकास खण्ड कार्यालय अथवा किसी अन्य विभाग के कोई कर्मचारी कभी भी नहीं आते हैं। यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। 14.7 (59) प्रतिशत महिलाएं स्वीकारती हैं कि उनके क्षेत्र में विकास कार्यक्रमों की जानकारी दी जाती है, जबकि 14.3 प्रतिशत महिलाओं का मानना है कि कभी-कभी उनके क्षेत्र में विकास कार्यक्रमों की जानकारी देने के लिए सरकारी कर्मचारी आते हैं। क्षेत्र के इटवा डुडैला की 83.0 (83) प्रतिशत महिलाओं ने बताया कि विकास कार्यक्रमों की जानकारी उन्हें नहीं दी जाती हैं यह प्रतिशत सर्वाधिक है जबकि मानिकपुर की 21.0 (21) प्रतिशत महिलाओं ने माना कि उनके क्षेत्र में विकास कार्यक्रमों की जानकारी दी जाती है। जिन कोलान क्षेत्रों में कभी-कभी सरकारी कार्मिक योजनाओं के प्रचार-प्रसार के लिए अध्ययन क्षेत्र में जाते हैं ऐसा मानने वाली महिलाओं का प्रतिशत 20.0 सर्वाधिक है, यह प्रतिशत बरगढ़

बाजार का है। तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सरकारी कर्मचारियों द्वारा कोलान क्षेत्रों में शासकीय योजनाओं एवं कार्यक्रमों के प्रचार-प्रसार में कोई विशेष रूचि नहीं होती है।

जागरूकता उत्पन्न करने तथा शासकीय कार्यक्रमों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए वर्तमान में व्यापक स्तर पर कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं । जहाँ तक महिलाओं, बच्चों तथा वृद्धों के कल्याण हेतु विभिन्न प्रकार की योजनाएं संचालित की जा रही हैं और इनका लाभ उन्हीं को प्राप्त हो रहा है जिन्हें इन कार्यक्रमों की जानकारी होती है या फिर सामाजिक कार्यकर्ताओं, गैर सरकारी संगठनों द्वारा वास्तविक रूप में कार्य किए जाते हैं। अध्ययन क्षेत्र की आदिवासी कोल महिलाओं को रोजगारोन्मुख योजनाओं के कल्याणार्थ संचालित की जा रही सरकारी योजनाओं का किंचित मात्र ही ज्ञान है । ऐसी महिलाओं का प्रतिशत बहुत कम है। रोजगार गारन्टी योजना, प्रधानमंत्री स्वरोजगार योजना, स्वयं सहायता समूहों का गठन, बी.पी.एल. कार्ड जैसी योजनाओं का ज्ञान उन्हें बिल्कुल ही नहीं है। विधवा अथवा बृद्धा पेंशन का ही ज्ञान उन्हें हैं । इन योजनाओं का लाभ भी उन्हें प्राप्त नहीं हो पा रहा है।

कोलान क्षेत्रों में विकास कार्यक्रमों की जानकारी देने हेतु सम्बन्धित कर्मचारियों एंव अधिकारियों का जाना नहीं होता, यदा-कदा ही वे इन क्षेत्रों में जाते हैं वह भी लोगों के बीच न जाकर क्षेत्र के गैर आदिवासी लोगों के मध्य, जो क्षेत्र में 'दादू' के सम्बोधन से सम्बोधित होते हैं ही जाकर लौट जाते हैं। इन्हीं दादुओं के अधीन काम करने वाली कोल महिलाओं को काम करने के दौरान यह जानकारी हो जाती है कि कोई कर्मचारी आते हैं। पेंशन जैसे शब्दों को समीपस्थ बाजारों में आने-जाने के दौरान ही जान पाती हैं।

रोजगारोन्मुख योजनाओं की अज्ञानता के पीछे उनका शैक्षणिक पिछड़ापन परिलक्षित होता है। शोधार्थी ने अध्ययन क्षेत्र में भ्रमण के दौरान पाया कि कोलान क्षेत्रों में किसी प्रकार की योजनाओं के प्रचार-प्रसार सम्बन्धी पोस्टर, बैनर, वाल पेंन्टिंग जैसी प्रचार सामग्री नहीं दिखाई दी ।

अध्याय-7

7. निष्कर्ष

7.1 परिणाम

7.2 सुझाव

7. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्याय में शोध कार्य से प्राप्त होने वाले परिणामों का उल्लेख किया गया है।

आदिवासियों समाज के सदस्य के रूप में आदिवासियों का इतिहास छोटे-छोटे कबीलों से प्रारम्भ होता है। इन लघु समाजों को प्रकृति के विभिन्न तत्वों एवं वन में विचरण करने वाले अन्य प्राणियों से मात्र अस्तित्व के लिए कठिन संघर्ष के एक अत्यन्त लम्बे दौर से गुरजना पड़ा । महाद्वीपों के दुर्गम क्षेत्रों में आज भी ऐसे अनेक आदिवासी समूह हैं, जो हजारों वर्षो से विश्व की आधुनिक सभ्यता से दूर अपनी सामाजिक एवं सांस्कृतिक धरोहर की पहचान बनाए हुए हैं।

ये समूह बीहड़ वनों, मरूस्थलों, ऊँचे पर्वतों और अनुर्वर पठारों के उन अन्चलों में निवास करते हैं, जो आधुनिक समाज के लोगों के अर्थ में अनुपयोगी है। इस मानव-समूहों का अपना अलिखित इतिहास रहा है, जिसका केवल अन्तिम पृष्ठ ही शेष बचा है, और उसमें यह लिखा है कि न जाने किस समय यह समूह छोटे-छोटे ऐसे कबीलों में बट गया, जिनमें एक दूसरे की पहचान और रिश्तो की डोरी टूट चुकी है या उलझ चुकी है। हिन्दी में ऐसे मानव समूहों के लिए 'आदिवासी', आदिमवासी' , 'कबीली आबादी' और 'जनजाति' जैसे सम्बोधन हैं। ये सभी शब्द अंग्रेजी भाषा के 'नेटिव', 'एबोरिजनल' और ट्राइब शब्दों के पर्याय हैं।

आदिवासियों को उनके अधिपत्य में रही कृषित भूमि एवं वनीय क्षेत्र से बेदखल करने के बाद इनकी आर्थिक विपन्नता में वृद्धि हुई। महाजनों एवं साहूकारों के ऋणों से ये दबते चले गये। ऋण का सही समय पर भुगतान न कर पाने की स्थिति में ब्याज बढ़ता गया। अंग्रेजी हुकूमत द्वारा जो इन बनवासियों के विकास के लिए नियम एवं कानून बनाएं गये थे, उन कानूनों ने साहूकारों एवं महाजनों में पोषण की प्रवृत्ति को अधिक जाग्रत

किया । अभिजात्य वर्ग द्वारा नियमों एवं कानूनों की अपने ढंग से व्याख्या परिष्कृत की गई। फलतः कमजोर कृषकों एवं आदिवासियों का शोषण प्रारम्भ हुआ।

पाठा क्षेत्र के कोल आदिवासी क्षेत्रों एवं समुदायों की विकास प्रक्रिया के प्रवर्तन से नवार्जित सम्पदा में स्थानीय आदिवासी समाज की साझेदारी के अभाव, कार्यक्रमों की शिथिलता, ऋणग्रस्तता, अशिक्षा एवं सांस्कृतिक लगाव के कारण सन्तुलित एवं सुदृढ़ विकास अभी भी संभव नहीं हो पा रहा है।

कोल आदिवासी समाज में निर्धनता है जिससे विकास नहीं के बराबर हुआ है क्योंकि पूंजी के अभाव में लोग नवीन आविष्कारों को प्रोत्साहित नहीं कर पायें। आर्थिक उत्पादन की नयी शक्तियों के प्रयोग के लिए धन की आवश्यकता होती है। अविकसित समाज, विकसित समाज से सम्पर्क नहीं कर पाये हैं क्योकि उनके पास आर्थिक संसाधनों की कमी होती है। परिणामतः आर्थिक दृष्टिकोण से पिछड़ा कोल आदिवासी समाज, विकास के मार्ग पर आगे नहीं बढ़ पाया है। निष्कर्षतः हम पाते हैं कि कोलों की आर्थिक दशा का हेय होना भी सामाजिक विकास में बाधक है।

वैसे तो आदिवासी समुदाय की ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक एवं वैचारिक विशेषता इस प्रकार की रही हैं, कि आदिवासियों के अस्तित्व एवं विकास के लिए हमारे संविधान निर्माता भी सजग रहे हैं। फलतः इन समुदायों के लोगों और उनके क्षेत्रों के विकास के लिए काफी लचीला प्रशासन प्रदान करने की व्यवस्था सिद्धान्ततः की गयी है। वैधानिक एवं प्रशासनिक प्रक्रियाओं को परिस्थितिजन्य संशोधित किया गया है। संविधान में मौलिक अधिकारों तथा समानता देने वाली अनेक धारांए हैं। इनमें खण्ड 4 की धारा 46 में राज्य सरकारों को समाज के कमजोर वर्गो के शैक्षणिक एवं आर्थिक हितों पर विशेष ध्यान देने का निर्देश दिया गया है। विशेषकर अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों पर ध्यान देने को कहा गया है जिससे उन्हें सामाजिक अन्याय एवं विविध प्रकार के शोषणों से बचाया जा सके। आदिवासी बहुल राज्यों में अलग से आदिम जनजाति कल्याण मंत्री की नियुक्ति की

व्यवस्था की गयी है। साथ ही आदिवासी कल्याण योजनाओं को चलाने के लिए विशेष केन्द्रीय अनुदान का भी प्रावधान किया गया है।

अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लिए प्रयत्न प्रथम योजना काल से ही किया जा रहा है। आरम्भ में अन्य क्षेत्रों की भांति आदिवासी क्षेत्रों में भी कार्यक्रमों का शुभारंभ किया गया था। कालान्तर में इन कार्यक्रमों एवं परियोजनाओं की उपलब्धियों का मूल्यांकन किया गया, तथा विकास को नयी दिशा एवं गति देने के लिए एक नयी रणनीति तैयार की गयी जो जनजातीय उपयोजना की संकल्पना पर आधारित है।

नव सृजित जनपद चित्रकूट जिसमें पाठा क्षेत्र अवस्थित है , का क्षेत्रफल 2918.27 वर्ग किलोमीटर है। उत्तर प्रदेश की औसत जनसंख्या का घनत्व (2001 के अनुसार) 690 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। तुलनात्मक दृश्टि से जनपद चित्रकूट का जनसंख्या घनत्व (2001 के अनुसार) 242 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। इस प्रकार जनसंख्या घनत्व राज्य की तुलना में काफी कम है। यहाँ औसतन प्रति व्यक्ति 1.10 एकड़ भूमि उपलब्ध है , जबकि प्रदेश का औसतन 0.59 एकड़ है। भूमि के असमान वितरण के कारण यहाँ के सबसे निर्धन लोग आदिवासी कोल हैं ।

कोल ग्रामों के 418 कोल महिलाओं का साक्षात्कार करने के पश्चात् अनुसूचियों को शोधार्थी द्वारा भरा गया । विश्लेषण के दौरान 18 उत्तरदात्रियों की अनुसूचियाँ पूर्ण नहीं थी। अन्ततः इन 18 अनूसूचियों को पुनः पूर्ण करने का प्रयास असफल रहा । इस प्रकार चुने गये कोल ग्रामों या बस्तियों में बसे 400 कोल महिलाओं का अध्ययन किया गया है। साक्षात्कार के लिए परिवार की प्रमुख महिला को चुना गया है। इसके साथ ही परिवार की अन्य युवतियों एंव कमाने वाले व्यक्ति को उत्तर देने के लिए अधिकृत किया गया है। जो पारिवारिक आर्थिक संरचना के आधार होने के साथ-साथ सामाजिक , सांस्कृतिक आर्थिक एवं राजनीतिक निर्णयों में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं ।

क्षेत्र की 30-40 वर्ष आयु समूह की 120 महिलाओं की संख्या सर्वाधिक है इसका प्रतिशतांक 30.00 है। 70-80 वर्ष आयु समूह की महिलाओं का प्रतिशतांक शून्य है, जबकि 60-70 वर्ष आयु समूह की महिलाओं का प्रतिशतांक 2.5 है। यह प्रतिशतांक सबसे कम है। आयु समूह 20-30, 30-40 तथा 40-50 वर्ष आयु समूह की महिलाओं का प्रतिशत अधिक है। इस आयु समूह की महिलाओं की आर्थिक क्रियाकलापों में संलग्नता अधिक है।

क्षेत्र की 73.0 प्रतिशत महिलाएं अशिक्षित है। 11.0 प्रतिशत महिलाएं पूर्व माध्यमिक तथा 6.25 प्रतिशत महिलाएं हाईस्कूल तक की शिक्षा प्राप्त है। इण्टरमीडिएट तथा इससे उच्च स्तर की शिक्षा प्राप्त करने वाली महिलाओं का प्रतिशतांक शून्य है। हाईस्कूल स्तर तक की शिक्षा प्राप्त करने वाली महिलाएं मानिकपुर (20.0) एवं बरगढ़ बाजार (5.0) की है। मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार नगरीय क्षेत्र हैं, जबकि इटवा डुडैला तथा टिकरिया जंगल में आबाद कोल बाहुल्य ग्राम हैं। ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्राधारित संरचना का प्रभाव शैक्षणिक स्थिति पर पड़ता है। नगरीय क्षेत्र में अधिवासित कोल महिलाओं में शैक्षणिक जागरूकता ग्रामीण क्षेत्र से अधिक है।

क्षेत्र की 72.5 महिलाएं विवाहित हैं जबकि 14.0 प्रतिशत महिलाएं अविवाहित हैं। इनकी संख्या 56 है। 7.5 प्रतिशत महिलाएं विधवा हैं तथा 6.0 प्रतिशत महिलाएं तलाकशुदा अथवा परित्यक्ता हैं।

मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार की उत्तरदात्रियों में से तलाकशुदा अथवा परित्यक्ताओं का प्रतिशत क्रमशः 9.0 और 11.0 है जो तुलनात्मक रूप से इटवा डुडैला तथा टिकरिया ग्रामों की महिलाओं से अधिक है। कमोवेश यही स्थिति विधवा महिलाओं की है।

आदिवासी कोल महिलाओं में भी नशा करने की प्रवृत्ति पायी जाती है क्योंकि कोलों की आर्थिक संरचना में महिलाएं धुरी का कार्य करती हैं और वे प्रायः आर्थिक क्रियाओं के लिए अपने आवासों से बाहर जंगलात में कार्य करती हैं तथा विक्रय हेतु वनोत्पादों के समीपस्थ बाजारों जैसे कर्वी, इलाहाबाद, बाँदा, अतर्रा जैसे नगरीय क्षेत्रों में

जाती रहती है। परिणामतः उनमें भी नशा करने की प्रवृत्ति पायी जाती है। अध्ययन क्षेत्र की 47.5 कोल महिलाओं ने स्वीकार किया है कि वे किसी न किसी प्रकार के नशीले पदार्थो का सेवन करती हैं और वे उनकी आदी हैं। 52.5 प्रतिशत महिलाओं ने बताया कि वे किसी प्रकार के नशीले पदार्थो का सेवन नहीं करती हैं। इनमें वे कोल महिलाएं सम्मिलित हें जो अधिक आयु की है या फिर उन्हें नशे के साधन उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में नगरीय क्षेत्रों - मानिकपुर एंव बरगढ़ बाजार की कोल महिलाओं में नशे की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है।

अध्ययन क्षेत्र के 41.0 उत्तरदात्रियों ने स्पष्ट किया कि उनके पास कृषि से सम्बन्धी भूमि उपलब्ध है। 59.0 प्रतिशत कोलों के पास कृषि योग्य भूमि नहीं है। अध्ययन क्षेत्र के टिकरिया के कोलों के पास भू-स्वामित्व का प्रतिशतांक सर्वाधिक 52.0 है। मानिकपुर के कोल जिनके पास भू-स्वामित्व नहीं है उनका प्रतिशतांक 31.0 है। इस क्षेत्र के 69.0 प्रतिशत कोल परिवारों के पास कृषि योग्य भूमि नहीं है। इटवा डुडैला के 45.0 प्रतिशत कोल परिवारों के पास कृषि योग्य भूमि है।

क्षेत्र के 68.4 प्रतिशत कोलों को भू-स्वामित्व की प्राप्ति अपने पूर्वजों से हुई है। यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। 15.8 प्रतिशत कोलों ने स्वयं तथा इतने ही प्रतिशत (15.8) कोलों को सरकार द्वारा पट्टे में भूमि प्राप्त हुई है। ग्रामीण क्षेत्र में अधिवासित इटवा डुडैला के 84.4 प्रतिशत कोलों को अपने पूर्वजों से भूमि विरासत में प्राप्त हुई है। मानिकपुर जो नगरीय भू-भाग है, के अधिवासित कोलों 48.5 प्रतिशत कोलों को अपने पूर्वजों से कृषि योग्य भूमि प्राप्त हुई है। मानिकपुर के 22.5 प्रतिशत कोलों को सरकारी पट्टे प्राप्त हुए हैं । यह प्रतिशत सरकारी पट्टा प्राप्त करने वाले कोलों का सबसे अधिक है। बरगढ़ बाजार के 30.5 प्रतिशत कोलों ने स्वयं कृषि योग्य भूमि को क्रय किया है।

28.6 प्रतिशत कोल महिलाओं के पति किसी प्रकार का कार्य नहीं करते हैं। परिवार की आय में उनका किसी प्रकार का योगदान नहीं होता। ग्रामीण कोलान क्षेत्रों इटवा

डुडैला तथा टिकरिया के 36.9 तथा 37.02 प्रतिशत कोल पति किसी प्रकार का कार्य नहीं करते हैं। ग्रामीण कोलान क्षेत्रों की तुलना में नगरीय कोलान क्षेत्र के कोलों के किसी प्रकार के व्यवसाय से सम्बद्ध होने का प्रतिशतांक अधिक है क्योंकि नगरीय क्षेत्र के कोल पुरूषों को यदा-कदा कार्य उपलब्ध हो जाते हैं जो कोल मजदूरी तथा कृषि कार्यो से सम्बद्ध हैं वे बन्धुवा मजदूरों सा जीवन जीने को बाध्य हैं । स्वयं के व्यवसाय करने वाले कोलों का प्रतिशत कम है, जो कोल नौकरी आदि से सम्बद्ध है वे स्थायी कार्य नहीं है वह कार्य भी मजदूरों जैसा ही है।

ग्रामीण कोलान क्षेत्रों की तुलना में नगरीय कोलान क्षेत्रों के कोल पुरूषों के आय अर्जित करने का प्रतिशतांक अधिक है। इन क्षेत्रों के कोल पुरूषों का कार्य की उपलब्धता कमोवेश अधिक होती है।

जो कोल महिलाएं व्यावसायिक रूप से किसी न किसी प्रकार का कार्य करते हैं उनमें उनके कार्य की प्रकृति मजदूरी, वनोपज सम्बन्धी कार्य, दुकानदारी तथा नौकरी आदि होती है। अध्ययन क्षेत्र की जो कोल महिलाएं व्यावसायिक रूप में आर्थिक संरचना (कोलों की) की एक इकाई के रूप में कार्य करती हैं उनकी संख्या 87.2 है। इनमें से 86.5 प्रतिशत महिलाएं वनोपज सम्बन्धी कार्यो से सम्बद्ध हैं यह प्रतिशतांक सर्वाधिक है। 11.3 प्रतिशत महिलाएं ठेकेदारों, दादुओं अथवा साहूकारों के अधीन कार्य करती हैं। 2.2 प्रतिशत महिलाएं दुकानदारी करती हैं। नौकरी करने वाली कोल आदिवासी महिलाओं का प्रतिशतांक शून्य है क्योंकि कोल आदिवासी महिलाओं तथा पुरूषों में शिक्षा का अभाव है। यदि वे किंचित रूप में थोड़ा बहुत शिक्षित है भी तो उनकी शिक्षा इस स्तर की नहीं है कि उन्हें शासकीय या अशासकीय क्षेत्र में नौकरी प्राप्त हो सकें, जो कोल नौकरी कर भी रहे हैं वे किसी बड़े संस्थान में कार्य नहीं कर रहे हैं मात्र दुकानों, फड़ों आदि में ही कार्य कर रहे हैं।

मानिकपुर तथा बरगढ़ बाजार में ठेकेदारों, साहूकारों एवं दादुओं के अधीन कार्य करने वाली कोल महिलाओं का प्रतिशत क्रमशः 16.9 तथा 17.9 है जबकि इटवा डुडैला तथा टिकरिया क्षेत्र में यह प्रतिशत 4.8 तथा 5.6 है।

जंगली भू-भाग में आबाद कोलान क्षेत्रों में वनोपज सम्बन्धी कार्यो को करने वाली महिलाओं का प्रतिशत नगरीय क्षेत्र में रहने वाली महिलाओं की तुलना में अधिक है। वनोपज सम्बन्धी कार्यो में मुख्यतः लकड़ी काटना, तेन्दू पत्ता तोड़ने, पत्थर तोड़ने आंवला बीनने का कार्य प्रमुखतः से किया जाता है।

जो कोल महिलाएं दुकानदारी से सम्बद्ध हैं वे मुख्यतः मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार क्षेत्रों की हैं और वे अपने कोलान क्षेत्रों में ही गुटका, कम्पट, पुंगे आदि की छोटी-मोटी दुकानदारी करती हैं ये वे महिलाएं हैं जो या तो शारीरिक रूप से अक्षम है तथा श्रम साध्य कार्यो को करने में अक्षम हैं या फिर उनके परिवारों के कोल पुरूषों द्वारा नियमित रूप से कार्य किया जाता है।

अध्ययन क्षेत्र की 47.5 प्रतिशत महिलाएं 1000-1500 रूपये तक की आय प्रतिमाह अर्जित करती हैं । 250-500 रूपये प्रतिमाह अर्जित करने वाली महिलाओं का प्रतिशतांक 18.6 है तथा 500 से 1000 रूपये तक आप अर्जित करने वाली महिलाओं का प्रतिशत 33.9 है। 1500 रूपये से अधिक आय अर्जित करने वाली महिलाओं का प्रतिशत शून्य है। जो महिलाएं 1000-1500 रूपये प्रतिमाह आय अर्जित करती हैं वे मुख्यतः जंगलात से लकड़ी काटकर समीपस्थ बाजारों में ले जाकर बेंचती है और इस कार्य को वे नियमित रूप से करती हैं, जो कोल महिलाएं मजदूरी या दुकानदारी जैसे कार्यो से जुड़ी हुई हैं उनकी आय कमोवेश कम होती है क्योंकि ऐसी महिलाओं को कार्य नियमित रूप से उपलब्ध नहीं हो पाता है और दुकानदारी से कोई विशेष लाभ की प्राप्ति नहीं हो पाती है।

क्षेत्र की 67.0 प्रतिशत महिलाएं अर्जित की जाने वाली आय को घरेलू खर्चो अर्थात अपने परिवार की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति में व्यय करती हैं। 28.0 प्रतिशत

महिलाएं अपनी निजी आवश्यकताओं की पूर्ति में तथा 5.0 प्रतिशत महिलाएं बच्चों की पढ़ाई आदि में अपनी आय को खर्च करती हैं। ग्रामीण क्षेत्र के इटवा डुडैला तथा टिकरिया की जो महिलाएं अपनी आय को घरेलू खर्चो में व्यय करती हैं उनका प्रतिशत 70.3 तथा 68.5 है। बच्चों की पढ़ाई पर सर्वाधिक व्यय मानिकपुर की कोल महिलाएं करती हैं । इनका प्रतिशत 11.6 है इटवा डुडैला की शून्य प्रतिशत महिलाएं बच्चों की पढ़ाई पर अपनी आय को खर्च करती हैं।

अध्ययन क्षेत्र की 83.7 प्रतिशत महिलाएं जिनका ठेकेदारों से किसी न किसी का सम्पर्क होता है सन्तुष्ट नहीं है। 16.3 प्रतिशत महिलाएं ठेकेदारों के व्यवहार से सन्तुष्ट हैं। मानिकपुर एवं बरगढ़ बाजार की 89.6 तथा 88.7 प्रतिशत महिलाएं ठेकेदारों के व्यवहारों से सन्तुष्ट नहीं रहती हैं। कोलान क्षेत्र चाहे ग्रामीण हो या नगरीय सभी की कोल महिलाएं ठेकेदारों के व्यवहार से सन्तुष्ट नहीं रहती हैं। अध्ययन क्षेत्र के टिकरिया 52.9, मानिकपुर 53.9 तथा बरगढ़ बाजार 56.9 की महिलाएं ठेकेदारों द्वारा शारीरिक एवं मानसिक शोषण के कारण सन्तुष्ट नहीं है।

ठेकेदारों द्वारा कोल आदिवासी महिलाओं का आर्थिक शोषण इटवा डुडैला की कोल महिलाओं का सर्वाधिक 59.7 प्रतिशत है। जंगलात में अवस्थित होने के कारण जागरूकता के अभाव तथा ठेकेदारों पर निर्भरता के कारण इन महिलाओं द्वारा विरोध करना उचित नहीं माना जाता है।

कोल आदिवासी महिलाओं को व्यावसायिक गतिविधियों के कारण प्रायः शोषण का शिकार होना पड़ता है । अध्ययन क्षेत्र की 92.8 प्रतिशत महिलाओं को किसी भी प्रकार के संवैधानिक प्राविधानों का ज्ञान नहीं है। मात्र 7.2 नियमों की जानकारी तो हैं किन्तु कभी वे इनसे लाभ प्राप्त करने की हिम्मत नहीं जुटा पाती । मानिकपुर तथा बरगढ़ बाजार क्षेत्र की 14.0 तथा 12.0 प्रतिशत महिलाओं को ही संवैधानिक व्यवस्थाओं का ज्ञान हैं किन्तु यह ज्ञान मात्र पुलिस में शिकायत करने तक ही सीमित है। महिला आयोग, अनुसूचित जाति,

जनजाति आयोग सम्बन्धी ज्ञान तो दूर की बात है । इसके पीछे शैक्षणिक पिछड़ापन तथा जागरूकता के अभाव के साथ अपनी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति में ही उन्हें इतना व्यस्त रहना पड़ता है कि संवैधानिक प्राविधानों को जानना दूर की बात है।

अध्ययन क्षेत्र की मात्र 1.5 प्रतिशत महिलाओं ने बैंक से ऋण की सुविधा प्राप्त की है जबकि 98.5 प्रतिशत महिलाएं ऐसी हैं जिन्होंने बैंको से प्राप्त होने वाली ऋण सुविधा को अपने किसी भी उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्राप्त नहीं किया। इटवा डुडैला की किसी भी कोल आदिवासी महिला द्वारा बैंक से ऋण की सुविधा प्राप्त नहीं की गयी । इनका प्रतिशत शून्य है । टिकरिया, मानिकपुर तथा बरगढ़ बाजार की जिन कोल महिलाओं ने बैंको से ऋण प्राप्त किया है उनका प्रतिशत क्रमशः 1.0, 3.0,2.0 है। मानिकपुर की कोल महिलाओं का प्रतिशत 3.0 है यह क्षेत्र का सर्वाधिक प्रतिशत है जिसने बैंक से ऋण प्राप्त किया है ।

कोलों की आर्थिक संरचना से सम्बन्धी अध्ययन क्षेत्र से प्राप्त तथ्यों के आधार पर उपकल्पनाओं का सत्यापन शोधार्थी द्वारा किया गया जिससे निम्नवत परिणाम प्राप्त हुये :-

7.1 परिणाम

1. पाठा क्षेत्र के आदिवासी कोलों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता, उनका योगदान तथा उनके श्रम साध्य कार्यों की कार्यावधि पुरूषों की तुलना में अधिक होती है।
2. कोलान क्षेत्रों में संचालित होने वाले मजदूरी जैसे कार्यो में पुरूषों की तुलना में कोल आदिवासी महिलाओं को कार्य की उपलब्धता अधिक होती है। वनोत्पादों को संकलित करने एवं ठेकेदारों के अधीन कार्य करने वाली कोल महिलाओं में युवा महिलाओं की सहभागिता अधिक परिलक्षित होती है।

3. आदिवासी कोल महिलाओं द्वारा जो आय अर्जित की जाती है उसमें अन्य कार्यो की तुलना में वन क्षेत्रों से लकड़ी कटान, आँवला बिनने, तेंदू पत्ता इकट्ठा करने से होने वाली आय अधिक होती है।

4. प्रायः कोल आदिवासी महिलाओं द्वारा वनोत्पादों को बेचने के पश्चात् तथा मजदूरी करने के पश्चात् उन्हें जो भुगतान प्राप्त होना चाहिए वह प्रायः पूर्ण भुगतान प्राप्त नहीं होता है जिससे उन्हें आर्थिक शोषण का शिकार होना पड़ता है।

5. कोलों के मध्य, उनके संवैधानिक अधिकारों तथा उनके विकास हेतु संचालित विभिन्न रोजगारोन्मुख योजनाओं का ज्ञान नगरीय क्षेत्र की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में कम होता है।

6. आदिवासी कोलों की आर्थिक संरचना की धुरी तथा उनकी आर्थिक क्रिया-कलापों में अहम सहभागिता रखने वाली कोल महिलाओं को वनोत्पादों को संकलित करने तथा ठेकेदारों के अधीन कार्य करने के दौरान विभिन्न प्रकार के आर्थिक, शारीरिक एवं मानसिक शोषण का शिकार होना पड़ता है।

7.2 सुझाव

पाठा क्षेत्र के आदिवासी कोलों के आर्थिक विकास के लिये शोधार्थी द्वारा निम्नलिखित सुझाव प्रस्तावित हैं :-

1. कोल आदिवासियों, जिन्हें उत्तर प्रदेश शासन द्वारा अनुसूचित जाति की श्रेणी में रखा गया है । वास्तव में कोल आदिवासी हैं उन्हें अनुसूचित जनजाति की श्रेणी में रखा जाना चाहिए जिससे उनका सामाजिक एवं आर्थिक विकास हो सकें।

2. पाठा क्षेत्र के आदिवासी कोलों के पुरूष एवं महिलाओं के लिये रोजगार के समुचित अवसर उपलब्ध कराये जाने चाहिए । यह अवसर अनियमित न होकर नियमित या पूर्णकालिक होने चाहिए।

3. कोल आदिवासी महिलाओं के साथ ही साथ पुरूष कोलों को मजदूरी जैसे कार्य उपलब्ध कराये जाने चाहिए साथ ही यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि महिलाओं के समान ही कोल पुरूषों को कार्य में लगाया जाता है अथवा नहीं।
4. प्रतिबन्धित वन क्षेत्रों से आदिवासी कोलों को वनोत्पाद संकलित करने के लिए नियमतः अनुमति प्रदान की जानी चाहिए, जिससे वन विभाग के कर्मचारियों द्वारा किया जाने वाला कोल आदिवासी महिलाओं के शोषण को रोका जा सकें।
5. आदिवासी कोलों द्वारा संकलित वनोत्पादों के विक्रय हेतु शासन द्वारा नियंत्रित क्रय केन्द्रो की स्थापना की जानी चाहिए जिससे उन्हें उनके श्रम का वास्तविक मूल्य प्राप्त हो सकें।
6. ठेकेदारों के अधीन कार्य करने वाली कोल महिलाओं की मजदूरी के भुगतान को सुनिश्चित किया जाना चाहिए जिससे उनको आर्थिक, शारीरिक एवं मानसिक शोषण से बचाया जा सकें।
7. आदिवासी क्षेत्रों में शैक्षणिक विकास हेतु विद्यालयों की स्थापना की जानी चाहिए तथा आदिवासी छात्र-छात्राओं की उपस्थिति की समीक्षा प्रभावी ढंग से की जानी चाहिए।
8. आदिवासियों को संवैधानिक ज्ञान एवं विकास हेतु संचालित की जाने वाली विभिन्न प्रकार की योजनाओं का ज्ञान कराने हेतु प्रभावी कदम उठाये जाने चाहिए।
9. पाठा क्षेत्र में आदिवासियों की समस्याओं के निस्तारण हेतु एक विशेष प्रकोष्ठ की स्थापना की जानी चाहिए, जिससे उन्हें अपनी समस्याओं का अविलम्ब निस्तारण प्राप्त हो सकें।

*****

सन्दर्भ-ग्रन्थ

ग्रन्थ

1	**Ahuja,Ram**	:	Political Elite and Modernijation; Bihar Politics, 1975
2	**Chaughari T.P.S.**	:	Resource, use and productivity on forms, 1969
3	**Crooke,W.**	:	The Tribes and caste of North-West tern provinces and Outh (Vol III) 1896
4	**Chauhan,Abha**	:	Tribal women and social change in India. A.C.Brothers,Etawah 1990
5	**Haddick Henery**	:	Panchayati Raj rural local Govt. in India. 1962
6	**Hotton, J.H.**	:	Caste in India 1946
7	**India 1986**	:	Rural Development Govt. of India Pub.
8	**J.S.Brara**	:	The Political Economy of Rural development in India, 1984
9	**Kothari Rajani,**	:	Politics in India, 1970
10	**Maheshwari,S.R.**	:	Rural development in India, Saye pub. New Delhi, 1985
11	**Marriot, M.**	:	Village India, 1955
12	**Nagendra S.P.**	:	Social change and development, 1984
13	**Omvedt Gail**	:	Capilist Agriculture and rural classess in India 1981
14	**Pandey K.C.**	:	The rural Elite in an Indian State 1976

15 **Bidyarthi, L.P.** : Aspects of tribal Labour force in Chhota Nagpur.

16 **Patel M.L.** : Planning strategy for tribal development inter India pub. New Delhi, 1983

17 **Talcott Parsons** : The social system 1951

18 **William and Bultrick** : Principles and problems of Economic development.

19 **Badganiyau, S.D.** : Tribal worker in colonial Industry. Delhi.

20 एल्विन, वेरियर : दि बैगा, जान मरे, लन्दन 1939

21 बाडर, पी.टी. : डिसेंट ऑफ डेवलपमेण्ट, विकास पब्लिसिंग हाउस नई दिल्ली, 1971

22 बिताइले आन्द्रे : ट्राइब कास्ट एण्ड रिलीजन इन इण्डिया, मैकमिलन इण्डिया लि. 1977

23 भट्ट एल.एस. : ए रीजनल प्लानिंग माडल इन दि कांटेक्स्ट ऑफ माइक्रो लेवल प्लानिंग, हैदराबाद, 1980

24 चौधरी बी.डी. : ट्राइबल डेवलपमेण्ट इन इण्डिया इंटर इण्डिया पब्लित्र नई दिल्ली 1982

25 देसाई ए.आर. : सोसियोलाजिकल प्राब्लम ऑफ इकोनोमिक डेवलपमेण्ट

26 दुबे एस.सी. : इण्डियाज चेंजिंग विलेजज, ह्यूमैन फैक्टर्स इन क्म्यूनिटी डेवलपमेण्ट, 1958

27 डन्डा, ए.के. : ट्राइबल इकानामी एण्ड देयर ट्रान्सफारमेशन, आई. सी.आर. नई दिल्ली, 1973

28 देवगांवकर एस.जी. : ट्राइबल डेवलमेण्ट प्लांस, कान्सेप्ट पब्लि. कं. नई दिल्ली

29 डिलीज राबर्ट : दि भील्स ऑफ वेस्टर्न इण्डिया, नेशनल पब्लि. हाउस, नई दिल्ली 1985

30 दुबे, एस.सी. : द कमार, यूनिवर्सल पब्लिशर्स लखनऊ, 1951

31 डब्लू कीथ वारनर, : स्ट्रक्चरल मेट्रिक्स ऑफ डेवलपमेण्ट 1971

32 गुन्नार मिडरल : एशियन ड्रामा, 1968

33 ग्रिफिथ्स, वाल्टर जी : दि कोल ट्राइब ऑफ सेन्ट्रल इण्डिया, पार्क स्ट्रीट, कलकत्ता 1940

34 हैमनडर्फ, सी.वान फ्यूरर : ट्राइब्स ऑफ इण्डिया, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1982

35 हसनैन, नदीम : जनजातीय भारत, जवाहर पब्लिसर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली, 1997

36 जोशी, पूरन चन्द्र : भारतीय ग्राम – सांस्थानिक परिवर्तन एवं आर्थिक विकास, 1966

37 जोशी, अवनीन्द्र कुमार : भोटान्तिक जन-जाति, प्रकाश बुक डिपो, बरेली, 1983

38 किम : टूवर्डस, सोसियोलाजिकल थ्योरी ऑफ डेवलपमेन्ट 1973

39 कैयर्न क्रास ए.के. : फैक्टर्स इन इकानामिक डेवलपमेण्ट

40 कॉफमैन, फेलिक्स : मैथोडोलॉजी ऑफ सोश्यल साइंसेज, 1944

41 लक्ष्मण,टी.के.,नारायण पी. : भारत में ग्रामीण विकास

42	मुखर्जी रवीन्द्र नाथ	:	भारतीय सामाजिक संस्थाएं, आगरा (1996) साहित्य भवन
43	मजूमदार डी.एन.	:	रेसेज एण्ड कलचर्स ऑफ इण्डिया
45	मजूमदार, डी.एन. एण्ड मदान, टी.एस.	:	इन इन्ट्रोडक्शन टू सोशियल एन्थ्रोपोलोजी, एशिया पब्लि. हाउस, बाम्बे, 1960
46	नायक, डा.ढाकोलाल माणा भाई	:	बारह भाई विझंवार, मध्य प्रदेश ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1972
47	पाल स्ट्रीटेन	:	दि फंटियर्स ऑफ डेवलपमेंट स्टडीज, न्यूयार्क 1972
48	राघवैया, व्ही.	:	ट्राइब्स ऑफ इण्डिया, भारतीय आदिम जाति सेवक संघ, 1972
49	राय,कंचन (सम्पादक)	:	इजुकेशन एण्ड हेल्थ प्राब्लम्स इन ट्राइबल डेवलपमेण्ट, कान्सेप्ट पब्लि.कं. नई दिल्ली 1989
50	श्रीनिवस एम.एन.	:	सोशियल चेंज इन मार्डन इण्डिया
51	सिंह, एम.डी.	:	वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूलतत्व, 1986
52	शर्मा, एस.के.	:	रिसोर्स यूटिलाइनेशन एण्ड डेवलपमेण्ट, नादर्न बुक सेण्टर, नई दिल्ली 1992
53	सिन्हा, डा.आर.के.	:	पाण्डो जनजाति, मध्य प्रदेश ग्रन्थ अकादमी भोपाल, 1983
54	त्रिपाठी, डा.सत्येन्द्र एवं द्विवेदी डा.कृष्णदत्त	:	विकास का समाजशास्त्र (सम्पादित) विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1988

55 तिवारी, डा.शिवकुमार एवं शर्मा, डा.श्रीकमल : मध्य प्रदेश की जनजातियाँ, समाज एवं व्यवस्था, 1997

56 तिवारी, डा. शिवकुमार : भारत की जनजातियाँ, नादर्न बुक सेण्टर, नई दिल्ली 1992

57 शर्मा, डा.ब्रहमदेव : आदिवासी विकास : एक सैद्धान्तिक विवेचन 1994

58 वौर, टी.पी. : इण्डिया पालिसी एण्ड डेवलपमेण्ट, लंदन, 1961

59 विद्यार्थी, एल.पी. : कल्चरल काउंटर्स ऑफ ट्राइबल्स (1965) बिहार

सोशिलय एन्थ्रो पोलाजिकल रिसर्चेज इन इण्डिया : सम प्रिलिमिनरी आब्जरवेशन (1966)

कल्चरल चेन्ज इन द ट्राइबस ऑफ माडर्न इण्डिया - जनरल ऑफ सोशल रिसर्च (1968)

रिसर्जेज इन सोशल साइन्सेज इन इण्डिया- सम प्रीलिमिनरी आब्जर्वेशन साशेल साइन्स इन कार्मेशनर (1966)

60 कोठारी, हस्तीमल : उद्योगों में जनजाति, शिल्पी प्रकाशन, जयपुर

61 सिंह, भूपेन्द्र : इण्डस्ट्रीलाइजेशन इन ट्राइबल एरियाज नई दिल्ली (1981)

62 नायक, टी.बी. : लेवर प्राब्लम ऑफ ट्राइबल गुजरात

63 खंगार, भागवत प्रसाद : कोल इतिहास की गौरव गाथा अ.भा.स.ले.सं. चित्रकूट

64 चतुर्वेदी सत्येन्द्रनाथ एवं मिश्र मधुसूदन : आर्थिक एवं सामाजिक शोध तथा साँख्यिकी विजय प्रकाशन मंदिर, वाराणसी

65 दुबे आर.एन. एवं सिन्हा वी.सी. : आर्थिक विकास एवं नियोजन, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली

66 'खंगार' भागवत प्रसाद : कोल इतिहास की गौरव गाथा अ.भा.स.से.सं. चित्रकूट

Reports

1 World Development Report, Oxford University 1987

2 Report of the commissioner for Sc/St 28th Repord, New Delhi 1986-87

3 Report of the study team on over dues of cooperative credit societies, RBI, 1974

4 डोगरा, भारत : पाठा, सूखे खेत प्यासे दिल, (समाज के कमजोर तबके को संसाधनों से वंचित रखने व उनके शोषण पर एक रिपोर्ट पाठा क्षेत्र के सन्दर्भ में), 1991

5 सिंह, हजारी पंकज : धरती का दर्द, रिपोर्ट अखिल भारतीय समाज सेवा संस्थान, मानिकपुर 1993

6 डोगरा, भारत : बंधुआ मजदूरी की जंजीरें तोड़ने का एक प्रयास – एक रिपोर्ट, 1992

7 उत्तर प्रदेश वार्षिकी : सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उ.प्र.लखनऊ

वर्ष 2004-05 : पूर्वोक्त

वर्ष 2005-06 : पूर्वोक्त

8 सांख्यकीय पत्रिका : जनपद चित्रकूट, अर्थ एवं संख्याधिकारी

वर्ष 2004-05 : पूर्वोक्त

वर्ष 2005-06 : पूर्वोक्त

9 जनगणना पुस्तिका : खण्ड I, II, III, IV

वर्ष 2001 : पूर्वोक्त

10 मोहिनी गिरि : आदिवासी महिलाओं का उत्पीड़न देश के लिए शर्मनाक-राष्ट्रीय सहारा, लखनऊ, 28 मई 1997

11 ''पंचायतों को अधिकार देने में दो विभागों ने एतराज जताया'' अमर उजाला, 30 मई 1997

12 ''गाँव अब भी संभावनाएं हैं'' अमर उजाला 7 जून 1997

13 '' 1997-98 शिक्षा वर्ष के रूप में मनाने का संकल्प लक्ष्य प्राप्ति हेतु ग्राम शिक्षा समितियों की सक्रिय भूमिका जरूरी'' दैनिक जागरण, कानपुर 9 जून 1997

14 ''प्रदेश में ग्राम पंचायतों को अधिकार के नाम पर झुनझुना'' अमर उजाला 9 जून 1997

15 भट्ट राधा (सम्पादक) : Man and Himalaye, Himalya Seva Sangh, New Delhi, March 1998

16 भट्ट राधा (सम्पादक) : June 1998

17 डोगरा भारत : आतंक के साये में आशा, अ.भा.स.से.सं. पर एक रिपोर्ट

18 डोगरा भारत : फाइटिंग टरेर, प्रोटेक्टिंग डिग्निटी ए.बी.एस.एस.एस. गिज कोल ट्राइबल न्यू होप

19 डोगरा, भारत : नेचुरल रिसोर्सेज बेस्ड प्लानिंग फार पावर्टी एलिविएशन विद स्पेशल एम्फैसिस आन दि शेल आफ वमेन, अ.भा.स.से.सं. पर एक रिपोर्ट
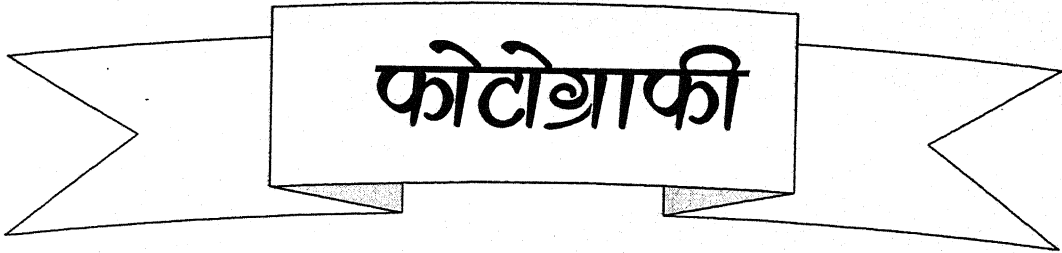
पत्र - पत्रिकाएँ

1 डा.मैल्कम, एस.आदिशेषैया : भारतीय अर्थव्यवस्था के चालीस वर्ष, पाक्षिक योजना, 1987

2 यूनाइटेड नेशन्स इण्टरनेशनल साशेल डेवलपमेण्ट रिव्यू. 1984

3 देवेन्द्र बाबू एम. : टैक लिंग रूरल पावर्टी योजना 1986

4 जोगी, अजीत : आदिवासी-अनुसूचित जाति कल्याण कार्यक्रमों की समीक्षा के लिए गठित समिति का प्रतिवेदन

मध्य प्रदेश शासन, भोपाल, 1988

5 पालीवाल, चन्द्रमोहन : आदिवासी-हरिजन आर्थिक विकास बस्तर जिले के सन्दर्भ में, नार्दन बुक सेण्टर, नई दिल्ली 1986

6 हसन अमीर : स्मारिका : उ.प्र. के जनजातीय लोग, 1969

7 **Hasan Amir** : Meet the tribles of U.P.Social Welfare, New Delhi, October 1968

8 **Hasan Amir** : A study of Education Among the Kols of U.P. Eastern Anthropologist, Lucknow April, 1968

Occupational Pattern of Kols of U.P. Khadigramudyog, Bombay August 1967

A Socio-Economic : Study of Banda Kolins, Social Welfare New Delhi, April 1967

9 गौतम, अवधेश : अथाई, मासिक पत्रिका जुलाई 1997, पंचायत सन्दर्भ केन्द्र बाँदा

अप्रकाशित सामग्री

1 पाण्डेय मनोहर राम : जनजातीय विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धियों एवं आकांक्षाओं के सामाजिक पक्ष,शोध प्रबन्ध, काशी विद्यापीठ 1981

2 सिंह, रामबली : भूमिहीनों में वर्ग जागरूकता तथा संघर्षात्मक एवं राजनीतिक सहभागिता, शोध प्रबन्ध, काशी विद्यापीठ 1989

3 नाग, जसवन्त : पाठा के कोलों में राजनीतिक चेतना एवं सहभागिता, शोध प्रबन्ध, काशी विद्यापीठ, 1988

4 सिंह, इन्द्रपाल : पाठा के बन्धुआ कोल, लघु शोध प्रबन्ध, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी

5 रजक, शालिग राम : बुन्देलखण्ड प्रदेश : परिवहन का समाजार्थिक प्रभाव, शोध प्रबन्ध, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर, 1989

6 नाग, सुधा : ग्रामीण हरिजन महिलाओं में राजनीतिक चेतना, 1989, काशी विद्यापीठ

7 नाग, सुधा : आदिवासी कोल महिलाएं 1998 म.गांधी वि.पी. वाराणसी

8 डा0 स्वामी प्रसाद : कोल जनजाति के विकास के अवरोध कारक (पाठा क्षेत्र के विशेष संदर्भ में)

फोटोग्राफी

दुकानदारी करती
कोल महिला ▶

बिक्री के लिये घास ले
▼ जाती कोल महिला

अमरेठी तैयार करती ▶
कोल महिला
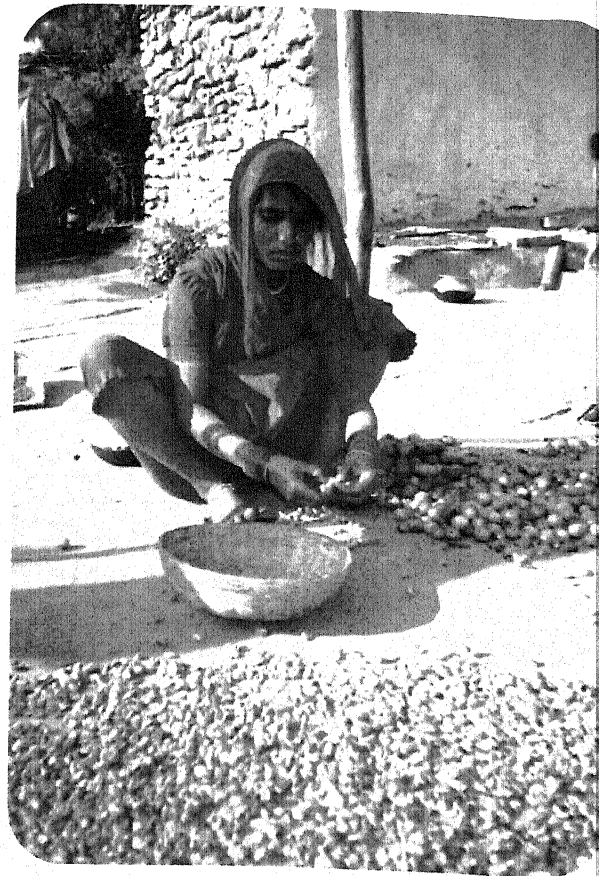
ठेकेदार के अधीन पत्थर तोड़ती कोल महिला
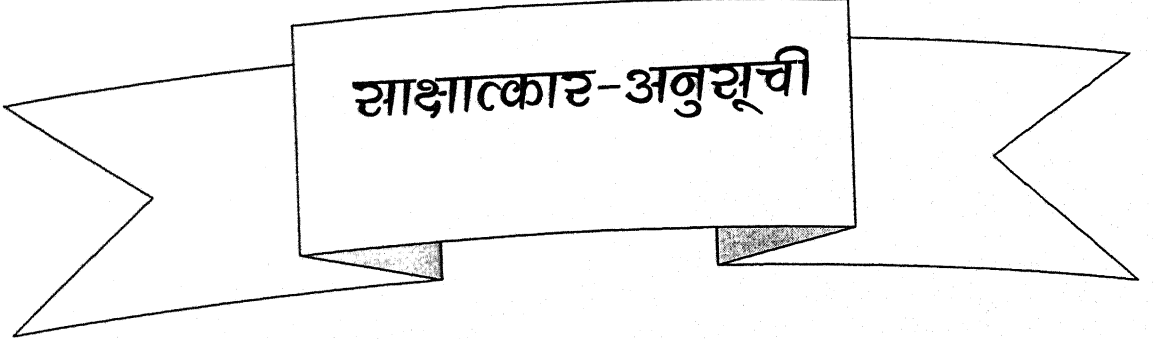
खेत में घास काटती कोल युवती

बिक्री के लिये समीपस्थ बाजार में ट्रेन से लकड़ी ले जाती कोल महिलाएं

साक्षात्कार-अनुसूची

गोपनीय

आदिवासियों की आर्थिक संरचना में महिलाओं की सहभागिता का अध्ययन
(पाठा क्षेत्र के कोल आदिवासियों के विशेष संदर्भ में)

शोध निर्देशक
डॉ0 किशन कुमार
रीडर

राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
हमीरपुर (उ.प्र.)

शोधार्थी
रामनाथ
प्रवक्ता–अर्थशास्त्र
राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, हमीरपुर(उ.प्र.)

1 वैयक्तिक पृष्ठभूमि

1.1 नाम..........................1.2 आयु......................1.3 जाति/ जनजाति.......

1.4 धर्म..........................1.5 लिंग......................स्त्री/ पुरूष...............

1.6 वैवाहिक स्थिति
- A अविवाहित
- B विवाहित
- C विधवा
- D तलाकशुदा/ परित्यक्त

2. पारिवारिक पृष्ठभूमि

2.1 आप किस गाँव में रहती हैं ? ....

2.2 आपके परिवार की प्रकृति कैसी है ?
- A मातृ सत्तात्मक
- B पितृ सत्तात्मक

2.3 यदि आप विवाहित है तो आपके कितने बच्चे हैं?
- A पुत्र
- B पुत्री

2.4 क्या आपके बच्चे पढ़ने जाते हैं ? ....हॉ /नहीं

2.5 यदि हॉ, तो कितने बच्चे पढ़ने जाते हैं ? ....

2.6 यदि नहीं तो क्यों ?
- A. पढ़ाई के लिए पैसे नहीं है ।
- B. बच्चों का मन नहीं लगता है ।
- C. स्कूल की सुविधा नहीं है ।

D. फीस ज्यादा है ।

E. बच्चे काम करते हैं ।

2.7 आपके परिवार में कुल कितने सदस्य हैं ?

A. स्त्री ....

B. पुरूष ....

2.8 आपके पति क्या करते हैं ?

A. नौकरी

B. मजदूरी

C. कृषि कार्य

D. स्वयं का व्यवसाय

E. कुछ नहीं

2.9 आपके पति प्रतिमाह कितना कमा लेते हैं ?

A 500 तक

B 500-1000

C. 1000-1500

D. 1500-2000

E. 2000-2500

F. 2500-3000

G. 3000-3500

H. 3500 से ऊपर

3 व्यावसायिक पृष्ठभूमि और आर्थिक संलग्नता

3.1 आप आय के लिए कोई काम करती हैं ? ....हॉ /नहीं

3.2 यदि हॉ, तो आप किस प्रकार का काम करती हैं ?

A. मजदूरी

B. लकड़ी बेचना

C. आँवला बेचना

D. खेतिहर मजदूरी

E. दूकानदारी

F. तेंदू पत्ता तोड़ना

3.3 आप दिन में कितने घण्टे काम करती हैं ? ....घण्टे

3.4 आपके पति कितने घण्टे काम करते हैं ? ....घण्टे

3.5 आप क्या पति से ज्यादा काम करती हैं ? ....हॉं /नहीं

3.6 यदि हॉं, तो ऐसा क्यों ?

A. उन्हें काम नहीं मिलता ।

B. वे काम नहीं करना चाहते ।

C. वे कमजोर हैं (शारीरिक रूप से)

3.7 आप प्रतिमाह कितना कमा लेती हैं ?

A. 500 तक

B. 500-1000

C. 1000-1500

D. 1500-2000

E. 2000-2500

F. 2500-3000

G. 3000-3500

H. 3500 से ऊपर

3.8 आपके काम करने का स्थान कहॉं होता है

A. जंगल में

B. ठेकेदार के यहां

C. पास के बाजार में

D. खेतों में

E. घर में

3.9 क्या आपके काम पर जाने का समय निश्चित है ? ....हॉं/ नहीं

3.10 यदि हॉं, तो आप किस समय काम पर जाती है ? ....बजे

3.11 आप काम से किस समय वापस लौटती हैं ? ....बजे

3.12 क्या आपके पास आपके खेत हैं ? ....हॉं/ नहीं

3.13 यदि हॉं तो खेत कहॉं से मिलें ?

A. पूर्वजों से

B. सरकार से

C. स्वयं खरीदें

3.14 क्या खेती से प्राप्त उपज आपके लिए पर्याप्त हो जाती है ....हॉं/ नहीं

3.15 यदि नहीं, तो क्यों ?

A. खेत कृषि योग्य नहीं है ।

B. सिंचाई के साधनों की कमी है।

C. दादू लोग उपज ले जाते हैं ।

4. आदिवासी कोल महिलाओं की व्यावसायिक समस्याएं

4.1 आप जिस व्यवसायिक कार्य को करती हैं क्या उससे सन्तुष्ट हैं ? ....हाँ /नहीं

4.2 यदि नहीं तो क्यों ?

A. पर्याप्त आय नहीं होती ।

B. काम की तुलना में कम आय ।

C. काम की अनुपलब्धता ।

D. काम के कारण बच्चों की ठीक परवरिस न होना।

E. शारीरिक,मानसिक शोषण होना ।

4.3 जंगल से जिन वस्तुओं को आप इकट्ठा करती है उन्हें कहाँ बेचने ले जाती हैं ?

A. गांव के ही ठेकेदार के पास

B. संस्थान में

C. पास के बाजार में

D. वन विभाग के क्रय केन्द्रों में

4.4 यदि बाजार जाती हैं तो कैसे ?

A. पैदल

B. बस से

C. रेल से

D. बैलगाड़ी से

4.5 क्या रेल में यात्रा करने में टिकट लेती हैं ? ....हॉ/ नहीं

4.6 यदि नहीं तो रेल के अधिकारी से कैसे बच पाती हैं ?

A. कुछ सामान देकर

B. उनसे बातचीत करके

C. चालाकी से

4.7 क्या रेल के कर्मचारी /अधिकारी टिकट न होने पर जो सामान आप बेचने जा रही हैं उसे छीन लेते हैं ....हाँ/ नहीं

4.8 यदि हाँ, तो ऐसा कब-कब होता हैं ?

A. कभी-कभी

B. सप्ताह में एक बार

C. महीने में एक बार

D. प्रायः

4.9 तो क्या इसकी शिकायत आप किसी से करती हैं ? ....हाँ/ नहीं

4.10 यदि नहीं तो क्यों ?

A. हमारी गलती होती है ।

B. कोई लाभ नहीं होता ।

C. और अधिक परेशान करते हैं ।

4.11 आप जिन उत्पादों को बाजार में बेचने जाती हैं उनकी नाप-तौल ठीक से की जाती है ? ....हाँ/ नहीं

4.12 यदि हाँ, तो कैसे ?

A. अनुमान से

B. किसी बर्तन से नापकर

C. तराजू से तौलकर

4.13 आप जिस सामान को बेचती हैं उसकी कीमत तुरन्त मिल जाती है ? ....हाँ/ नहीं

4.14 यदि आप ठेकेदार के अधीन काम करती हैं तो क्या समय से मजदूरी मिल जाती है ? ....हाँ/ नहीं

4.15 क्या ठेकेदार पूरा भुगतान करते हैं ? ....हाँ/ नहीं

4.16 यदि नहीं, तो क्या ऐसा अक्सर होता है ?

A. कभी-कभी

B. प्रायः

C. पूरा भुगतान कभी नहीं करते

4.17 यदि आप काम पर जाती है तो इससे आपके पति का व्यवहार आपके साथ कैसा रहता है ?

A. सामान्य

B. मधुर

C. तनावपूर्ण

4.18 आप अपनी आमदनी को कहाँ खर्च करती हैं ?

A. घरेलू खर्च में

B. अपने निजी खर्च में

C. बच्चों की पढ़ाई में

4.19 क्या आपकी आमदनी से आपके पति भी कुछ मांगते हैं? ....हाँ/ नहीं

4.20 यदि हाँ तो आप क्या करती हैं ?

A. दे देते हैं
B. नहीं देते
C. कभी-कभी देते हैं

4.21 क्या आपके पति को कोई बुरी आदत है ? ....हाँ/ नहीं

4.22 यदि हाँ, तो क्या-क्या ?

A. शराब पीने की
B. भांग /गांजा पीने की
C. गुटका, पान खाने की
D. अफीम चरस स्मैक की
E. जुआं खेलने की
F. दूसरों पर पैसा खर्च करने की

4.23 क्या आप कोई नशा करती हैं ? ....हाँ/ नहीं

4.24 यदि हाँ, तो क्या-क्या ?

A. शराब
B. पान गुटका
C. बीड़ी
D. अफीम चरस स्मैक
E. कोई अन्य

4.25 जंगलात से जब आप लकड़ी लेने आँवला बीनने या तेंदू पत्ता तोड़ने जाती हैं, तो क्या वन विभाग के कर्मचारी ऐसा आसानी से करने देते हैं ? ....हाँ/ नहीं

4.26 यदि नहीं, तो आप इन्हें कैसे राजी करती हैं ?

A. उनकी सेवा करके
B. उनसे प्रार्थना करके
C. उन्हें चकमा देकर
D. उनकी मांग पूरी करके

4.27 ऐसी स्थिति में क्या वे आपकी मजबूरी का फायदा उठाते हैं ? ....हॉ /नहीं

4.28 जिस ठेकेदार के अधीन आप कार्य करती हैं उससे आप संन्तुष्ट हैं ? ....हॉ /नहीं

4.29 यदि नहीं, तो क्यों ?

A. वे मानसिक शोषण करते हैं ।
B. वे शारीरिक शोषण करते हैं ।
C. वे आर्थिक शोषण करते हैं ।
D. उनकी मांग पूरी न करने पर काम से हटा देते हैं।

5. रोजगारोन्मुख योजनाएं और कोल आदिवासी महिलाएं

5.1 क्या आप बैंको से प्राप्त होने वाली सुविधाओं से परिचित हैं ? ....हॉ /नहीं

5.2 यदि हाँ, तो किन-किन ?

A. बैंको से ब्याज पर पैसा मिलता है
B. बैंक में पैसा जमा किया जाता है
C. बैंक में पैसा सुरक्षित रहता है

5.3 क्या आप कभी बैंक गयी हैं ? ....हॉ /नहीं

5.4 क्या सरकार द्वारा महिलाओं को दी जाने वाली सुविधाओं से परिचित हैं ? ....हॉ /नहीं

5.5 यदि हाँ, तो किन-किन

A. वृद्धावस्था पेंशन
B. विधवा पेंशन
C. रोजगार गारण्टी योजना
D. महिला समृद्धि योजना
E. 'आशा' योजना

5.6 क्या विकास खण्ड कार्यालय के कर्मचारी आपको योजनाओं के बारे में बताते हैं ?

A. कभी-कभी
B. प्रतिमाह
C. वर्ष में एक बार
D. कभी नहीं

5.7 क्या आपने इन योजनाओं का लाभ प्राप्त किया है ? ....हॉ /नहीं

5.8 आपके क्षेत्र में क्या कोई स्वयं सेवी संस्था काम कर रही हैं ? ....हॉं /नहीं

5.9 यदि हाँ तो कौन-कौन ?

A. पाठा कोल विकास मंच

B. महिला समाख्या

C. अखिल भारतीय समाज सेवा संस्थान

D. आदिवासी विकास संस्थान

5.10 क्या आँगनवाडी आपके क्षेत्र में आती है ? ....हॉं /नहीं

5.11 यदि हाँ, तो क्या आपने उनसे लाभ प्राप्त किया है ....हॉं /नहीं

5.12 क्या आप मानती हैं कि बच्चों को उचित शिक्षा मिलनी चाहिए ? ....हॉं /नहीं

5.13 क्या आप मानती है कि लड़के और लड़की में कोई अन्तर होना चाहिए ? ....हॉं /नहीं